CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डा. भीमसेन निर्मल

तेलुगु साहित्य परिमल

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति, हैदराबाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आदरणीय विनयकुमार जी अवस्थी
सादर भेंट

Recd.
20/10/81

शि० २३६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु साहित्य परिमल

लेखक

डा. भीमसेन निर्मल

प्रकाशक

(अभिनंदन समिति के लिए)

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति

1-1-405/7/1, गाँधीनगर, हैदराबाद 500 380.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु साहित्य परिमल

© डा. भीमसेन निर्मल
गान्धीनगर, हैदराबाद-500 380.

सम्पादक : डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै
संयोजक, सम्पादक-मंडल

प्रकाशक : दक्षिणांचलीय साहित्य समिति
1-1-405/7/1, गांधीनगर, हैदराबाद—500 380.

मुद्रक :
कामता प्रसाद
किरण प्रिन्टर्स
5-2-674, रिसाला अब्दुल्ला (नया उस्मानगंज)
विजय भवन के समीप, हैदराबाद—500 195.

मूल्य : 130/-

प्रथम संस्करण 1991

TELUGU SAHITYA PARIMAL
by DR. BHIMSEN NIRMAL

Published by :
Dakshinanchaliya Sahitya Samiti
1-1-405/7/1, Gandhinagar,
Hyderabad-500 380.

First Edition : 1991 Price Rs. 130/-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संपादकीय

उत्तर-दक्षिण के बीच सेतु-बंधन के प्रतीक डा. भीमसेन निर्मल एक सफल लेखक, मेधावी अध्यापक, कर्मठ कार्यकर्त्ता एवं सहृदय मानव के रूप में हिन्दी-प्रेमियों, विद्यार्थियों तथा हिन्दीसेवी संस्थाओं के आदर पात्र हैं। डा. निर्मल ने उस्मानिया विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक, प्रवक्ता तथा आचार्य एवं अध्यक्ष के पदों पर इकतीस वर्ष तक कार्यभार संभालने के उपरांत नवंबर 1990 को अवकाश ग्रहण किया है। निजी अनुसंधान, शोध छात्रों के लिए निर्देशन तथा साहित्यिक कार्य सभी में उत्तर-दक्षिण के बीच सेतूकरण ही उनका आदर्श है। अठारहवीं-उन्नीसवीं शती में आंध्र के मछली-पट्टणम में वर्तमान पं. पुरुषोत्तम कवि के हिन्दुस्तानी नाटकों पर अनुसंधान करके उन्होंने 1964 में उस्मानिया विश्वविद्यालय से पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की। हिन्दी जगत के लिए बिलकुल अज्ञात पुरुषोत्तम कवि को हिन्दी जगत में उजागर करने तथा हिन्दी नाटकों की शृंखला में एक नयी कड़ी जोड़ने का पूरा श्रेय डा. भीमसेन निर्मल को प्राप्त होता है। डा. निर्मल की शोध परक प्रत्युत्पन्नमति का यहीं अन्त नहीं हुआ। वे अपने अनुसंधान कार्य में बराबर तत्पर रहे जिसके फलस्वरूप नेल्लूर की वेंकटगिरि रियासत में धूल-धूसरित पड़ी एक पाण्डुलिपि 'व्रज चौरासी कोस यात्रा वर्णनम्' का वहाँ से उद्धार किया। इस पाण्डुलिपि की यह विशेषता रही कि इसकी भाषा व्रज है, पर लिपि तेलुगु की है। तेलुगु लिपि में किन्तु अपरिचित भाषा में रचित वह ग्रंथ आंध्रवासियों द्वारा चिरकाल से उपेक्षित ही रहा। उसे प्रकाश में लाने का श्लाघनीय कार्य डा. निर्मल ने किया। 1850 के आसपास एक तेलुगु भाषी हिन्दी-प्रेमी शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री ने मंडा नरहरि शास्त्री के साथ रामचरित मानस का मूल दोहा-चौपाई छन्द में तेलुगु काव्यानुवाद प्रस्तुत किया, जिसके संबंध में तेलुगु भाषी जनता का ध्यान नहीं गया था। डा. निर्मल ने उस ग्रंथ का उद्धार कर उसे जन समक्ष प्रस्तुत किया।

उत्तर-दक्षिण के बीच सेतु-बंधन के पुनीत आदर्श से प्रेरित डा. भीमसेन निर्मल के कई तुलनात्मक लेख हिन्दी पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं, जिनमें हिन्दी तथा तेलुगु की साहित्यिक विधाओं, ग्रंथों, लेखकों, प्रवृत्तियों की तुलनात्मक समीक्षाएँ सम्मिलित हैं। भारत की भावात्मक एकता का दिग्दर्शन ही उनके इन लेखों का प्रेरणा-स्रोत रहा है। एक सुयोग्य एवं समर्पित शोध निर्देशक के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रूप में डा. निर्मल का योगदान अविस्मरणीय है। हिन्दी तथा तेलुगु की वर्तमान साहित्यिक विधाओं में उनका गहन अध्ययन है। हिन्दी तथा तेलुगु के अमूल्य ग्रंथ-रत्नों को अनुवाद द्वारा इतर भाषा-भाषियों के लिए सुलभ बनाने का उन्होंने प्रयत्न किया है। उनकी अनूदित एवं प्रकाशित कहानियों की संख्या 200 के ऊपर है। नदी सुंदरी, दीक्षितुलु, रंगनाथ रामायण, पोतना कृत तेलुगु भागवतमु, विश्वंभरा, घाट के देवता, मानव में मानव आदि उनके तेलुगु से अनूदित ग्रंथों में विशेष उल्लेखनीय हैं। नागरी लिप्यन्तरण सहित रंगनाथ रामायण का हिन्दी अनुवाद भुवनवाणी ट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित हुआ। डा. सी. नारायण रेड्डी कृत 'विश्वंभरा' का, जिसपर उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ, तेलुगु के आधुनिक महाकाव्यों में विशिष्ट स्थान है। कल्पना के धनी डा. सी. नारायण रेड्डी के इस चिन्तन-प्रधान काव्य का सफल काव्यानुवाद डा. निर्मल के अथक प्रयास का द्योतक है। श्री वेल्दंड माणिक्य राव कृत 'हैदराबाद स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास' का हिन्दी अनुवाद डा. निर्मल ने ही प्रस्तुत किया था, जो पुरस्कृत भी हुआ था। डा. निर्मल के संपादकत्व में नारायण रेड्डी की कविताओं के अनुवाद का एक संकलन 'कविता मेरी सांस' के शीर्षक से भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुआ है।

जहाँ तेलुगु के साहित्य को हिन्दी में लाने की उत्सुकता परिदर्शित होती है, वहाँ हिन्दी के महान ग्रंथों को तेलुगु भाषियों में प्रचलित करने की ओर डा. निर्मल की निष्ठा रही है। आचार्य नगेन्द्र का 'रस-सिद्धान्त' हिन्दी का अनुपम ग्रंथ है और प्रोफेसर नगेन्द्र की चिन्तन धारा से तेलुगु वाङ्मय को प्रभावित करने के महान् संकल्प से प्रेरित हो, उन्होंने उसका तेलुगु अनुवाद प्रस्तुत किया जो तेलुगु अकादमी द्वारा प्रकाशित हुआ। वैसे ही श्री विष्णु प्रभाकर की गाँधी जी पर कृति 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है' का भी उन्होंने तेलुगु अनुवाद प्रस्तुत किया। अब भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ के लिए वे तुलसी के रामचरित मानस का तेलुगु लिप्यन्तरण एवं अनुवाद करने में संलग्न हैं। कई मानक ग्रंथों के सहयोगी लेखक के रूप में भी डा. निर्मल का योगदान प्रशंसनीय रहा। भारतीय साहित्य कोश, हिन्दी साहित्य का इतिहास (अंतर भारती), तेलुगु विश्वकोश, भाषा विशेषांक आदि कितने ही ग्रंथों, प्रकाशनों को डा. निर्मल का सहयोग प्राप्त होता आ रहा है।

डा. भीमसेन निर्मल देश की कई संस्थाओं से संबद्ध हैं। भारत सरकार के ऊर्जा मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति, हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति और कार्यसमिति, आंध्र प्रदेश हिन्दी अकादमी के प्रवंधक मंडल एवं कार्य-कारिणी समिति के मनोनीत सदस्य की हैसियत से हिन्दी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाषा एवं साहित्य को सेवाएँ अर्पित की हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद हिन्दी प्रचार सभा, दक्षिण भारत हिन्दी प्रतिष्ठान आदि संस्थाओं से उनका संबंध कई वर्षों का है। डा. निर्मल अपनी साहित्य-सेवा के लिए केन्द्र तथा प्रादेशिक सरकारों एवं स्वायत्त संस्थाओं द्वारा कई बार पुरस्कृत हुए हैं।

डा. भीमसेन निर्मल अपने आप में एक संस्था हैं। दक्षिण के हिन्दी साहित्यकारों में उनका अन्यतम स्थान है। अतः निर्मल जी के विद्यार्थियों, मित्रों तथा हिन्दी प्रेमियों ने उनके अभिनंदन का कार्यक्रम बनाया और अभिनंदन समिति ने एक अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने का निर्णय लिया। उसके लिए एक संपादक-मंडल बनाया गया। संपादक-मंडल ने यह निर्णय लिया कि डा. निर्मल के तेलुगु साहित्य पर लिखे गये स्फुट समीक्षात्मक लेखों का इस ढंग से चयन कर उनका पुस्तक रूप में प्रकाशन किया जाए कि तेलुगु के आदिकालीन लोकगीतों से लेकर वर्द्धमान आधुनिक तेलुगु की विविध विधाओं का समग्र, किन्तु संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत हो। इस आशय से लेखों को साहित्य खंड और कृतिखंड इन दो श्रेणियों में संकलित किया गया है और प्रत्येक खंड के अन्तर्गत सात लेख समाहित किये गये हैं। ये सारे लेख इसके पूर्व पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।

इस अभिनंदन ग्रंथ के प्रकाशन में डा. भीमसेन निर्मल के शिष्य डा. प्रसाद का सब से अधिक सहयोग रहा। सम्पादक-मंडल उनका अत्यन्त आभारी है।

इस ग्रंथ को सुन्दर साज-सज्जा के साथ मुद्रित एवं प्रकाशित करने में किरण प्रिन्टर्स के स्वत्वाधिकारी मित्रवर श्री कामता प्रसाद का सक्रिय हाथ रहा। सम्पादक-मंडल उनका विशेष आभारी है।

इस पुस्तक के प्रकाशन में डा. निर्मल के कई शिष्यों, मित्रों का सहयोग प्राप्त होता रहा। उन सब के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना हम अपना परम कर्तव्य समझते हैं।

—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै
संयोजक, संपादक-मंडल।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आशीर्वाद

आचार्य नगेन्द्र

134, वैशाली.
(पीतमपुरा)
दिल्ली—110034

'तेलुगु साहित्य परिमल' में तेलुगु साहित्य की विभिन्न विधाओं और कुछ विशिष्ट कृतियों पर परिचयात्मक लेख संकलित हैं।

डा. भीमसेन निर्मल तेलुगु तथा हिन्दी साहित्य के अधिकारी विद्वान् हैं—अतः इन लेखों की प्रामाणिकता असंदिग्ध है।

मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक आन्तर भारती के अध्येता हिन्दी पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

(ह. नगेंद्र)

दिनांक 6-7-1991

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुशंसा

'तेलुगु साहित्य परिमल' आद्यन्त देख गया। डॉ. भीमसेन निर्मल ने इस वाटिका के माध्यम से जिस मधु-सौरभ का वितरण किया है उसकी माधुरी अनुपम है। महाभारत के भीमसेन वायुपुत्र थे। वायु का काम मधु गन्ध प्रसारित करना है। पांच वर्ष के हजार गुने अतीत में पवनपुत्र भीमसेन ने अपने बल-पौरुष की सुरभि को विश्वव्यापी गौरव प्रदान किया था; साथ ही साथ भोजन की मधु-सुरभि भी उन्होंने विश्व-व्यापिनी बनायी थी। आज के भीमसेन ने अपने 'तेलुगु साहित्य परिमल' के माध्यम से तेलुगु साहित्य के सौरभ को विश्वव्यापी बनाया है।

'तेलुगु-साहित्य-परिमल' के दो खण्ड हैं—साहित्य-खण्ड और कृति-खण्ड। दोनों खण्डों में सात-सात सुरभियाँ हैं। साहित्य खण्ड में (1) तेलुगु का लोकगीत साहित्य (2) तेलुगु भाषा और उसका साहित्य (3) स्वातन्त्र्योत्तर तेलुगु साहित्य (4) तेलुगु का नाटक साहित्य (5) तेलुगु का कथा साहित्य (6) तेलुगु साहित्य में हास्य एवं (7) तेलुगु कविता में राष्ट्रीय चेतना लेख सात प्रकार के सौरभों से सुरभित हैं।

कृति-खण्ड में (1) नवनाथ चरित्र : एक परिचय (2) मोल्ल रामायणमु : एक परिचय (3) पिंगलि सूरन्नाकृत कला पूर्णोदयमु (4) मालपल्लि (5) श्रीकृष्ण तुलाभारमु (6) विश्वनाथ मध्याक्करलु (7) कविकर्ण रसायनमु सात प्रकार के सुगन्धों से सुगन्धित हैं।

25 पृष्ठों में तेलुगु के लोक-गीत साहित्य-सौरभ को प्रसारित करके अन्त में लेखक कहता है—"तेलुगु के लोक-साहित्य के अनन्त सागर में यह एक बूंद के समान है।" इसी से पता चलता है कि तेलुगु के लोकगीत-साहित्य-सौरभ का महासागर अनन्त है।

38 पृष्ठों में लेखक में तेलुगु भाषा और उसके साहित्य के अकथनीय सौरभ का दान विश्व को दिया है।

'स्वातन्त्र्योत्तर तेलुगु साहित्य' लेख 12 पृष्ठों में साहित्य के परिमल को बाँधे हुए है। युव भारती द्वारा प्रकाशित 'महती' शीर्षक पुस्तक से सौरभ लेकर लेखक ने अपने इस लेख को सुवासित किया है एवं 'युव भारती' के प्रति आभार-सुरभि अर्पित की है। स्वातन्त्र्योत्तर युग की सभी साहित्यिक प्रवृत्तियों की सुगन्ध इस लेख से प्राप्त होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'तेलुगु का नाटक-साहित्य' शीर्षक लेख का परिमल सात पृष्ठों में सुवासित किया गया है। तेलुगु के नाटक-साहित्य का सौरभ काफी बाद में प्रस्फुटित हुआ। इसका लेखक को खेद है। पर बाद की सौरभ-परिव्याप्ति से लेखक सन्तुष्ट है। वह कहता है–"प्रतिभावान लेखकों के रचना-वैशिष्ट्य के कारण, भारतीय नाटक-साहित्य के क्षेत्र में तेलुगु का नाटक-साहित्य विशिष्ट स्थान रखता है।"

'तेलुगु का कथा-साहित्य' लेख, पांच पृष्ठों में सुरभित हुआ है। गुरजाडा अप्पाराव जी को लेखक ने तेलुगु-कहानी-क्षेत्र में युग-पुरुष माना है। उसके अनुसार गुरजाडा अप्पाराव जी की कला-क्षमता ने ही इस क्षेत्र में प्रथम सौरभ को जन्म दिया। बाद के कथा-शिल्पियों को भी लेखक ने पर्याप्त संम्मान प्रदान किया है। उसने कहा है–

"तेलुगु का कथा-साहित्य भारतीय साहित्य में उत्कृष्ट स्थान का अधिकारी बना हुआ है। वस्तु-संविधान और शिल्प की उत्तमता को लेकर आशा है भविष्य में तेलुगु के कथाकार भारतीय कथा-साहित्य को और भी सुसम्पन्न बनायेंगे।" अतः तेलुगु कथा-साहित्य के विविध एवं बहुमुखी सौरभ की अभिव्याप्ति का सुन्दर आस्वाद लेखक ने इस लेख में प्रदान किया है।

'तेलुगु साहित्य में हास्य' शीर्षक लेख इस पुस्तक की छठी सुरभि है। यह दस पृष्ठों में प्रसारित है। तेलुगु साहित्य में व्याप्त हास्य का सौरभ इस लेख में गौरवमय स्थान पा सका है। लेख के अन्त में लेखक ने अपनी सम्मति इस प्रकार दी है–"स्पष्ट है कि तेलुगु की सभी-साहित्य-विधाओं में हास्य का समुचित निर्वाह किया गया है। अधिकतर रचनाओं में केवल विशुद्ध हास्य की अपेक्षा ध्वनि-प्रधान व्यंग्य की प्रधानता स्पष्ट परिलक्षित होती है।

साहित्य खण्ड की सातवीं सुरभि 'तेलुगु कविता में राष्ट्रीय चेतना' शीर्षक लेख में आबद्ध है। इस खण्ड की यही अन्तिम सुरभि है। किसी भी देश की उच्च राष्ट्रीय चेतना, उस देश के शील की सुगन्ध होती है। यह परिमल 24 पृष्ठों को सुवासित कर रहा है। गान्धीजी की प्रेरणा से आन्ध्र के जितने साहित्यकारों के हृदय सुगन्धित हुए थे उन सबके प्रति इस लेख में सुमनाञ्जलि अर्पित की गयी है। लेख के अन्त में लेखक ने जो सौरभ विकिरित किया है उसकी सुगन्ध की अनुभूति की प्रकृति देखिए–"स्पष्ट है कि आन्ध्र के कवियों ने अपनी-अपनी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना को उभाड़ने वाली भावनाओं को अभिव्यक्त कर समग्र देश की एकात्मकता को बल पहुँचाने का सराहनीय प्रयास किया है।"

कृति खण्ड का पहला लेख 'नवनाथ चरित्र' है। इसके रचनाकार गौरन कवि पन्द्रहवीं शताब्दी में अपना कविता-सौरभ प्रसारित कर रहे थे। 8 पृष्ठों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में निबद्ध इस लेख में कहा गया है कि कवि द्वारा प्रणीत मत्स्येन्द्रनाथ और गोरखनाथ के 84 शिष्यों की गुरुता का दिव्य सौरभ पाँच नवनाथ-चरित्र के सर्गों में फैला हुआ है।

'मोल्ल रामायणमु : एक परिचय' इस कृति-खण्ड का दूसरा लेख है। चौदहवीं शताब्दी के अन्त और पन्द्रहवीं के आरम्भ में मोल्ल कुम्हारिन ने अपने रामायण की सुगन्ध प्रसारिस की। दस पृष्ठों के लेख में मोल्ल-रामायण का परिमल आबद्ध किया गया है। लेखक ने लेख के अन्त में कहा है—"मोल्ल ने यह सिद्ध किया कि शूद्र-वनिता भी ऐसी उत्तम काव्य-रचना कर सकती है, जिसे पंडित और पामर एक समान समादृत करें।"

'पिंगल सूरन्न कृत कला पूर्णोदयमु कृति खण्ड की तीसरी सुरभि है। इस काव्य में आठ आश्वास हैं। अद्भुत कल्पना से सज्जित यह प्रतीकात्मक काव्य प्रतीक के बन्धन को तोड़कर जीवन के सत्य का रूप भी धारण कर लेता है। अभिनव कौमुदी और शल्यासुर, सुंगात्री और शालीन, सरस्वती और चतुर्मुख, कलभाषिणी और मणिकंधर तथा मधुरलालसा और कलापूण—इन पाँच अद्भुत् लालित्य से सम्पन्न दम्पतियों को आधार बना कर कथा का परम स्मरणीय पट बुना गया है। तेरह पृष्ठों में यह लेख आयोजित है। शृंगार के अत्यन्त कोमल परिमल से इस कृति का शृंगार किया गया है। इस निबन्ध के लेखक ने कहा है—"तेलुगु के प्रबन्ध काव्यों में कथा-कथन-कौशल, वर्णन-विधान, संवाद-चातुरी, भावपक्ष और कलापक्ष का सुरुचिर निर्वाह आदि कारणों से 'कलापूर्णोदय' का स्थान अद्वितीय है। सोलहवीं शताब्दी में आधुनिक उपन्यास के समान कुतूहल-वर्धक कल्पना-प्रधान काव्य की रचना करने वाले सूरन्न की प्रतिभा अनुपम है।

उन्नव लक्ष्मीनारायण पन्तुलु कृत उपन्यास 'मालपल्लि' गान्धी युग के चिन्तन और अनुभूति के परिमल से परिपूर्ण है। बैरिस्टर लक्ष्मीनारायण को गान्धी-युग के शील के सौरभ का रस प्राप्त था। हरिजनोद्धार के पीछे गान्धी जी के हृदय में जो संवेदना और सहानुभूति थी उसकी सुगन्ध लक्ष्मीनारायण जी ने प्रसारित की। मालपल्लि बीसवीं शताब्दी की एक बड़ी सशक्त रचना है। तेलुगु साहित्य परिमल की यह चौथी सुरभि 8 पृष्ठों के लेख में आयोजित है। "तेलुगु शब्द, तेलुगु देश, तेलुगु साहित्य, तेलुगु-हृदय, तेलुगु संकल्प आदि ने 'मालपल्ली' को अनिर्वचनीय प्रतिभा प्रदान की है।" लेखक कहता है—"आन्ध्र के उपन्यास साहित्य में मालपल्लि का अप्रतिम स्थान है।

परिमल के कृति-खण्ड की पाँचवीं सुरभि 'श्रीकृष्ण तुलाभारमु' तीन अंकों के इस नाटक की प्रशस्ति है। सत्यभामा श्रीकृष्ण को वश में लाने के लिये पुण्यक व्रत करती हैं। उसके अंग-स्वरूप तुलादान करती हैं। अपने सब आभूषण तुला पर रख देती हैं। आभूषणों की अपार राशि श्रीकृष्ण को नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तौल पाती। रुक्मिणी भक्तिपूर्वक तुलसी का एक दल रख देती हैं। श्रीकृष्ण तुल जाते हैं। गर्विता सत्यभामा, रुक्मिणी के समान, पति-भक्ति के सौरभ से विभूषित हो जाती हैं। श्री मुत्तुराजु सुब्बाराव ने तीन अंकों वाले इस नाटक का प्रणयन किया है। इसमें जनता को आकर्षित करने वाली सब सुरभियाँ हैं। यह लेख 6 पृष्ठों और 5 पंक्तियों में विनियोजित है।

कृति खण्ड का छठा परिमल 'विश्वनाथ मध्याक्करलु' सात पृष्ठों वाले इस लेख में सुरभि बिखेर रहा है। स्व. विश्वनाथ सत्यनारायण जी महापंडित और महाकवि थे। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में किसी भी भारतीय भाषा में ऐसी प्रतिभा का जन्म नहीं हुआ, ऐसा मेरा अनुमान है। तेलुगु छन्दों में ध्याक्कर छन्द अत्यन्त कठिन माना जाता है। 'भारतम्' प्रणेता एर्राप्रगडा के बाद चौदहवीं शताब्दी से लेकर आजतक किसी कवि ने ध्याक्कर छन्द नहीं लिखा। कवि-सम्राट विश्वनाथ ने इस कठिन छन्द की एक हजार सुरभियाँ तेलुगु साहित्य को अर्पित कीं दस विभिन्न शतकों की रचना करके।

सातवीं और अन्तिम सुरभि 'कवि कर्ण रसायन है। इसे प्रसारित करने वाले गन्धवह श्रीकृष्णदेवराय के समकालीन संकुसाल नृसिंह कवि हैं। इस ग्रन्थ में चक्रवर्ती मान्धाता का जीवन-सौरभ आबद्ध है। 6 सर्गों वाला यह प्रबन्धकाव्य अपनी सरसता में अप्रतिम है।

डॉ. भीमसेन निर्मल के अनुसार "कविवर नृसिंह रचित 'कवि कर्ण रसायन' नामक इस काव्य को काव्य-रसिक सहृदय जनों का कण्ठाभरण मानना चाहिए।" 'तेलुगु साहित्य परिमल' राष्ट्रीय एकात्मकता उत्पन्न करने वाला सुन्दरतम प्रयत्न है। हर एक हिन्दी भाषी-सदन में इसकी सुरभि का प्रसार होना चाहिए। शम्।

दिनांक 18-8-91

—डा. रामनिरंजन पाण्डेय
भूतपूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग
उस्मानिया विश्वविद्यालय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वस्त्ययन

भारत की विभिन्न भाषाओं में साहित्यिक आदान-प्रदान की संसरणशीलता स्वातंत्र्योत्तर सारस्वत चेतना की सबसे बड़ी उपलब्धि है। पिछले चार-पाँच दशकों में भारतीय साहित्य में सामासिक भावना पर्याप्त बल और संबल प्राप्त करती रही। इससे भाषा, साहित्य, संस्कृति और दर्शन का समन्वित विकास संभव हो सका है। अब भारतीय साहित्यकार किसी एक भाषा तक सीमित न रहकर सच्चे अर्थों में सर्वभाषा-सरस्वती का समन्वित साधक या आराधक बन गया है। भारत-भारती की भारतीयता को पहचानने में यह प्रवृत्ति अत्यंत सहायक रही है।

इस क्षेत्र में भारत की अन्यान्य भाषाओं की भांति आंध्र प्रदेश की पद्य-पदोज्ज्वल और भाव सुरभिल भाषा तेलुगु ने भी यथेष्ट योगदान किया है। वास्तव में सारस्वत समाराधन का यह कार्य स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले ही आरम्भ हो चुका था। भारत के बहुभाषी विद्वानों ने अपनी-अपनी भाषाओं के प्रशस्त साहित्य को अन्य भाषाओं के पाठकों तक पहुँचाने और बाहर के साहित्य को अपनी भाषा में आत्मसात कर सत्साहित्य का संप्रसारण करने में स्पृहणीय योग दिया है। इस प्रकार भाषा और साहित्य के क्षेत्रों में असंख्य सांस्कृतिक सेतुओं का निर्माण होने लगा जिसके सुफल का गुणगान अगली शताब्दी करेगी। आज हम इस आराधना के इतने निकट हैं कि इसके सही सौन्दर्य को हम समग्र रूप से समझ नहीं पा रहे हैं।

राष्ट्र की इस संगमनी सारस्वत साधना का ही परिणाम है कि आज हम राष्ट्र भारती हिन्दी के माध्यम से लगभग सभी भारतीय भाषाओं की भव्य भावना को हृदयंगम कर पा रहे हैं। इसी का एक सुन्दर परिदृश्य प्रस्तुत करता है—डा. भीमसेन निर्मल का "तेलुगु साहित्य परिमल"।

कृति का नाम जितना सुन्दर है, उसकी आकृति भी उतनी ही आकर्षक है। हिन्दी और तेलुगु के विख्यात विद्वान् और भारत की भावात्मक एकता के एकांत उपासक डा. भीमसेन निर्मल को मैं वर्षों से जानता हूँ। उनकी कार्य दीक्षा और साहित्य-निष्ठा ने भुवन वाणी के माध्यम से रंगनाथ रामायण जैसी कृतियों को हिन्दी के प्रबुद्ध पाठकों तक पहुँचाया। अब यह 'परिमल' उसी साधना-संगीत का स्वर-प्रस्तार है। इस संकलन के चौदह लेख तेलुगु साहित्य का दिग्दर्शन कराते हैं। कविता, कहानी, नाटक, लोकगीत, हास्य आदि अनेक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विधाओं में तेलुगु साहित्य की नई-पुरानी प्रगति का संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित परिचय इन लेखों में मिलता है। निर्मल के कर-कमल (लेखनी) से निकला हुआ यह 'परिमल' तेलुगु साहित्य की सुगंध को सुग्राही पाठक समाज के मन-मस्तिष्क तक पहुँचा कर भारत भारती को एक हृदय बनाने में सफल हो, यही मेरी मंगल कामना है।

माँ भारती से मेरी प्रार्थना है कि भाई निर्मल को इसी प्रकार भाषा-भारती की सेवा करने का बल प्रदान करती रहे ताकि उनकी लेखनी बराबर चलती रहे।

चरैवेति चरैवेति चरैवेति

ज्येष्ठ पूर्णिमा
27 जून, 1991

डा. आई. पाण्डुरंग राव
निदेशक
भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्राक्कथन

यह मेरे लिए प्रसन्नता की बात है कि समय-समय पर लिखे गए मेरे लेखों का एक संकलन 'तेलुगु साहित्य परिमल' के नाम से प्रकाशित हो रहा है। इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए मैं अपने मित्रों, शुभचिंतकों तथा छात्र-छात्राओं का अत्यंत आभारी हूँ, जिन्होंने प्रकाशन के सारे कार्यभार को संभाल लिया।

पं. वंशीधर जी विद्यालंकार (संस्थापक अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय) की प्रेरणा और डा. वाराणसि राममूर्ति जी रेणु के प्रोत्साहन के कारण मैं तेलुगु साहित्य के विविध आयामों के बारे में हिन्दी में लेख लिखने लग गया। यह सन् 1956 की बात है। उस समय से लेकर, तेलुगु साहित्य के परिमल से, हिन्दी माध्यम द्वारा, समस्त भारतीय वाङ्मय वन को आपूरित करने का प्रयास करता रहा। अनुवाद, तुलनात्मक अध्ययन प्रधान लेख, परिचयात्मक लेख, स्वतंत्र लेख आदि से तेलुगु के उत्कृष्ट साहित्य से हिन्दी के विज्ञपाठकों को तथा हिन्दी के स्पृहणीय साहित्य से तेलुगु के पाठकों को परिचित कराने की दिशा में लगभग एक हजार अनुवाद (साहित्य की सभी विधाओं के) तथा 600 से अधिक लेख प्रकाशित किए हैं। तेलुगु के मूर्धन्य कवि डा. सी. नारायण रेड्डी जी के 'विश्वंभरा' काव्य का हिन्दी अनुवाद (इसी काव्य पर उन्हें ज्ञानपीठ का पुरस्कार मिला) और आचार्य नगेंद्र के मानक ग्रंथ 'रससिद्धांत' का तेलुगु अनुवाद इस दिशा में मेरे उल्लेखनीय प्रयास है। यह कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन मेरे जीवन के ध्येय बन गए हैं। तेलुगु प्रांत के अज्ञात हिन्दी लेखकों की रचनाओं को प्रकाश में लाने की दिशा में भी मेरे प्रयासों की हिन्दी के मूर्धन्य विद्वानों ने सराहना की है।

परम श्रद्धेय आचार्य नगेंद्र, आचार्य रामनिरंजय पांडेय, तथा मित्रवर डा. ऐ. पांडुरंगराव का मैं आभारी हूँ जिन्होंने अपने वक्तव्यों से मुझे प्रोत्साहित किया है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखों के चयनकर्त्ता और अभिन्न मित्र डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै का मैं कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने अस्वस्थ रहने के बावजूद इस कार्यभार को वहन किया है।

डा. एन. बी. एस. प्रसाद ने अथक श्रम करके इस योजना को कार्यान्वित बनाया है। डा. सी-एच. रामुलू, डा. आर. माधवराव, डा. संजीव, डा. (श्रीमती) के. शारदा, कुमारी बेबी सुजाता आदि ने अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है।

आशा है, इस पुस्तक से तेलुगु साहित्य और उसकी समृद्धि से परिचित होने का अवसर विज्ञ पाठकों को प्राप्त होगा।

—डा. भीमसेन निर्मल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुक्रम

साहित्य-खंड

1. तेलुगु का लोकगीत-साहित्य 1

2. तेलुगु भाषा और उसका साहित्य 26

3. स्वातन्त्र्योत्तर तेलुगु साहित्य 64

4. तेलुगु का नाटक साहित्य 76

5. तेलुगु का कथा साहित्य 83

6. तेलुगु साहित्य में हास्य 88

7. तेलुगु कविता में राष्ट्रीय चेतना 98

कृति-खंड

1. नवनाथ चरित्र : एक परिचय 125

2. मोल्ल रामायणमु : एक परिचय 134

3. पिंगलि सूरन्न कृत कला पूर्णोदयमु 144

4. मालपल्लि 157

5. तेलुगु का प्रसिद्ध नाटक : श्रीकृष्ण तुलाभारमु 165

6. विश्वनाथ मध्याक्करलु 172

7. तेलुगु का गौरव ग्रन्थ : कविकर्ण रसायन 178

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साहित्य-खंड

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु का लोकगीत-साहित्य

लोकगीत-साहित्य का उद्गम व महत्व—

साहित्याचार्यों का निर्विवाद मत है कि गीत ही मानव की भावाभिव्यक्ति का प्रथम प्रयास रहा है, जिसे सुख के उल्लासपूर्ण स्वर में या दुख के आकुल स्वर में मानव ने गाया है। असंस्कृत और प्रकृति की गोद में खेलने वाले मानव ने स्वर खोलकर जो उन्मुक्त गीत गाये हैं, वे ही लोकगीतों के मूल में हैं। स्वभावतः ये गीत निसर्ग-जीवन और असंस्कृत मन से निर्गत हैं। विख्यात् आलोचक एमर्सन का कथन है कि सारी महान् कलाएँ अप्रयत्न ही फूट पड़ती हैं (All the great art is unconscious.)। इस कसौटी पर लोकगीतों का साहित्य अत्युत्तम कोटि का ठहरेगा।

निसर्ग जनित होने के कारण इन लोकगीतों में मानव-प्रकृति के दर्शन अपने निजी रूप में स्पष्ट परिलक्षित हो सकते हैं। परिष्कृत साहित्य की अपेक्षा लोकसाहित्य ही जनता की विचार-धारा का सच्चा प्रतिबिम्ब माना जा सकता है। अकृत्रिम और सहज प्रवाह वाले लोकगीतों में ही किसी जाति या समाज की संस्कृति-सभ्यता, आचार-विचार, मानसिक प्रवृत्तियों, अनुभव-अभिरुचियों आदि का सच्चा चित्रण मिलेगा। लोकगीत के स्वर दूर से आते हैं। जाने यह स्वर कहाँ से फूट पड़ते हैं। युग-युग की पीड़ा-वेदना युग-युग की हर्ष-श्री, रीति-नीति, प्रथा-गाथा अचूक सहज रूढ़िवार्ता, भौगोलिक एवं वातावरण निर्मित संस्कृत परम्परा, ये सभी इन स्वरों में अपने नाम, धाम अथवा वंश आदि का परिचय देते प्रतीत होते हैं।[1] सच तो यह है कि इन लोकगीतों में असंख्य मूक हृदय गाते हैं, जिन के स्वर में अनन्त हैं। अतः यह स्पष्ट है कि प्रत्येक दृष्टिकोण से लोकगीत-साहित्य मोटे तौर पर लोकसाहित्य (Folk Iiterature) का विशेष अध्ययन होना चाहिए। लाला लाजपतराय के शब्दों में कह सकते हैं कि देश का सच्चा इतिहास और उसका नैतिक और सामाजिक आदर्श इन गीतों में ऐंसा सुरक्षित है कि इनका नाश हमारे लिये दुर्भाग्य की बात होगी।[2] श्री देवेन्द्र सत्यार्थी भी अपने एक लेख में इसी बात की ओर संकेत करते हैं कि किसी भी जाति को पुनर्जागरण के बाद अपने

---

1. बेला फूले आधी रात : देवेन्द्र सत्यार्थी।
2. कविता कौमुदी के 'ग्रामगीत' वाले भाग से उद्धृत।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लोकगीतों से प्रेरणा प्राप्त करनी चाहिये। (A nation reborn must be inspired by its folk songs.)[1]

गत दो दशकों से भारतीय साहित्य की इस शाखा की ओर विद्वानों का ध्यान गया है और इन धूलि-धूसरित मणियों के उद्धार का अनवरत प्रयास किया जा रहा है। प्रस्तुत लेख में तेलुगु के लोकगीत-साहित्य का संक्षिप्त परिचय देना ही इन पंक्तियों के लेखक का अभीष्ट है।

लोकगीतों के लक्षण—

लोकगीत-साहित्य का परिचय प्राप्त करने से पहले, इन लोकगीतों के सामान्य लक्षणों से अवगत होना अनुचित न होगा।

सामूहिक चेतना की अभिव्यक्ति हो, 'शतियों की सामाजिक परम्पराओं से पोषित हो', लोकसाहित्य का रूप लेती है। गीत का गायक या लेखक अपने को समाज में विलीन कर लेता है और उसे अपने कर्तृत्व का ध्यान नहीं रहता। बंगाल के बाउल के शब्दों में चरण-चिह्न छोड़ जाना कृत्रिम और अस्वाभाविक तो है। यह भी हो सकता है कि गीत की रचना, एक से न होकर समूह से हुई हो। अतः अज्ञात कर्तृत्व या सामूहिक कर्तृत्व लोकसाहित्य का पहला लक्षण माना गया है।

किसी नियत लेखक के न होने से, जब रचना सबकी संपत्ति हो जाती है, तब उसके रूप में, गायक के इच्छानुसार परिवर्तन होता रहता है। अतः लोकगीतों में स्थिर रूप का अभाव पाया जाता है। इसी बात की ओर संकेत करते हुए श्री F. G. Child साहब 'English and Scottish Ballads में कहते हैं कि there are texts but there is no text.

मसि-कागद का ज्ञान न रखने वाले ग्रामीणों की वाणी में ही लोकगीत अपना जीवन बनाए रखते हैं। लोकगीत मौखिक प्रचार पर ही बने रहते हैं।

अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के अभाव में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि कौन सा गीत कब बना है। भाषा और शैली में परिवर्तन होते रहने के कारण, समय का निर्धारण करना और भी कठिन हो जाता है। ब्रिटानिका विश्वकोष के 'लोकगीत साहित्य' शीर्षक लेख में निम्न वाक्य इस कथन की पुष्टि करता है। 'A folk song is neither new or old because it is continually taking anew life; it is an individual flowering on a common stem.'

---

1. Illustrated weekly, Nov. 12, 1944.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लोकगीतों की शैली निरलंकृत हो, स्वच्छन्द व सरस होती है। बरबस हृदय से फूट पड़ने वाले इन गीतों में, प्रयत्नपूर्वक लाये गये अलंकार या कवि समय या शब्दाडंबर के दर्शन नहीं होते। उसकी शैली एकदम अकृत्रिम होती है।

लोकगीतों में पुनरावृत्ति की अधिकता पाई जाती है।

'चिर परिचित शब्द, चिर परिचित बातें, चिर परिचित स्वर, ये लोकगीत की शक्ति हैं।[1]' जन सामान्य की परिचित वस्तु (Subject matter) ऐसी वस्तु जो उन्हें अपने हृदय की लगे, लोकगीत का मुख्य लक्षण है।

उपर्युक्त लक्षणों में मुख्य हैं अज्ञात शिल्प और सार्वजनीनता। सम्प्रति श्री जदुनाथ सरकार की निम्न-परिभाषा में लोकगीत-साहित्य के समग्र लक्षण समाए हुए हैं।

"Rapidity of movement, simplicity of diction, primary emotion of universal appeal, action rather than subtle analysis, broad striking characterisation, thumb nail sketches of background and the sparest use or rather complete avoidence of literary artifices, these are the essential requisiters of the true ballad."

तेलुगु लोकगीत और विद्वान—

तेलुगु में इन लोकगीतों को "जानपद गेय" कहते हैं। प्रजा वाङ् मय, पदवाङ्मय, अनादृत वाङ्मय, गेय रचनाएँ, मधुर कविताएँ, देशी सारस्वत आदि नामों से भी विद्वानों ने इस साहित्य को अभिहित किया है, पर 'जानपद साहित्य' ही अधिक लोकप्रिय और रूढ़-सा हो गया है। तेलुगु में (जो Italian of the East कही गई है।[2]) लोकगीत-साहित्य का अपार भण्डार भरा पड़ा है और प्रत्येक गीत मधुवर्षिणी है। तेलुगु के लोकगीत-साहित्य से प्रभावित हो, उसे प्रकाश में लाने का सौभाग्य दो अंग्रेज महानुभावों का है। विदेशी होते

---

1. धरती गाती है—श्रीदेवेन्द्र सत्यार्थी
2. Of all Dravidian languages, Telugu is the sweetest and most musical. It is exceedingly melifluous and sounds harmonious even in the mouth of the most vulgar and illiterate. It has justly been called the 'Italian of the East.' Mr. Henry Morris as quoted by E. Thurston in 'Castes and tribes of south India.'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुए भी तेलुगु भाषा-साहित्य की सर्वतोमुखी सेवा करने वाले धन्य पुरुष हैं श्री सी. पी. ब्राउन।[1] ब्राउन साहब ने लेख लिखकर और लोकगीतों का सुन्दर संग्रह कर, जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। इनके बाद श्री जे. ए. बायल (Boyle) ने "Telugu Ballad Poetry" के नाम से एक प्रामाणिक लेख प्रकाशित किया था।

20 वीं शती में इस दिशा में काम करने वाले विद्वानों में सर्वश्री नंदिराजु चलपतिराव, एम. एन. वेंकट स्वामी, वेटूरि प्रभाकर शास्त्री, ए. उमाकान्तम् चिन्ता दीक्षितुलु, नेदुनूरि गंगाधरम्, टी. कामेश्वरराव, श्रीपाद गोपालकृष्णमूर्ति, हरि आदिशेषुवु, नायनि कृष्णकुमारी, डा. बी. रामराजु आदि के नाम उल्लेख्य हैं। श्री नेदुनूरि गंगाधरम् ने अपना सारा जीवन इन लोकगीतों, कहावतों आदि का संकलन करने में लगा दिया है और हजारों की संख्या में ये गीत उनके पास प्रकाश प्राप्त करने की आशा में पड़े हैं। श्री चिन्ता दीक्षितुलु, और कामेश्वरराव जी ने "बालगीतों" पर और कृष्णकुमारी ने स्त्रियों के गीतों पर प्रशंसनीय कार्य किया हैं। श्री हरि आदि शेषुवु ने विज्ञान के प्राध्यापक होते हुए भी, "जानपदवाङ्मय परिचयमु" नाम से बड़ी सुन्दर पुस्तक लिखी, जिस पर तेलुगु भाषा समिति ने सन् 1953 में 500) का पुरस्कार प्रदान किया। डा. रामराजु ने इस विषय पर एक प्रबन्ध (Thesis) प्रस्तुत किया जिस पर उस्मानिया विश्वविद्यालय ने उन्हें Ph. D. की उपाधि से विभूषित किया है।'

तेलुगु के प्राचीन साहित्य में लोकगीतों का उल्लेख—

नन्नयभट्ट तेलुगु के प्रथम महाकवि माने जाते है जिन्होंने राजमहेंद्री के चालुक्य राजा राजनरेंद्र के दरबार में रहकर 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि', 'चामुण्डिका विलासमु' आदि ग्रन्थ लिखे किन्तु इनकी कीर्ति का प्रकाश-स्तम्भ तो संस्कृत महाभारत के प्रथम ढाई सर्गों का अनुवाद है। इनकी शैली इतनी परिष्कृत एवं प्रौढ़ है कि यह कहना भ्रामक सा प्रतीत होता है कि तेलुगु साहित्य एकदम 11 वीं शती में प्रारंभ हुआ है। पर नन्नय से पूर्व का साहित्य लुप्तप्राय है। नन्नय और उनके समकालीन कवियों ने कुछ गीतों का उल्लेख किया है जो अधिकांश लोकगीत हैं। तुम्मेद, निव्वाळि, वालेशु, गोब्बि, वेन्नल, ऐल आदि पद, अंकमालिकलु, ऊयल पाटलु, जाजर पाटलु, यक्षगानमुलु, दरुवुलु मंगलहारतुलु, सद्दुल आदि का उल्लेख, प्राचीन तेलुगु साहित्य में मिलता

---

1. विशेष परिचय के लिये 'तेलुगु के अनन्य सेवी सर ब्राउन' (अजन्ता, अप्रैल, मई, 53)।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। इनमें से कई गीत आज भी गाँवों में गाये जाते हैं। विशेष राग और लय (ताल) में गाये जाने वाले इन लोकगीतों का अपने मूल और प्रचलित रूप में संकलन करने का स्तुत्य प्रयत्न, आकाशवाणी के सभी केंद्र कर रहे हैं।

तेलुगु के उपलब्ध लोकगीतों के अध्ययन की सुविधा के लिये, कुछ मोटे विभाग कर लेंगे। यथा (1) पौराणिक (2) ऐतिहासिक (3) धार्मिक (4) दार्शनिक (5) बालगीत (6) स्त्रीगीत (7) श्रमिक गीत और (8) फुटकर रसवाले गीत।

पौराणिक –

अधिकांश लोकगीतों की कथावस्तु पुराणों से ही ली गई है। पुराण मित्र सम्मित माने गये हैं। पौराणिक विषयों में जनता का मन अधिक रमता है। किन्तु इन पौराणिक गाथाओं पर अधिक श्रद्धा-भक्ति होने पर भी, ग्रामीणों ने उन कथाओं को अपनी चित्तवृत्तियों के अनुकूल गढ़ लिया है। रामायण, महाभारत, महाभागवत के इतिवृत्तों पर आधारित लोकगीत असंख्य हैं।

सियाराम आन्ध्रों के प्रियतम भगवान हैं। जहाँ देखिये जहाँ सुनिये वह पवित्रनाम प्रतिध्वनित होता सुनाई पड़ेगा। क्या शिष्ट-साहित्य में, क्या लोकसाहित्य में, मर्यादापुरुषोत्तम की कथा गा-गाकर भक्तों ने अपने को धन्य किया है। लोकसाहित्य के कूचकोंब रामायणमु, शारदा रामायणमु, सूक्ष्म रामायणमु, संक्षेप रामायणमु, चिट्टि रामायणमु, श्रीरामदंडमुलु, शान्त गोविंद नाममुलु आदि में रामायण की संपूर्ण गाथा है तो शान्ताकल्याणमु, पुत्रकामेष्ठी, राघवकल्याणमु, राम का रूठना, सुन्दरकाँडपदमु, सुग्रीव विजयमु, लक्ष्मण मूर्च्छा, लंकायागमु, श्रीराम पट्टाभिषेकमु, लक्ष्मणदेवर की हँसी, ऊर्मिला देवी निद्रा, कुशलव, कुच्चेल कथा, कुशलवगीत, शतकंठरामायणमु आदि में रामायण के किसी विशिष्ट भाग की गाथा है। केवल सीताजी की जीवन-गाथा पर आधारित अनेक गीत ग्रामीण-स्त्री-समाज में प्रचलित है जैसे सीता का जन्म, सीता का कल्याण, सीताजी को ससुराल भेजना, सीताजी का रूठना, सीताजी की मुद्रिका, सीताजी का अग्नि प्रवेश आदि। इन सभी गीतों में सियाराम महापुरुष या अवतार पुरुष नहीं हैं, साधारण ग्रामीण के मानसिक प्रवृत्तियों के आलम्बन-स्वरूप साधारण नर-नारी हैं। अपने ही सुख-दुखों को इन पुराणदम्पतियों पर आरोपित कर तादात्म्य का अनुभव किया है ग्रामीणों ने। सीता जी के वनवास को अपना वनवास और उनके अग्नि-प्रवेश को अपना अग्नि-प्रवेश मानकर, मानों ग्रामीणों के हृदय पिघल पड़े हैं, इन गीतों के रूप में। इन गीतों की भाषा, भावना और कल्पना पर ग्रामीणों के हृदय-पक्ष की अमिट छाप है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अयोध्या लौट आने के बाद, सीता जी की, नगर की नारियों के साथ बातचीत की एक झाँकी लीजिये, जिसमें नारी का हृदय बोल रहा है ।

"अम्मलार ! मीरन्दरु नन्नु, तलतुर मरतुर कानललोनु
कान्तरो ! नी कडसारपु कूतुरु, चिन्नदिगद ने वेल्लेडिनाडु,
मग्गुरु बिड्डल कन्नादटवे, वेपइना तोड्कु रम्मेनेनु ।
वेलदिरो ! नी पेद्द कोडुकिप्पुडु, वेरु बासेना नीतोनइना,
कोम्मरो ! नी कोडलिगुणमुलु, विंटिनिगदने वेडुकतोनु,
शान्ताचेप्पगा चोद्यमुलायेनु............
(दानि) कोरि तेस्तिवे अक्कारो नीवु, अनुभविस्तिवेमक्कुवदीर"

(हे माताओ ! जब मैं वनों में थी तो तुम लोग मुझे याद करती रहीं या भूल गई ?

ओ कान्ता ! जब मैं जंगलों में गई, तब तक तुम्हारी छोटी लड़की बच्ची ही थी,

अब तीन बच्चों की माँ बनी ! कल तो उसे साथ लेते आओ न !
हे ललना ! तुम्हारा बड़ा लड़का, अब तुम से अलग रहने लगा ?
ओ बहन ! तुम्हारी बहू के गुणों को सुना है, शौक से,
शान्ता कह रही थी, अचरज हुआ सुनकर........
(उसे) तो बड़ी इच्छा से लाई थी, अब तो भुगत रही हो न !)

'प्रणय के पावन प्रसाद' से वंचित विरहिणी ऊर्मिला की कथा को, जनता ने लोकगीतों में उपेक्षित न रहने दिया, प्रत्युत अमर बना दिया । ऊर्मिला देवी की निद्रा' में ऊर्मिला की दुखभरी गाथा बड़े ही हृदयग्राही ढंग से वर्णित है ।[1]

ऊर्मिला की निद्रा और लक्ष्मण के भरी सभा में हँसने के कारण की सुन्दरता कल्पना की है जनमानस ने ! रामचन्द्र जी का राजतिलक हो गया । सभा खचाखच भरी हुई थी । लक्ष्मण एकदम हँस पड़े । सभी अपनी बगलें झाँकने लगे । शिव जी ने सोचा कि मछियारे की लड़की को सिर पर रख लिया, इसलिये हँस रहा है । विभीषण ने सोचा कि मैंने अपने बड़े भाई का वध करवाया है । सीता ने सोचा कि अँट-सँट बकने वाली स्त्री होकर मैंने विपत्ति मोल ली है। रामचन्द्र जी ने सोचा कि दुश्मन की कैद में रहकर आनेवाली स्त्री को, मैंने गोद में बिठा लिया, इसलिये लक्ष्मण हँस रहा है। इस तरह सबको अपनी-

1. विशेष परिचय के लिये देखिये 'अजन्ता' (अक्तूबर-नवम्बर 57)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपनी गलती (?) महसूस हुई। रामचन्द्र जी के पूछने पर लक्ष्मण जवाब देते हैं कि जंगल में एक दिन निद्रादेवी, मेरे पास आने का साहस न करके गोदावरी के कलकल स्वर के मिस रो रही थी। कारण पूछने पर उसने बतलाया कि तुम्हारा जागते रहना मेरी प्रकृति के विरुद्ध है। तब लक्ष्मण ने जवाब दिया, उसकी सरसता देखिये—

मायन्न रघुपतिकि मावदिनकूनु, ई पर्णशालकु तानू कापनेनु,
पोपोम्मयोध्यापुरी नगरुनकु वेगा, धवुनिबासिनट्टि सतियुंडतगदू,
रात्रियुनु पवलुनू लेवकुंडगनू, तनुविडिचि पोंदुमी धवलाक्षि निद्रा !

(भाई रघुपति और भाभी का तथा इस पर्णशाला का पहरा देना मेरा कर्तव्य है। जाओ अयोध्यानगरी को शीघ्रता से, पति के बिना स्त्री को रहना नहीं चाहिये। रात-दिन उसका (उर्मिला का) आश्रय लो तुम ओ श्वेत नेत्र वाली निद्रा ?)

तदुपरान्त भाई की आज्ञा ले लक्ष्मण अन्तःपुर में गये। वहाँ ऊर्मिला से मिलन होता है। तब वे कहते हैं—

'तरुणि ! पदुनालुगेंड्लु निनुविडचि, धरिइस्तिने प्राणमु
आहारनिद्रलुनु येरुगने, अतिव ! नीमीदयान,
पुण्यपुरुषुल स्त्रीलनु एडबापिन, पूर्वजन्मुन मनमू,
एन्नेन्नि युगमुलैन इदिमनकु, अनुभविंचकतीरदु।'

(हे ऊर्मिला ! चौदह वर्ष तुम्हारे वियोग में, बड़ी कठिनाई से प्राणों को रोक रखा है। तुम्हारी कसम, मैंने चौदह वर्ष न खाया है, न सोया है। पूर्व जन्म में हमने किन्हीं पुण्य पुरुषों को, उनकी स्त्रियों से अलग किया होगा। वह पाप, चाहे जितने भी युग बीतें, भोगना ही पड़ेगा।)

इस प्रकार रामायण की कथा के मिस, इन गीतों में जीवन के दाम्पत्य जीवन के मनोरम चित्र मिलते हैं। रामायण के पात्र साधारण नर-नारी बनकर रूठते, मचलते, एक दूसरे को मनाते, हँसी-मजाक करते दीखते हैं। अपने दुख-सुख की धूप-छाँह से जीवन को झिलमिल बनाते हैं।

रामायण के बाद महाभारत पर आधारित लोकगीतों का नम्बर आता है। महाभारत[1] आन्ध्रों का प्रिय ग्रन्थ है। एक कहावत भी चल पड़ी है कि

1. तेलुगु के आदि कवि नन्नय ने ढाई पर्व, तिक्कन ने बाकी पन्द्रह पर्व और एर्रन ने अरण्य पर्व के आधे भाग का सुन्दर अनुवाद किया है। इन्हें 'कवित्रय' कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खायें तो वड़े खायें, सुनें तो महाभारत सुनें ! रामायण के समान संपूर्ण भारत की कथा को लेकर चलने वाले भारत परक गीत उपलब्ध नहीं है पर महाभारत के अनेक उपाख्यानों को लेकर रचे गये अनेकों गीत हैं जैसे नल-चरित्र, देवयानी की कथा, सुभद्रा कल्याण,[1] धर्मराज का जुआ खेलना, पद्म व्यूह (अभिमन्यु की कथा), सावित्री, शशिरेखा परिणय, गयोपाख्यान, पाराशर मत्स्यगंधा का संवाद आदि ।

अनोखी कथाओं की कल्पना से मानव-मन तृप्त होता है । कृष्णार्जुन युद्ध पर आधारित 'गयोपाख्यान' नामक लोकगीत भी ऐसा ही है । 'गय' नामक यक्ष के विमान पर जाते हुए कृष्ण भगवान के हाथों में थूकना, (अनजाने हो) कृष्ण का शपथ खाना कि उसका वध करके रहूँगा, नारद के कहने पर गय का अर्जुन की शरण में जाना, सुभद्रा के विफल प्रयत्न, (इधर भाई तो उधर पति !) अन्त में युद्ध, अन्त में शिवजी के द्वारा सुलह; ये इस उपाख्यान के अंश हैं । इसमें सुभद्रा की दयनीय दशा का मार्मिक चित्रण हुआ है । बेचारी को दोनों तरफ से फटकार मिलती है ।

महाभागवत में, भक्ति के समान ही, श्रीकृष्ण की बाल और यौवन क्रीड़ाओं ने ग्रामीणों का मन हर लिया है । प्रह्लाद चरित्र, वामन विजय, अंबरीषोपाख्यान, गजेंद्रमोक्ष, श्रीकृष्णजन्म, कालियमर्दन, श्रीकृष्ण का कलेवा, बाललीला, गोपी जलक्रीड़ाएँ, रुक्मिणी कल्याण, चिलुकदूतमु (रुक्मिणी का शुक के द्वारा कृष्ण के यहाँ संदेश भेजना) सत्यभामा का विलास, पारिजात पल्लवी, उषा स्वप्न आदि गीत भागवत पर आधारित हैं ।

सत्य हरिश्चन्द्र, दत्तात्रेय जन्म, गंगा विवाद, गंगागौरी संवाद,[2] सौत का झगड़ा, मेनका-पार्वती संवाद, लक्ष्मी पार्वती संवाद, सुराभाण्डेश्वर, त्रिपुरासुर संहार, भ्रियाल की कथा, अण्डाल की कथा, श्रीरंग माहात्म्य, दशावतार गीत, वेंकटेश्वर का आखेट, एकादशी माहात्म्य, आदि लोकगीत अन्यान्य पुराणों पर आधारित हैं ।

इन सभी पौराणिक लोकगीतों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होने वाली बात एक है, वह है गाथाओं के पात्रों और घटनाओं के साथ ग्रामीणों का तादात्म्य । मूल कथाओं में परिवर्तन का मूल कारण ग्रामीणों की अपनी प्रवृत्ति और रुचि ही है । क्या भावों में, क्या उपमा रूपकों में ग्रामीण-आत्मा का स्पष्ट प्रतिबिम्ब पाया जाता है ।

---

1. कल्याण का अर्थ विवाह है ।
2. विशेष परिचय के लिये देखिये: 'अजन्ता' (अगस्त ५४)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऐतिहासिक—

ऐतिहासिक लोकगीतों का लोक-साहित्य में विशिष्ट स्थान है। उन्हें वीर गीत या (Historic Ballads) कह सकते हैं। इनका जन्म किसी वीरता पूर्ण घटना के बाद ही या कुछ समय के बाद होना, माना गया है। किसी वीर की शूरता से प्रभावित होकर या उसके साथ होने वाले अन्याय या उसकी अकाल मृत्यु से जनता का मन द्रवित होकर, वीरगीतों के रूप में फूट पड़ता है। कुछ वीरगीत सैनिकों में रणोत्साह भर देश व जाति के लिये मर मिटने को सन्नद्ध करते हैं तो कुछ जनता में जाति गौरव या देशाभिमान के भाव भर देते हैं। एक प्रसिद्ध इतिहासकार का कहना है कि—Unhappy the nation that has no histroy and happy the nation that can hear ballads commemorating the adventures of her warriors sung with fervour देश व जाति के महावीरों की गेयात्मक कथाएँ, गायक के ओजपूर्ण गायन से परिपुष्ट हो, श्रोताओं के शरीर को पुलकित कर, मनोलीन भावनाओं को जाग्रत कर प्राचीन-गौरव-गरिमा की झलक दिखा, श्रोताओं को उत्साह से भर देती है। इन वीर रसात्मक गेय काव्यों के बारे में पं. उपाकान्त विद्याशेखर कहते हैं—These ballads are recited before big audiences, generally and during moonlit nights with the necessary accompaniments and gestures andare semidramatic in nature. × × × generally the purpose of the ballads is to create mainly reverence and admiration towards the heroic souls by a sort of narration appealing to the popular imagination and emotion.[1]

इन वीर गीतों के ऐतिहासिक और अर्द्ध ऐतिहासिक (quasi historical) नाम से दो विभाग कर सकते हैं। ऐतिहासिक वीर गीतों के नाम तथा घटनाएँ बहुत कुछ ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि उनमें कल्पना का प्राचुर्य देखा जाता है। किसी देश व जाति के इतिहास लिखने वालों को इन गीतों से सहायता मिल सकती है। परन्तु अर्द्ध-ऐतिहासिक वीर गीतों में ऐतिहासिक तथ्य इतने धुंधले व अस्पष्ट होते हैं कि उनमें से इतिहास खोज निकालना टेढ़ी खीर है।

तेलुगु में उपलब्ध ऐतिहासिक वीर गीतों में पलनाटि वीर चरित्र, काटमराजु कथा, कुमार राम की कथा, सर्वाइ पापनि कथा, बोब्बिलि कथा, अल्लूरि सीताराम राजुकथा, सदाशिव रेड्डी कथा आदि उल्लेख्य हैं तो अर्द्ध

---

1. 'पलनाटि वीर चरित्र' की भूमिका से।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऐतिहासिक गीतों में बंगारु तिम्मराजु कथा, आरुमराठीलकथा, बलगूरि कोंडलायनि कथा, चिन्नपरेड्डी कथा आदि आती हैं।

राजदरबारों में अपनी प्रतिभा और पांडित्य का सिक्का जमाकर, कनकाभिषेक करा कर, कोंडवीडु के रेड्डी राज्य में विद्याधिकारी के पद पर सुशोभित होकर महाकवि श्रीनाथ ने तेलुगु साहित्य की अपार सेवा की है। पंडित कवि होते हुए भी श्रीनाथ ने लोकसाहित्य और लोकगीतों के महत्व को जान कर 'पलनाडु' के वीरों की कथा को 'द्विपदा' नामक देशी छंद में, लोक गीत के रूप में रचा है। यह लोकगीत इतना लोकप्रिय रहा है कि आज भी 'पिच्चुकुंट' नामक जाति वाले इस कथा को मसक बाजे के साथ बजाते हुए, गाते रहते हैं। गुंटूर जिले के पश्चिमी भाग में 'पलनाडु' नामक प्रान्त के राजपरिवार के आपसी युद्ध—भ्रातृ कलह-को लेकर यह गीत रचा गया है। इस गीत में वीररसात्मक उत्साह के साथ धार्मिक-आवेश का सुन्दर समन्वय किया गया है। (इस कथा की तुलना 'भारत के साथ की जाती है।)[1] अभिमन्यु के सम बालवीर बालचन्द्र को युद्ध के लिये प्रेरित करने का उपदेश देती हुई रेखांबा, अपनी पुत्री मांचाला से कहती है—

'जन्मवृक्षमुनकु जवि गलयट्टि, पटुतरकमनीय फलंबुलु रेंडु
केरलु भोगमुलोंडु कीर्ति रेंडवदि, तोलिपंडु चविचूचि तोलगुनोकडु
मलुपंडु चविचूचि मलगुनोकंडु, वीरलिद्दरिकिनि भेदंबु हेच्चु
मोदटि फलंबुन मोनसेडु रसमु, क्षणभंगुरंबदि समसिपोगलदु
रेंडवफलमुन रेक्कोनुरसमु, शाश्वतंबौचु दिशलगलदाक
सवितृडु गलदाक, शशिगलदाक, तारलुगलदाक, धरगलदाक
वारिधिगलदाक, वरलुचुनंडु, प्रकटफलद्वयरसमुनु ग्रोनि
यनुभविंचेडु वारलरूदु भूस्थलिनी, प्राकृतजनमुलु प्रथम फलम्बु
प्रापिंचि संतृप्ति पडयंगगलरू, वीरांशमुन बुट्टि वेलयुवारलकु
मोदटिफलंबिदि मुख्यबुगादु, महिमास्पंदबइ मनसुज्वलिंप
बरुगेत्तुदुरु रेंडबफलम्बु कोरकु, × × × ×

(इस जीवन रूपी वृक्ष के दो मधुर और रसीले फल हैं, एक भोगविलास और दूसरा कीर्ति। कोई पहले फल का स्वाद चखकर हट जाता है तो कोई दूसरे फल का रस चखकर ही रहता है। इन दोनों में अन्तर अधिक है। पहले फल में जो रस है, जो स्वाद है, वह क्षणभंगुर है, तत्काल नष्ट होने वाला है। दूसरे फल में जो रस है, वह दिशाओं, सूर्य, शशि, नक्षत्र, धरित्री, समुद्र

1. विशेष परिचय से लिये देखिये, 'युगप्रभात' 16-8-58।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के अस्तित्व तक शाश्वत रूप से बना रहता है। इन दोनों फलों के रस का आस्वादन करने वाले इस संसार में बिरले ही होते हैं। पामर जन प्रथम फल का रस प्राप्त कर ही तृप्त हो जाते हैं। वीरांशसंभूत व्यक्तियों को पहले फल का रस प्रधान नहीं है। मन में उत्कट अभिलाषा रख वे दूसरे फल की इच्छा रखते हैं, जो महिमास्पद है।)

यह –'पलनाटि वीर चरित्र'–लोक गीत होते हुए भी, पंडित-कवि की रचना है, अतः अन्य लोकगीतों की अपेक्षा पांडित्यपूर्ण है। फिर भी विषय और शैली की सरलता के दृष्टिकोण से, लोकप्रिय वीररसोत्तेजक रचनाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

'काटमराजु कथा' में सन् 1170 ई. में नेल्लूरु के राजा मनुमसिद्धि और काटमराजु में - चरागाह का कर न चुकाने के कारण को लेकर हुए युद्ध का विस्तृत और प्रभावोत्पादक वर्णन है। विवश हो युद्ध से लौट आये ब्राह्मण खड्ग तिक्कना का जो स्वागत हुआ, वह उल्लेखनीय है।

आँगन में बैठे हुए बूढ़े पिता फटकारते हैं–

'कोडुक ! ई वंशंबु कड्डु दोड्डदोयि, पेद्दकालमुनाडु पेरु मोसिनदि,
पुलिकडुपुन गोर्रे पुट्टु चंदंबुन, गलिगिति ना इंति गर्भंबुनंदु,
मगतनंबुन बुट्टि मगवाडवनुचु, पगतुकु वेन्निच्चु प्राणंबदेल ?
परुलकुनोडि यी यवनि यवनिमनकन्न, सरग रणभूमिलो समयुट मेलु,

(हे पुत्र ! हमारा वंश बहुत गौरवपूर्ण है। बहुत पहले से इस वंश ने बड़ा नाम पाया है। व्याघ्र के गर्भ से भेड़ के समान, मेरी पत्नी के गर्भ से तुम जनमे। पुरुष होकर पैदा हुए हो, पीठ दिखाने वाला वह प्राण किस काम का ? शत्रुओं के हाथ हार कर जीने की अपेक्षा, रणभूमि में मरना श्रेष्ठ है।)
और देखिये पत्नी ने क्या किया।

'अक्कड़ मंचंबु नड्डु पेट्टि, अद्दसेरु पसुपु नमरंग नुंचि,
कूर्चुंडि स्नानंबु गोव्वुन जेयुड, × × × ×

[वहाँ (स्नानागार में) पलंग की ओट में आधी सेर हल्दी रखकर, उसने कहा बैठकर (स्त्रियों के समान) फौरन स्नान कीजिये,]

माता ने भोजन में फटे-दूध डाला और कहा–

'यरुलतो-बोराडि यटुमीद नीवु, विरिगिन निनु जूचि विरिगेनु बालु'
(शत्रुओं के सामने तुम्हारे शौर्य को टूटते देख, दूध भी फट गया।)

इन बातों को सुनने के बाद वीर कहीं घर में टिक सकता है ? उसी समय तिक्कना तलवार लेकर, अकेले ही युद्ध-क्षेत्र में गया और हजारों को मारकर, अन्त में एक ब्राह्मण के हाथ मरकर अमर हो गया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वीर रसात्मक गीतों में बोब्बिलि कथा का श्रेष्ठस्थान है। सन् 1757 में बोब्बिलि के राजा रंगाराव और विजय नगर के राजा विजयरामगजपति के प्रचण्ड युद्ध का वर्णन है इस वीर गीत में। विजयरामराजु ने फ्रेंच सेनापति बुस्सी की सहायता प्राप्त की। चारों ओर से घिरकर, मृत्यु को सामने देखते हुए भी बोब्बिलि के नर-नारियों ने जिस वीरता का प्रदर्शन किया, वह अपूर्व है। प्रत्येक की जबान पर ये ही शब्द थे–

'रामराम अनन्त कालमु राज्यमेललेमु
जगमु वुंडकालमु वरकु मनमु वुंडबोमु'

(हाय राम ! अनन्त समय तक राज्य कर सकेंगे ? संसार जब तक रहेगा, तब तक जीवित रह सकेंगे ? (नहीं))

बोब्बिलि के वीर श्रेष्ठ तांड्र पापारायडु का नाम तो 'वीरता' का दूसरा नाम ही बन गया है।

सन् 1920 के करीब दो वर्ष तक, भारत में ब्रिटिश साम्राज्य को कंपा देने वाले वीर अल्लूरि सीतारामराजु की कथा भी वीर गीत के रूप में निबद्ध है।[1] सीतारामराजु की मृत्यु पर रोने वाले आन्ध्रदेश को देखिये—

'रालिनदोक नक्षत्रंबवनिकि, रामराजु, ओरिगे,
तलचिराजु ना मन्यसोदरुलु वलवल एडिचारू,
जलजल कन्नीरोलक बोसे मन तेलुगु देशमन्ता।'

रामराजु धराशायी हो गये, मानों एक नक्षत्र टूट गिरा हो। उन्हें याद कर, उस प्रान्त के लोग बिलख-बिलखकर रोने लगे। सारा तेलुगुदेश आठ-आठ आंसू रोता रहा।

अर्द्ध-ऐतिहासिक वीर गीतों में काल-प्रवाह के कारण, मूल गीत इतने परिवर्तित हो जाते हैं कि उनमें से ऐतिहासिक तथ्यों को खोज निकालना दुष्कर हो जाता है। परन्तु Social History (सामाजिक इतिहास) लिखने वालों के सामने इन गीतों का भी महत्व है। इनमें बहुत से गीत वीरों की व्यक्तिगत जीवनियों से संबंधित हैं, जिनसे इतिहास का अपेक्षाकृत कम संबंध है। कोटप्पकोंडा के चिन्नप्परेड्डी, (अंग्रेजी सेना से लड़ने वाला) गुर्राल गोपी रेड्डी, बंगारु तिम्मराजु कथा (पेनुगोंडा के देवरायलु से संबंधित), आरु मराठील कथा (पत्तिकोंडा के मराठी राजाओं से संबंधित), देशिंगुराजु कथा (सन् 1713

1. विशेष परिचय के लिये देखिये 'हिन्दी मिलाप' (15. 8. 59)।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के चेंजिराज परिवार से संबधित) आदि गीतों का अभी विशेष अध्ययन होना चाहिए।

तेलंगाने में प्रचार में जो वीर गीत हैं, वे निम्न हैं : राणी शंकरम्मा, सोमनाद्रि, सर्वे वेंकट रेड्डी, सदाशिवरेड्डी आदि।

धार्मिक—

भक्ति और वेदान्त (दर्शन) के लिये प्रख्यात हमारे देश में शान्त रसात्मक गीतों का प्राचुर्य होना स्वाभाविक ही है। जन सामान्य में, आज भी—इस वैज्ञानिक युग में भी—धर्म का जितना महत्व है, उतना अन्य किसी का नहीं। हमारे देश में सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी आन्दोलनों को परिचालित करने वाला धर्म ही रहा है। भारत में व्याप्त सभी प्रकार के धार्मिक आन्दोलनों का प्रभाव आन्ध्र देश पर पड़ा है और उनसे प्रभावित हो जनता ने अपने उद्‌गारों को गीतों के रूप में व्यक्त किया है। प्रारम्भ में आन्ध्र देश पर बौद्ध और जैन धर्मों का पर्याप्त प्रभाव रहा है पर बाद में आने वाले वीरशैव सम्प्रदाय की बाढ़ में वे इस तरह बह गये कि केवल नाम ही रह गया, तत्संबंधी सारा साहित्य नष्ट हो गया है, शैव और वैष्णव सम्प्रदायों का प्रचार रहने पर भी आन्ध्र देश में अद्वैत का ही अत्यधिक मान है।

शैव संबंधी लोकगीतों में तुम्मेद, प्रभात, बालेशु, गोब्बि पदमुलु मुख्य हैं। शैव धर्म के प्राबल्य के काल में (12 वीं शती से 14 वीं शती तक) जन-साहित्य को जो प्रोत्साहन मिला, वह निम्न शब्दों में व्यक्त है। "वैदिक सम्प्रदाय में स्त्रियों और ब्राह्मणेतरों को मंत्र व पूजा की योग्यता नहीं रह गई। वीरशैव सम्प्रदाय की प्रबलता ने भक्ति को ही परमलक्ष्य बनाकर सभी जाति वालों और स्त्रियों को पूजा पाठ का अधिकार दिया। सौभाग्य और सन्तान की इच्छा से स्त्रियों का व्रत आदि करना, वीरशैव सम्प्रदाय के प्रारम्भ के बाद ही शुरू हुआ। हमारे स्त्रियों के व्रतों में नब्बे प्रतिशत गौरी माई से संबंधित ही हैं। धार्मिक प्रचार के साधन के रूप में 'जानुतेनुगु' (जन सामान्य की भाषा) में रचनाएँ करने वाले वीरशैवों ने इन व्रत-कथाओं को भी उसी भाषा में और 'द्विपदा' छन्द में तथा गेय रूप में लिखा है। इसी प्रकार अन्य कथाओं की रचना भी 'द्विपदा' और 'सीस' आदि प्रवाहयुक्त छन्दों में शुरू होकर, हमारे साहित्य में 'स्त्री-गीत' नामक लोकसाहित्य की एक शाखा का मूलकारण बना।[1] इस प्रकार वीरशैव साहित्य, जनता की सहानुभूति प्राप्त कर फूला और फला।

---

1. देशी सारस्वत विभूतिः श्री श्रीपाद गोपालकृष्णमूर्ति।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दक्ष का यज्ञ, गंगा विवाह, गंगा गौरी संवाद, ईश्वर भृंगी संवाद, लक्ष्मी पार्वती त्रिपुरासुर संहार, सुराभाण्डेश्वर, मार्कंडेय जन्म, श्रीयाल की कथा, भल्लाणराजा की कथा, मल्लन्न कथा आदि हैं। इनमें कुछ पुराणों पर आधारित हैं तो कुछ भगवान शिव की भक्ति के महत्व को प्रदर्शित करने वाले हैं। शिव भक्तों (जिन्हें जंगम् भी कहते हैं) को कथाओं में बसवय्य कथा, कक्कय्य (एक भिश्ती) कथा, निजलिंग चिक्कय्य (एक चोर) कथा, सारंगधर की कथा आदि हैं।

15 वीं शती के गौरनामात्य द्वारा द्विपदा छन्द में रचित 'नवनाथ चरित्र' हिन्दी साहित्य के विद्यार्थी के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें मीनानाथ (मत्स्येंद्रनाथ ? सारंगधर, गोरक्षगाथ (गोरखनाथ ?) मेघनाथ, नागार्जुन, खणिकाख्य नाथ आदि नवनाथों की कथाएँ हैं।

जब जब धर्म की ग्लानि होती है तब तब अवतार लेने वाले भगवान विष्णु के माहात्म्य और विष्णु-भक्ति के प्राधान्य को घोषित करने वाले अनेक लोकगीत हैं। वरदराजु के विवाह-गीत, आण्डाल की कथा, तिरुमंत्रमुगीत, लक्ष्मी देवी वर्णन, चेंचीतकथा, रुक्मांगद महाराज की कथा, चिन्नम्म कथा, श्रीरंग महात्म्यमु, दशावतारगीत आदि वैष्णव-सम्प्रदाय संबंधी लोकगीतों में मुख्य हैं।

सगुण भक्तिपरक अन्य गीतों में संकीर्तन, पद, जागरण गीत, लोरियाँ आरतियाँ आदि हैं। निम्नोद्धृत लोरी आन्ध्रदेश में बहुत प्रचलित है।

'जो अच्युतानन्द जो जो मुकुन्दा, रारा परमानन्द रामगोविन्द जो जो
तोलुत ब्रह्माडंबु तोट्टि गोविची, नालुगु वेदमुलु गोलुसुलमरिंची
बलुवना फणिराजु पान्पूनमरिंची, चेलियडोलिकलोनचेर्चि लालिची····

(हे अच्युत ! हे मुकुन्द ! हे परमानन्दप्रद रामगोविन्द ! सोजा, सोजा। ब्रह्माण्ड को ही पालना बनाकर, चारों वेदों को उसकी साँकले बना, शेषनाग को ही बिछौना बनाकर, सखियों ने झूला झुलाया।)

स्त्रियों का स्वभाव है कि एक दूसरे को ताना देना और दूसरों से अपने को बड़ा सिद्ध करने का प्रयास करना। यह मनोवृत्ति 'लक्ष्मी-पार्वती-संवाद' में प्रभावशाली ढंग से चित्रित है जिसमें लक्ष्मी जी के आक्षेपों का समाधानकर पार्वती जी शिवजी की महानता और बडप्पन को सिद्ध करती हैं। गीत इस प्रकार है—

लक्ष्मी—गौरिदेव, नी शंभुनि गळमुन नलुपेमिटि ओ यम्मा ! नलुपेमिटे ओ कोम्मा !
पार्वती—नारीमणि, नी विष्णुदेवुडु नलुपुगाडटे कोम्मा ! नलुपु गाडटे

('ओ गौरी ! तुम्हारे शंभु का गला काला क्यों है ? तो पार्वती
कहती हैं कि तुम्हारे विष्णु का सारा शरीर ही काला है !)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लक्ष्मी—बिरुदुलेक नीमगडु जगमुलोभिक्षमेत्तुटेमम्मा, भिक्षमेत्तुटेमम्मा
पार्वती—बलमुलेकनु बलिचक्रवर्तिवि अडुगलेदटे कोम्मा, अडुगलेदटे कोम्मा
('बिना मान के तुम्हारा पति जग में भीख माँगता फिरता है।' 'तो क्या तुम्हारे पति ने बलि के सामने हाथ नहीं फैलाये ?')
लक्ष्मी—शंकलेकनु शंकरुकरमुन जिकयुंडुटेमम्मा, जिंकयुंडुटेम्मा
पार्वती—शंकलेकनु वनवासमुकेगुट जिक,
कोरकु सुमिकोम्मा, जिक-कोरकुमुमि कोम्मा
('बिना संकोच किये शंकर हाथ में हिरन क्यों लिये रहते हैं ?'
'बिना कभी हिचक के वनवास में हिरन के पीछे गये थे तुम्हारे पति।')
लक्ष्मी—हद्दुलेक नीमगडु सगमु आडुरूपमेम्मा, आडुरूपमेम्मा
पार्वती—मुद्दुगुम्म नी पेनिमिटि मुरहरि मोहिनिगाडाकोम्मा, मोहिनिगाडा कोम्मा
('तुम्हारे पति का आधा शरीर तो स्त्री बना हुआ है !'
'तुम्हारा पति तो पूरी तरह (स्त्री) बन गया था न !')
लक्ष्मी—चिंतलेक नी कान्तुडु ब्रह्मशिरनुद्रुंचुटेम्मा, शिरमुद्रुंचुटेमम्मा
पार्वती-पन्तमुतोडुत रावण ब्रह्म तल द्रुंचडा कोम्मा, तल द्रुंचडा कोम्मा
('बिना आगे पीछे सोचे तुम्हारे पति ने ब्रह्मा जी का सिर काट दिया न !'
'तुम्हारे पति ने जानबूझ रावण ब्रह्म का वध किया है न।!')
लक्ष्मी—पार्वति नीविभुनकु निलवुन पामुलन्नवेमम्मा, पामुलुन्नवेमम्मा
पार्वती-जलनिधितनय नीपेनिमिटि पन्नग शयनुडु गाडा, पन्नगशयनुडु गाडा
('ओ पर्वतपुत्री ! तुम्हारे पति के शरीर पर साँप लिपटे हुए हैं न !'
'ओ जलधिपुत्री ! तुम्हारा पति तो शेषशायी है न !')
लक्ष्मी—एमिलेक नी कान्तुडु मुसलिएद्दु एक्कुटेमम्मा, एद्दुएक्कु टेमम्मा
पार्वती—पन्तमु तोडुत रेपल्लेवाडलो पसुल गायडा कोम्मा, पसुल गायड़ा कोम्मा
('क्या कमी हुई जो तुम्हारा पति बूढ़े बैल पर चढ़ता है ?'
तुम्हारे पति को क्या हुआ जो रेपल्ले (ब्रज) में गाय चराता है।')

पहले बताया जा चुका है कि आन्ध्रदेश में अद्वैत दर्शन का अधिक प्रचार है। अभेदवाद को मानने वाले इन सन्तों की तुलना हिन्दी साहित्य के निर्गुण ज्ञानाश्रयी सन्तों से की जा सकती है। आन्ध्र के प्रसिद्ध सन्त वेमना को 'आन्ध्र का कबीर' मानते हैं।[1] वेदान्त और तात्त्विक विषयों के चिन्तन से भरे होने

1. आन्ध्र के कबीर-वेमना : श्री राममूर्ति 'रेणु'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के कारण, इन्हें 'तत्वमुलु' कहते हैं। तत्वों का प्रचार अधिकतर समाज की निम्न जातियों में पाया जाता है। इन तत्वों में सामाजिक ऊँच-नीच का खंडन पूजादि कर्मकाण्ड का तिरस्कार, गुरुभक्ति, वैराग्य आदि के साथ रहस्यवाद की झलक भी दिखाई है। पोतूलूरि वीर ब्रह्मम, वेमना, सिद्धप्पा, शेषाचल स्वामी, भोजदासु, एड्ल रामदासु, वेंकटदासु आदि कई सन्तों ने, इस प्रकार के तत्वों की रचना की है। इन सभी ने निर्गुण पंथी सन्तों की शैली में सनातनी पाखंड और अन्ध विश्वासों की कड़ी आलोचना करते हुए, शुद्ध अद्वैत भाव का उपदेश दिया है। इनमें से कुछ मुसलमान सन्त भी पाये जाते है। एक सन्त गाते हैं -

गूटिलो चिलुकेदिरन्ना, गूडुचिन्नबोयरन्ना'

(नीड़ का पंछी कहाँ ? पंछी के अभाव में नीड़ उदास बना हुआ है।)

इन तत्वों में आत्म बोधामृत तत्त्वमुलु, कलिप्रमाण तत्त्व कीर्तनलु, कालज्ञान-तत्त्वमु, ब्रह्मानन्द कीर्तनलु, ज्ञानबोधाध्यत्मलु आदि मुख्य हैं। तुम्मेद पदमुलु और एललु बहुत प्राचीन माने जाते हैं पर इन्हें ठीक-ठीक अर्थ में 'तत्त्वमुलु' नहीं माने जा सकते। इनमें कुछ उलटबाँसियों के ढंग पर भी रचे गये हैं, एक उदाहरण लीजिए—

'मेनलु मीदुग तललु क्रिन्दुग मोलचियुन्नदि वृक्षम्
मोदमलरग मिटि मीदनु मदगजमु विहरिंचेरा
चिदमिपट्टिन बंटु कैवडि चीम एनुगुमिगेरा
विर्रवीगुचु केक वेयुचु योग मंचमु मिंगेरा'

(एक वृक्ष उगा है जिसके डाल और पत्ते नीचे की ओर हैं तो जडें ऊपर की ओर हैं। प्रसन्न हो मस्त हाथी आकाश में विचर रहा है। बलवान सिपाही के समान चींटी हाथी को निगल गया। घमंड से ललकारते हुए मक्खी पलंग निगल गई)

इस उलट बाँसी में वृक्ष का अर्थ।

एक तुम्मेद पद लीजिये—

'शिवशिवयन मेलु तुम्मेदा, शिवुडंटेने विनमेलु तुम्मेदा
श्रीकंठुडनु पूवु तुम्मेदा, मूडु लोकम्मुलायेनु तुम्मेदा
साकारमै युंडु तुम्मेदा, परमैकान्तमुन जूडु तुम्मेदा
आरु रेकुल पूवु तुम्मेदा, अदिमीरुने वासनल तुम्मेदा
वेरु सेयक नीवु तुम्मेदा, शिवु जेरि भजियिंपवे तुम्मेदा
अष्टदलमुल मीद तुम्मेदा, नीवंटि चरियिंपवे तुम्मेदा'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(यहाँ 'तुम्मेदा' (भ्रमर) शब्द मन के लिए आया है। हे मन ! शिव का स्मरण कर, उसी में तेरी भलाई है। श्रीकंठ नामक एक पुष्प, तीन लोकों में परिवर्तित हो गया। वह साकार है, तू अपने मन में देखले। छ: पंखुड़ियों का एक पुष्प है, जिसमें अत्यन्त सुगन्ध है। इसलिये तू एकाग्र होकर शिव का भजन कर। अष्टदल कमल पर तू विचरण कर।)

इसमें छ: पंखुड़ियाँ षट्चक्र के लिए और अष्टदल, अष्टदल कमल के लिये आया है।

इसी प्रकार योग साधना में मन की उज्ज्वलता को दरसाने वाला एक 'एल' का उदाहरण लीजिये—

'सन्नंपू दिड्डिवाकिट पुन्नमा वेन्नेलवँटा—
किन्नेरालनादमिंटीरा-ओ यागंटिलिंगा-विनग विनग विन्तलायेनुरा
चिच्चुकड्डुपुन चीकटि बुट्टे-चीकटिकड्डुपुन चिच्चुबुट्टे
चिच्चु चीकटेकमैतेनू-ओ यागंटिलिंगा-चिन्नेलाडिबाल पुट्टेनू'

(तंग दरवाजे से बाहर की ओर, देख पूनम की चाँदनी फैली है। किन्नेराओं का नाद सुनते-सुनते आश्चर्य हो रहा है। ज्वालाओं में अन्धकार और अन्धकार में ज्वाला उत्पन्न हुई है। इस ज्वाला के और अन्धकार के एकमेकम होने से, सोलहों कलाओं वाली बाला पैदा हुई है।)

कर्मकांड पर स्त्रियों की अधिक भक्ति श्रद्धा होती है। इस शाखा में स्त्रियों से संबंधित व्रत, त्यौहार आदि से संबंधित गीत हैं, जो अधिकतर कथा रूप में (गद्य-काव्य की शैली में) प्रवाहयुक्त संगीतमयी भाषा में हैं। इनमें मदनद्वादशीव्रतमु, नित्यदानव्रत, पसुपुगौरी नोमु, मूसि वायनमुल नोमु, वरलक्ष्मी पाट (गीत), सावित्री-गौरीदेवी पाट (गीत), शुक्रवारसेव पाट, लक्षवत्तुल नोमुपाट, श्रावणशुक्रवारमुनोमु आदि हैं।

इस प्रकार ग्रामीणों ने मुक्ति साधना के लिये भक्ति, ज्ञान, कर्ममार्गों से संबंधित साहित्य को रच लिया है।

स्त्रियों के गीत :

जीवन के पारिवारिक पहलू में स्त्री का स्थान अधिक महत्वपूर्ण है। अत: पारिवारिक-जीवन संबंधी गीतों का सम्बन्ध भी स्त्रियों से ही है। इस शाखा के लोक-गीतों को 'स्त्रियों के लोक गीत' कहते हैं।

स्त्रीत्व की सफलता मातृत्व में ही है। मातृत्व और वत्सल रस को आधार बनाकर लिखे गये गीतों की संख्या बहुत ज्यादा है। इन गीतों में सन्तान-प्राप्ति के लिये नारी के हृदय की उत्कट अभिलाषा, तत्प्राप्ति के लिये किये जाने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वाले अनेक व्रतों-पूजाओं के वर्णन के साथ, लोरियों बालक्रीड़ाओं का समावेश भी होता है। माता अपनी सन्तान को राम या कृष्ण के रूप में या सीता या पार्वती के रूप में देखती है और हर्षपुलकित होती है।

वैवाहिक कार्यक्रम को आधार बनाकर रचे गये गीतों की संख्या कम नहीं है। दहेज से लेकर बिदाई तक होने वाले प्रत्येक कार्य के समय गाये गाने वाले गीत हैं। ससुराल जाने वाली वधू को उपदेश देने वाले गीत भी हैं जिनमें सास-ससुर, ननद-जेठ, देवर, पड़ोस के लोग-लुगाई इत्यादि से समुचित रूप से पेश आने की शिक्षा दी गई है।

'सास के कठोर कार्य, निर्दय-व्यवहार, बहुओं को ताने, ननदों के घातक कृत्य आदि का वर्णन करने वाले गीत हैं जिनमें करुण रस की झलक दिखाई पड़ती है। स्त्रियों के गीतों की विशेषता है कि इनमें सामाजिक जीवन का समग्र रूप, सामाजिक रीति-रिवाजों का ब्योरेवार विवरण आदि सुचारु रूप से परिलक्षित हो सकते हैं। जन्म-मरण, त्यौहार-उत्सव, शादी-ब्याह, आदर-सत्कार तिरस्कार, आशा-निराशा आदि सभी स्त्रियों के गीतों के विषय बने हुए हैं।

मनोरम भाव, ललितललित शब्द, सुकोमल शैली में रची लोरियों में मातृत्व का निचोड़ भरा हुआ है। माता अपने लाड़ले का वर्णन कर रही है—

पापायि कन्नुलु कलुवरेकुल्लु पापायि जुंपालु पट्टुलकुचुल्लु
पापायि दन्तालु मंचि मुत्यालु, पापायि चेतुलु पोट्लकायलु
पापायि पलुकुलु पंचदार चिलकल्लु, पापायि चिन्नेलु बालकृष्ण वन्नेल्लु

× × ×

वीथिनेंदरु वुन्न विसरद गालि, रच्चनेन्दरु वुन्न रादम्म वाना
चिन्न ना अब्बायि वीथिनिलुचुंटे, मोगिलिपुव्वुल गालि मुत्याल वाना

(मेरे लाड़ले की आँखें कमल की पंखड़ियाँ हैं, उसके जुल्फ रेशम के से हैं, उसके दाँत खरे मोती हैं, हाथ खीरे से हैं, उसकी बोली शक्कर के तोलों सी है, क्रीड़ाएँ बालकृष्ण की सी हैं, × × × सड़क पर कितने भी लोग रहें, हवा नहीं चलती, आँगन में कितने भी जमा हों वर्षा नहीं होती पर मेरा नन्हा सड़क पर आ जाय तो केतकी की हवा और मोतियों की वर्षा होती है।)

सास और बहू का सवाद सुनिये :—

अत्त :—कोडला ! कोडला ! कोडुकु पेळ्लामा, पच्चिपाल मीदि मीगडालेवि ?
वेडिपाल मीदि वेन्नलु येवी ? नूने मुन्तलमीदि नुरुगुल्लु येवि ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(सास कहती है :—ओ बहू ! मेरे लड़के की औरत ! कच्चे दूध पर मलाई कहाँ गई है ! गरम दूध पर मक्खन कहाँ गया है ? तेल के घड़े में फेन कहाँ है ?)

कोडलु :—अत्तरो ओ यत्तआरल्लयत्त, पच्चिपाल मीद मीग डुन्टुदा ?
वेडिपाल मीद वेन्नल्लुंटाया, नूने मुन्तल मीद नुरगलुंटाया

(बहू जवाब देती है: ओ सास ! पीड़ित करने वाली सास ! कच्चे दूध पर कहीं मलाई होती है ? गरम दूध पर कहीं मक्खन होता है ? तेल के घड़े में कहीं फेन होता है ।)

इस प्रकार के सास-बहू-संवाद बहुतायत से मिलते हैं । इन्हीं को लक्ष्य में रखकर एक कहावत भी चल पड़ी है कि 'अत्तलेनिकोडलुत्तमुरालु, कोडलुलेनि यत्त गुणपन्तुरालु ।' (सास के बिना बहू उत्तम स्त्री है तो बहू के बिना सास गुणवती है ।)

सुखपूर्ण समष्टि परिवार के सुन्दर चित्र को अंकित करने वाला निम्नगीत बहुत प्रचलित है । इस गीत में आन्ध्र के समष्टि कुटुम्ब की सुन्दर झाँकी देखने को मिलती है ।

कलवारि कोडलु कलिकि कामाक्षि, कडुगुचुन्नदि पप्पु कडवलो बोसि
अप्पुडे वच्चाडु आमे पेद्दन्न, काल्लिकु नीळ्लिच्चि कन्नीरुनिंपे

(सम्पन्न गृह की बहू कामाक्षी, घड़े में डाल दाल धो रही है । उसी समय उसका बड़ा भाई आया । पैर धोने के लिये पानी देकर, उसने आँखों में आँसू भरे ।)

अन्न: एन्दुकू कन्नीरु ? एमिकष्टालु ? तुडुचुको, चेल्लेला मुडुचुको कुरुलु
पेट्टुको सोम्मुलु कट्टु को चीरे, एत्तुको बिड्डनु एक्कु अन्दलमु
चेरि मी यत्तमामलकु चेप्पिरावम्म ।

(भाई ने कहा आंखों में आँसू क्यों ? क्या कष्ट है तुम्हें ? पोंछ लो आँसू, केश गून्थ लो, जेवर पहन लो, साड़ी पहन लो और बच्चे को गोद लेकर, गाड़ी पर चढ़ो, अपने सास-ससुर की अनुमति ले लो ?

कोडलु :—कुर्चिपीट मीद कूर्चून्न अत्त, मायन्नलोच्चारु मम्मंपुतार ?

(बहू सास से पूछ रही है: ओ तिपाई पर बैठी सास ! हमारे भाई आये हैं, हमें भेजेंगे क्या ?)

अन्न :—नेनेरुग नेनेरुग, मी मामा नडुगु

(सास ने कहा : मुझे नहीं मालूम, अपने ससुर से पूछ लो ।)

कोडलु: पट्टेमंचमुमीद पडुकोन्न माम ! मायन्नलोच्चारु मम्मंपुतार ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(बहू ससुर से पूछ रही है: सुन्दर पलंग पर लेटे ससुर जी ! हमारे भाई आये हैं, हमें भेजेंगे ?)

ससुर: नेनेरुग नेनेरुग मी बाव नड्डुगु

(ससुर ने कहा :—मुझे नहीं मालूम, अपने जेठ से पूछ लो !)

को: भारतं चदिवेटि बाव पेदबाव, मा यन्नलोच्चारु, मम्मंपुतार !

(बहू जेठ से पूछ रही है: 'महाभारत का अध्ययन करने वाले ओ जेठ ! हमारे भाई आये हैं। हमें भेजेंगे क्या ?)

बाव: नेनेरुग नेनेरुग मीयक्क नड्डुगु

(जेठ ने कहा :—मुझे नहीं मालूम, अपनी बहन से पूछ लो।)

को: वंटलुजेसेटि ओ यक्क गारू ! मा यन्नलोच्चेरु मम्मंपुतार ?

(बहू जेठानी से पूछ रही है :—भोजन बनाने वाली ओ बहन ! हमारे भाई आये हैं, हमें भेजेंगे ?)

तोडिकोडलु: नेनेरुग नेनेरुग नी भर्त नड्डुगु

(जेठानी ने कहा: मुझे मालूम नहीं। अपने पति से पूछ लो।)

को: रच्चलो कूर्चून्न राजेंद्र भोगी ! मायन्नलोच्चेरु, मम्मंपुतार।

(बहू पति से पूछ रही है: सड़क पर चबूतरे पर बैठे राजेंद्र भोगी ! हमारे भाई आये हैं, हमें भेजेंगे ?)

भर्त: पेट्टुको सोम्मुलु कट्टुको चीरे, पोयिरा सुखमुगा पुट्टिटिनिंटिकि

(पति ने कहा : जेवर पहन लो, साड़ी पहन लो और सुख से मायके जाकर आओ।)

को: इरुगुपोरुगुलार ओ अम्मलार, चेल्लेक्क पेक्किल्लु सेविंचबोइ
मरदुल पेक्किक्ककि मरलिवच्चेनु, इरुगक्क पोरुगक्क इदे पोयिक्तु।

(बहू पड़ोसिनों से कह रही है : ओ पड़ोसिनो ! बहनों की शादियों के लिये जाकर देवरों की शादियों में वापस आऊँगी। अपने मायके हो आऊँगी, अनुमति दीजिये।)

श्रामिक गीत

शारीरिक श्रम करते समय थकावट को दूर करने के लिये या कार्यभार को हलका करने के लिये कुछ गुनगुना लेना मनुष्य का स्वभाव है। ऐसे गीतों का प्रवाह या गति, किये जाने वाले काम के अनुरूप होता है। इस प्रकार के गीतों को 'श्रामिक गेय' (श्रम करने वालों के गीत) कहते हैं। अपने पेशे से संबंध रखने वाली वस्तु को या किसी श्रृंगारिक या कारुणिक कथा को या भक्ति भाव को लिये होते हैं ये गीत। इन गीतों में कभी-कभी श्रृंगार रस-की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभिव्यक्ति बड़ी निम्नस्तर की हो जाती है। कभी-कभी गाली-गलौज की हद तक पहुँच जाती है। इन गीतों में हाथ-पैर के संचालन की विशेष गति ही उनमें ताल और लय को उत्पन्न करती है।

मल्लाहों के गीत इस प्रकार के होते हैं।

गंगम्म तल्लिकि चेंगलव पूदंड-कालिंदिकि तेल्ल कलवदंड
जोरसेयि बारसेयि-जोरसेयि बारसेयि
गोदावरि तल्लिकि गोज्जंगि पूदंड-सरसोति की सन्नजाजिदंड
जोरसेयि बारसेयि-जोरसेयि बारसेयि

(गंगा माई को लाल कमलों का हार, कालिंदी को श्वेत कमलों का हार, गोदावरी को गुलाबों का हार, सरस्वती को चमेलियों का हार,)

इस प्रकार सभी नदियों को फूल-मालाएँ अर्पित करते हुए, प्रत्येक चरण के बाद 'जोरसेयि बारसेयि' दुहारते हैं जो पतवारों के संचालन की गति के अनुकूल पड़ता है।

चरखे के गीत, अनाज कूटते समय के गीत, पानी निकालते समय के गीत, खेत निराते समय के गीत इत्यादि श्रामिक गीत हैं। प्रत्येक पेशे से संबंधित कई गीत मिलते हैं। असाढ़े गीत और रसिया गीतों के समान ही आषाढ़ में और अनाज बोते समय गाये जाने वाले गीत भी पाये जाते हैं।

बच्चों के गीत

"शिशुर्वेत्ति, फणिर्वेत्ति" की उक्ति के अनुसार बच्चों के लिये संगीत (Music) और गीत का विशेष आकर्षण है। बच्चों के गीतों के दो प्रकार हैं। एक तो जो खास बच्चों के लिये लिखे गये हैं और दूसरे वे जो बच्चों द्वारा बनाए गये हैं। पहले प्रकार की रचनाओं में लोरियाँ और कथात्मक गीत आते हैं। छोटे बच्चे लोरी का अर्थ तो समझ नहीं पाते पर उनका संगीत उन्हें निद्रामग्न कर देता है। बच्चों के अन्न खिलाते समय चंदमामा को बुलाने वाले गीत, उनके तालियाँ बजाते समय के गीत, चलते समय के गीत आदि में माता अपने बच्चों को प्रोत्साहित करती हुई, उनकी सफलता पर अपना आनन्द व्यक्त करती है। कथात्मक गीत भी इसी वर्ग में किये जा सकते हैं।

दूसरे प्रकार के गीतों में खेलकूद के गीत, दशहरे के गीत, संक्रान्ति के गीत आदि हैं।

बच्चों के गीतों की मुख्य विशेषताएँ अक्षरमैत्री, भाव सौंदर्य और उनकी सहज धारा, प्रवाहमयी शैली है।

अब कुछ ऐसे गीतों को लेंगे जो फुटकल है और किसी एक विशेष रस की अभिव्यक्ति करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शृंगारिक गीत

लोकगीतों में व्यंग्य रूप और वाच्य रूप में शृंगार रस से युक्त अनेक गीत हैं। लोकसाहित्य का प्रेम नैसर्गिक है, अबाध है और है अदम्य। उन गीतों के नायक-नायिका शाश्वत यौवन से संपन्न और नितनूतन प्रेम से भरे दीखते हैं। इन गीतों में ग्रामीणों के प्रेमालाप, सामाजिक प्रथाओं का उल्लंघन (प्रेम के लिये), परस्पर प्रेम और आकर्षण बड़े ही सहज-स्वभाविक-रूप में चित्रित हैं। इनमें प्रेम और जीवन अपने यथार्थ रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। पौराणिक व ऐतिहासिक गीतों में जो शृंगार रस पूर्ण सन्निवेश है, उन्हें छोड़कर अन्य रचनाओं का परिचय यहाँ दिया जायगा।

शृंगार रस प्रधान गीतों में चल मोहन रंगा, वेंकय्या चन्द्रम्मा पाट, नारायणम्म पाट, गोंगूर पाट, सिरिसिरिमुव्व आदि खूब प्रचलित हैं।

"चलमोहन रंगा" का कुछ अंश लीजिये—

कंटिकि काटुका बेट्टि, कड़वा चंकानु बेट्टि, कक्कुनीक्कु कड़वा निड़ेनु गदरा
॥ चलमोहन रंगा ॥

नाकू नावारू लेरु नीकुनी वारु लेरू, एटि ओड्डुन इल्लु कड़दाम पदरा
॥ चलमोहन रंगा ॥

(नायिका कह रही है कि आँखों में काजल लगाकर, घड़ा बगल में दबाकर, जब मैं पानी भरने चली, तो मेरी आँखों के पानी से ही घड़ा भर गया। मेरा अपना कोई नहीं और न तेरा कोई है। तब चल नदी के किनारे बसेरा कर लें।)

नायक में ईर्ष्या को पैदा कर, उसे अपनी ओर आकर्षित करने वाली चतुर नायिका का उक्ति-चमत्कार देखिये—

नायिका: ओकरिकि चेतुलिच्चान्, ओकरिकि काल्लनिच्चान्,
ओकरिनि चेतोवट्टि कूकुन्नानोई बावा! कूकुन्नानोई।'

(किसी को हाथ दिये, और किसी को पैर दिये। और किसी एक को हाथ में लिये बैठी रही।)

नायक: 'एवरिकि चेतुलिंच्चाव् एवरिकि काल्लनिच्चान्
एवरीनि चेतबट्टि कूकुन्नावे पिल्ला! कूकुन्नावे।'

(किसी को हाथ दिये और किसी को पैर दिये? ऐ छोकरी! बोल, किस को हाथ में लिये बैठी रही?) तब नायिका उसकी ईर्ष्या को एकदम शान्त करते हुए, अपने वाक्-चातुर्य का प्रदर्शन करती है।

'गाजुलकि चेतुलिच्चान्, कड़ियालकि काल्लनिच्चान्
डब्बुलिन चेतबट्टि कूकुन्नानोई बावा! कूकुन्नानोइ।'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(चूड़ियों को हाथ दिये और नूपुरों को पैर। हाथ में पैर लेकर (तेरी बाट जोहती) बैठी रही।)

इस प्रकार के स्त्री-पुरुष के ध्वनि प्रधान संवादात्मक गीतों को 'तिल्लाले' कहते हैं शायद वह शब्द 'तिल्लाना' का अपभ्रंश रूप हो।

अद्‌भुतरसात्मक गीत

ग्रामीणों में ही क्या मानव स्वभाव में ही विचित्रता और अद्‌भुत रस के प्रति आकर्षण एवं जिज्ञासा पाई जाती है। किसी भी साहित्य में लीजिये, प्रारंभ में ऐयारी तथा जासूसी उपन्यासों का अस्तित्व देखा जा सकता है।

साधारण विषयों को लेकर भी अलौकिक व अद्‌भुत कल्पनाओं का समावेश कर कई कथात्मक गीत रचे गये हैं। इनके रचयिताओं के कल्पना-चातुर्य की सराहना करते ही बनता है। मनुष्य आशाजीवी है। जीवन के अंधकारमय मार्ग में, वह आशा की ज्योति के सहारे आगे बढ़ता है। दुस्सह वेदना में या असंभव वस्तु की आशा में, किसी अलौकिक दैवी शक्ति का या मान्त्रिक की उपस्थिति से उलझन को सुलझा दिया जाता है और कथा के नायक से साधारणीकरण का अनुभव करने वाले श्रोता का हृदय सन्तोष व प्रसन्नता से भर जाता है।

अद्‌भुत रसात्मक गीतों में 'बालनागम्म कथा' का विशेष प्रचार है। इस कथा का संबंध महबूब नगर जिले के पानगल्लु नामक राज्य से जोड़ा जाता है। किसी मान्त्रिक के जाल में फँसे हुए पिता, चाचा, अन्य, राजा अपनी माता की रक्षा करने वाले बालवर्द्धि राजा की कथा है इस गीत में। 'गान्धारी कथा', 'धर्मांगदपामुपाट', 'कांभोजराजु कथा', 'पसल बालराजु कथा,' 'चिन्नम्म कथा' आदि अन्य कथाएँ हैं। इन सबमें तान्त्रिक विधानों की प्रधानता है। ये सब कथाएँ आदर्शात्मक हैं। अद्‌भुत रसानुभूति और आदर्शात्मकता के कारण, ये कथाएँ पामर जनों में भक्ति-श्रद्धा के भावों को उत्पन्न कर सत्य और धर्म की विजय की घोषणा करती हैं।

करुण रसात्मक गीत

श्रृंगार और अद्‌भुत रस के बाद करुणरसात्मक गीतों का स्थान आता है। दैनिक जीवन में दुःख की मात्रा ही अधिक दिखाई पड़ती है, अतः ये कथाएँ बड़ी ही हृदयद्रावक मर्मस्पर्शी बन पड़ी हैं। इनमें किसी व्यक्ति के शौर्य व साहस के प्रति उत्साह और उसकी अकाल मृत्यु पर शोक आदि मुख्य विषय हैं।

सास के सताने पर या पति के अत्याचार से पीड़ित होकर या ननदों या पड़ोसिनों के कुकृत्यों के संत्रस्त होकर आत्महत्या करने वाली नारियों की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कथाएँ, अपनी लाज की रक्षा में काली का रूप धारण कर मरने वाली हुतात्माओं की कथाएँ, और दुर्विधि के कारण विपत्तियों के समुद्र में डूबने वाली ललनाओं की करुण गाथाएँ, आंसुओं से डूबी वाणी में निबद्ध हैं।

कामम्म कथा, लक्ष्मम्म कथा, सन्यासम्म कथा, वीर राजम्म कथा ऐसे ही करुण रस प्रधान गीत हैं।

हास्य रसात्मक गीत

अब अन्त में हास्य रसात्मक गीतों की भी एक झाँकी लें। पौराणिक, ऐतिहासिक तथा धार्मिक गेयों में कहीं कहीं हास्य का पुट दिखाई देता है जैसे ऋष्यशृंग का वर्णन, कुंभकर्ण की निद्रा, वैवाहिक गीत आदि। केवल हास्य गीत बहुत कम हैं। कुछ गीतों में कोमल हास्य है तो कुछ में असभ्यता की हद तक पहुँच गई है। ये हास्य गीत उक्ति वैचित्र्य (Wit) और हास्योत्पादक पात्रों द्वारा ग्रामीणों के जीवन में सरसता व सुख का संचार करती हैं। कुछ अधिक्षेप गीत (Parody) भी मिलते हैं।

गाने वाली जातियाँ

आन्ध्र देश में, इन लोकगीतों को गाने वाली कुछ विशिष्ट जातियाँ हैं। लोक गीतों को सुनाते हुए देश में भ्रमण करते हुए, ये लोग अपना पेट पालते हैं। यों कहें तो ठीक होगा कि लोकगीतों को गाते फिरना ही इनका पेशा है पिच्चुकगुन्टुलु, शारदाकाँड्रू, वीरमुष्टुलु, जंगमुलु, दालरलु, भागवतुलु, वीरन्नलवारु, सुद्दुलु, गोल्ललु, गंगिरेद्दुलवारु, बुड़बुड़कल वारु, बवनीलु, जबकुलु, बोम्मलाटगाँड्रु आदि इनमें से कुछ के नाम हैं।

तेलुगु के देशी छन्द लय प्रधान मात्रागण बद्ध हैं। इस प्रकार की रचनाएँ तमिल, मलयालम और कन्नड़ में पाई जाती है। तमिल के ओरुड़मोनै, कूरैमोनै, तोड़ै आदि और कन्नड़ के भामिनिषट्पदी, भोगषट्पदी, वार्धिकषट्पदी, ललित, मन्दानिल आदि के समान ही तेलुगु में भी द्विपदा रगड़, मध्यावकर, आदि हैं। ये गीत साधारणतः तीन, चार, पाँच, छः, सात या आठ मात्राओं की आवृत्ति पर बनते हैं। त्रिश्र (तकि टः तीन मात्राएँ) चतुरश्र (कि ट त कः चार मात्राएँ), खंडगति (त कि ट कि टः पाँच मात्राएँ) मिश्रगति (त क कि ट तकः छः मात्राएँ या ताकि ट किटतकः सात मात्राएँ या किटतक किटतकः आठ मात्राएँ) आदि मात्राओं की आवृत्ति और गति के अनुसार लिखे जाते हैं ये गीत।

लोकगीतों के अध्ययन का महत्व :

लोकगीतों के अध्ययन से पता चलेगा कि भाव और कला की दृष्टि से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ये गीत परिष्कृत साहित्य से किसी भी तरह निम्नस्तर के नहीं हैं। अज्ञात शिल्प, अज्ञात कला और सहज निसर्ग रमणीयता को लेकर ये गीत बरबस हमारे हृदय को प्रभावित करते हैं। मेथ्यू अरनाल्ड के कथन के अनुसार (It comes from the heart, hence it touches the heart) ये गीत बड़े ही मर्मस्पर्शी होते हैं।

लोकसाहित्य में यद्यपि ऐतिहासिक व सामाजिक व्यवस्थाओं की स्पष्ट छाप रहती है, मौखिक प्रचार से ही जीवित रहने के कारण, वे इतने अस्पष्ट व परिवर्तित हो गये हैं कि मूल का पता लगाना दूभर हो जाता है। समाज में फैली रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, रीति-रिवाजों, शकुन और अपशकुन के विचार, वेष-भूषाओं, वाद्य और मनोरंजनों, घर की सजावट, दवाइयों, कलाओं और पेशों आदि का उल्लेख यदाकदा होता है। किसी जाति के सामाजिक इतिहास को लिखने वालों के लिये लोकसाहित्य अमूल्य साधन संपत्ति है। भाषा-विज्ञानियों के लिये भाषा के तत्व या प्रकृति का ज्ञान प्राप्त कराने में लोक-साहित्य यथेष्ट सहायता प्रदान कर सकता है। पंडित और समालोचक इन गीतों के भाव पक्ष व कला पक्ष का विवेचन कर उनका साहित्यिक मूल्यांकन कर सकते हैं। लेखक लोकसाहित्य में उपलब्ध कथावस्तुओं को लेकर, सुन्दर काव्य-कृतियों से माता-सरस्वती की अर्चना कर सकते हैं। इस प्रकार लोक-साहित्य का अध्ययन अनेक दृष्टियों से उपादेय है।

उपसंहार :

प्रस्तुत लेख, बड़े संक्षेप में तेलुगु लोकगीतसाहित्य का परिचय कराने का प्रयास-मात्र है। तेलुगु के लोकसाहित्य के अनन्त-सागर में यह एक बूंद के समान है। यदि इस परिचयात्मक लेख द्वारा श्री देवेन्द्र सत्यार्थी के निम्नलिखित शब्दों की पुष्टि हो जाय तो लेखक का परिश्रम सफल है। "समस्त भारत एक है। भारतीय लोकगीत अपनी अनेक शैलियों सहित इस तथ्य का समर्थन करते है।[1] × × ×

---

1. धरती गाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु भाषा और उसका साहित्य

'आन्ध्र', 'तेलुगु', 'तेनुगु' नामों से अभिहित भाषा एक ही है। यह भाषा संस्कृत-प्राकृत-जन्य है या द्रविड़ परिवार से सम्बद्ध, इस पर विद्वानों में काफी मतभेद रहा है और अब भी है। अधिकांश विद्वानों का मत तेलुगु भाषा को मूल द्रविड़ परिवार से संबद्ध, मातृ-परिवार से अन्य भाषाओं की अपेक्षा दूरीकृत और संस्कृत-प्राकृत से अत्यधिक प्रभावित मानने की ओर है। परन्तु ऐसा कब हुआ और तदुपरान्त विकास का क्रम कैसा रहा, इन बातों का परिचय प्राप्त करने के लिये साधन नहीं के बराबर है। 11 वीं शती तक की कोई लिपिबद्ध रचना नहीं मिलती है। परन्तु कुछ लोकगीतों द्वारा तेलुगु भाषा के स्वरूप का थोड़ा-बहुत परिचय मिलता है।

ईसा की छठी शती के अन्तिम दशकों में तेलुगु में लिखा गया एकाध शिलालेख मिलता है। उस युग की संस्कृत एवं प्राकृत गाथाओं में प्रयुक्त कुछ तेलुगु शब्द भाषा के विकास-परिणाम पर कुछ प्रकाश डालते हैं। इन प्रमाणों द्वारा कुछ तेलुगु विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों में ही यह भाषा लोक-व्यवहार का साधन बनी हुई थी।

अध्ययन की सुविधा के लिये तेलुगु साहित्य को छः युगों में विभाजित किया जाता है। (1) अज्ञात युग या प्राङ्नन्नय युग (2) पुराण युग या अनुवाद युग (3) काव्य युग या श्रीनाथ युग (4) प्रबन्ध युग या रायलु युग (5) दक्षिणान्ध्र युग (6) आधुनिक युग। यह विभाजन काल के अनुसार या विशिष्ट काव्य शैलियों के आधार पर किया गया है।

प्राङ्नन्नय युग (सन् 1030 से पूर्व) :

आदि कवि नन्नयभट्ट से पूर्व के तेलुगु भाषा और साहित्य के स्वरूप का प्रमाणित आधार उपलब्ध न होने के कारण इस युग को 'अज्ञात युग' कहते हैं। इस अज्ञात युग की भाषा और साहित्य पर प्रधान रूप से (एकैक रूप से भी) प्रकाश डालने वाले साधन हैं उपलब्ध शिलालेख और लोकगीत, जो परवर्ती कवियों से उल्लिखित है। शिलालेख साहित्य का कम पर भाषा और देशी छन्द के स्वरूप का ही अधिक ज्ञान कराते हैं।[1] इनमें ग्रामों के नाम प्रति

---

1. ये शिलालेख प्राकृत और संस्कृत को राजभाषा मानने वाले सातवाहन, इक्ष्वाकु, बृहत्फलायन, विष्णुकुंडिन आदि राजवंशों के समय के हैं। चालुक्यों के समय से ही (7 वीं शती) तेलुगु को आदर प्राप्त हो सका है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ग्रहीताओं के नाम, कुछ शब्द, प्रत्यय, ध्वनियाँ और लिपिचिह्न-मात्र परिलक्षित होते हैं जिनका सम्बन्ध द्रविड़ परिवार से और विशेषकर तेलुगु से जोड़ा जाता है। ईसा की छठी शती के बाद रेनाटि चोल राजाओं और पूर्वी चालुक्य राजाओं द्वारा खुदवाये गये शिलालेखों में तेलुगु भाषा का स्वरूप स्पष्ट बन गया। ये शिलालेख ही तेलुगु भाषा के लिखित रूप के सर्वप्रथम प्रमाण हैं। इनमें कुछ केवल गद्य में हैं तो कुछ पद्य में; और कुछ गद्यपद्य मिश्रित हैं। इस प्रकार इन शिलालेखों के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि इनमें पहले-पहल कुछ तेलुगु नाम और शब्द और बाद में तेलुगु वाक्यों ने स्थान प्राप्त कर लिया और अन्त में पूरा शिलालेख ही तेलुगु में लिखा जाने लगा। पद्यमय शिलालेखों में कुछ देशी छन्दों का भी प्रयोग हुआ है। देशी कविता या लोकगीत तो उपलब्ध नहीं हैं पर परवर्ती कवियों के उल्लेखों द्वारा यह निश्चय किया जा सकता है कि कुछ विशिष्ट लोकगीत प्रचार में थे।

अज्ञात युग में उपलब्ध सामग्री भाषा-विज्ञान के क्षेत्र की है। विषय प्रधान शिलालेख और संदिग्ध लोकगीत साहित्य के इतिहास में विशेष योग नहीं देते।

पुराण या अनुवाद युग (सन् 1030—1400 तक) :

आदि कवि[1] नन्नय के बाद लगभग तीन शतियों तक कई कवियों ने संस्कृत के पुराणों और इतिहासों का अनुवाद किया है। शैव कवियों ने यद्यपि कुछ मौलिक काव्यों की रचना की है तथापि इनकी अधिकांश रचनाएँ अनूदित ही हैं। अतः इस युग को 'अनुवाद-युग' कहा जाता है। इस युग में पुराणों का अनुवाद अधिक हुआ है अतः इसे 'पुराण-युग' भी कहते हैं।

गोदावरी तीरस्थ राजमहेंद्री को राजधानी बनाकर, आन्ध्र देश पर राज्य करनेवाले पूर्व-चालुक्य वंशीय राजा राजराजनरेंद्र (1012-1063) की सभा में नन्नय भट्ट नामक एक महापुरुष थे। ये राजवंश के कुल-गुरु थे। साधु स्वभाववाले और वैदिक धर्म में निष्णात इस महापुरुष ने वैदिक धर्म के प्रचार के लिए, 'पंचमवेद' महाभारत के अनुवाद कार्य को सम्भाला। नन्नय ने अपनी पूर्ववर्ती भाषा एवं काव्य-रचना शैली को सुव्यवस्थित रूप देकर 'आन्ध्र-वागनुशासक' की उपाधि को सार्थक बनाया। 'जन सामान्य में प्रचलित सभी

1. सुव्यवस्थित भाषा में (जो आजतक स्टैंडर्ड माना जाता है) 'देशी' और 'मार्ग शैलियों' में एक उदात्त महाकाव्य रचना करने से नन्नय 'आदि कवि' कहलाए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दों का अनुशीलन एवं परिष्कार कर, संस्कृत शब्दों को तेलुगु में प्रयोग करने की एक सुनिश्चित पद्धति का निर्देश कर, धारा युक्त संस्कृत वर्णवृत्तों को अपनाकर, उस समय तक ही उत्तम काव्य ग्रन्थों से सम्पन्न कन्नड़-साहित्य से समुचित प्रभाव ग्रहण कर, नन्नय ने तेलुगु में उत्तम काव्य रचना का मार्ग प्रशस्त किया। (डा. दिवाकर्ल वेंकटावधानी।)

अपने प्रभु और मित्र राजराज की प्रेरणा से, महाभारत के ढाई पर्व तक ही रचना कर पाए कि काल पुरुष ने इनकी लेखनी रोक दी। अरण्य पर्व में 142 वाँ पद्य जो नन्नय का अन्तिम पद्य माना जाता है, इस प्रकार है—

"शारद रात्रुलुज्ज्वल लसत्तर तारक हार पंक्तुलन्
जारुतरंबुलय्ये विकसन्नव कैरव गंध बन्धुरो
दार समीर सौरभमुदाल्चि सुधांशु विकीर्यमाण
कर्पूर पराग पांडुरुचिपूरमुलं बरिपूरितंबुलय्ये।"

(शरद् ऋतुकी रातें उज्ज्वल और श्रेष्ठ तारक-हार पंक्तियों से सुन्दरतर हुई। नवविकसित कैरव पुष्पों की सुगन्ध से भारान्वित होने वाले समीर के सौरभ से और चन्द्र के बिखरे किरण रूपी कर्पूर-पराग की श्वेत-रुचियों से परिपूर्ण बनीं वे रातें।)

नन्नय की रचना का दृष्टिकोण काव्य परक है और उनके अनुवाद की शैली स्वच्छन्द है। अतः उन्होंने मूल इतिवृत्त को काव्य-रचना के अनुकूल कहीं घटाकर कहीं बढ़ाकर, औचित्य की दृष्टि से कुछ परिवर्तन कर, मौलिक काव्य के रूप में प्रस्तुत किया है। नन्नय की कविता 'प्रसन्न-कथा-कलितार्थ युक्ति', 'अक्षर-रम्यता' 'नाना रुचिरार्थ सूक्ति' आदि विशिष्टताओं से सम्पन्न तथा संस्कृत-समास-बहुला होने पर भी अनव्य-सुलभ होकर, परवर्ती कवियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुई। वचन (गद्य)[1] रचना में भी नन्नय की शैली आदर्श है। 'नर के लिए नारायण के समान' नन्नय के सहयोगी नारायण भट्टु नामक एक उद्भट पंडित थे।

'चामुंडिका विलास', 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि', 'इन्द्र विजय', 'लक्ष्मण-सार' आदि ग्रन्थ भी नन्नय के लिखे माने जाते हैं। 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि' तेलुगु का पहला व्याकरण है जिसमें संस्कृत सूत्रों में तेलुगु के व्याकरण नियमों का विवरण है। पर नन्नय की कीर्ति का वास्तविक मूल तो महाभारत की रचना ही है।

---

1. तेलुगु के काव्यों में प्रारम्भ से ही प्रवाह युक्त वचन-रचना होती थी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजराजनरेंद्र की मृत्यु के बाद देश की राजनैतिक और धार्मिक परिस्थितियों के कारण 'महाभारत' की पूर्ति का कार्य रुका-सा रहा। रचनाओं के न मिलने पर भी इस समय एक प्रसिद्ध कवि हैं वेमुलवाड़ भीम कवि। प्राप्त मुक्तकों से ही प्रतीत होता है कि ये बड़े ही पंडित, कवि और शापानुग्रह समर्थ थे। पावुलूरि मल्लन ने संस्कृत में वीराचार्य द्वारा लिखे गए गणित शास्त्र का पद्यानुवाद किया है।

नन्नय के लगभग डेढ़ सौ साल बाद कवि ब्रह्मा तिक्कन ने (1210-12·0) विराट-पर्व से लेकर शेष 15 पर्वों की रचना की। तिक्कन ने पहले 'निर्वचनोत्तर रामायण' की रचना की, तदुपरान्त यज्ञकर सोमयाजि बने। तब 'हरिहर-अद्वैत-भाव' को प्रतिपादित करते हुए, महाभारत की रचना कर उसे आपने इष्ट भगवान हरिहरनाथ को ही समर्पित किया। तिक्कन, नेल्लूरु के राजा मनुमसिद्धि के मन्त्री तथा राजकवि थे।

अनुवाद में तिक्कन ने नाटकीय शैली का प्रयोग किया। जीवन के स्वाभाविक प्रसंगों की उद्‌भावना कर, उन-उन पात्रों के वार्तालाप एवं विकास-क्रम द्वारा उनकी मानसिक प्रवृत्तियों का चित्रण करते हुए, चित्तवृत्तियों के परिणाम एवं परिष्कार का दिग्दर्शन कराना ही काव्य में नाटकीय शैली का प्रधान लक्षण है। रसानुभूति द्वारा पाठक के चित्त को परिष्कृत करने का यह श्रेष्ठ-मार्ग है। 'कीचक वध' इस दृष्टिकोण से अत्युत्तम उदाहरण है, इसमें कवि ने कथा को एक नाटक के रूप में प्रस्तुत किया है। उद्योग पर्व में राजनीति के दाँव-पेंचों का अद्वितीय चित्रण है। पात्रों का इतना सुस्पष्ट चित्रण और किसी काव्य में नहीं मिलता। युद्ध वर्णन में तो दृश्य वर्णन चलचित्र की तरह गतिमान बन पड़े हैं। वर्णनात्मक न होकर, संवाद शैली में काव्य रचना में तिक्कन अत्यन्त सफल हुए हैं। लम्बे-लम्बे समासों का अभाव, देशी शब्दों का—ठेठ तेलुगु शब्दों का—सुन्दर प्रयोग, ये तिक्कन की रचना को सुन्दर बनाते हैं। "संस्कृत-भारती सोने का ढेर है। उसमें से समुचित मात्रा में स्वर्ण लेकर, स्वर्णकार की कुशलता के साथ बनाया गया स्वर्ण-कमल है तेलुगु-भारत।"

अरण्य पर्व के शेष भाग की पूर्ति, नन्नय के नाम पर ही करनेवाले हैं एर्राप्रगड़ (1280-1350)। इन्होंने नन्नय की शैली पर रचना का प्रारम्भ करके उसे तिक्कन की शैली पर ला खड़ा किया। इससे ऐसा लगता है मानों ये नन्नय और तिक्कन की रचनाओं को मिलाने वाले सन्धि-सूत्र हैं।

'स्फुरदरुणांशु रागरुचि बोंपिरि वोयि निरस्त नीरदा
चरणमुलै, दलत्कमल वैभव जुम्मणमु ल्लसिल्लनु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वरतर हंस सारस मधुव्रत निस्वनमुल् सेलंगगा
गरमुवेलिंगे, वासरमुखंबुलु शारदवेल जूडगन् ।'

(शरद् ऋतु के दिनों में प्रकाशमान सूर्य की अरुणिमा घट गई। नीरद-आवरण से मुक्त हो, कमलों के वैभव-विकास के नष्ट होने पर, हंस, सारस और मधुव्रतों (भ्रमरों) के स्वरों के मुखरित होने पर, शरद के दिन प्रकाशित होने लगे ।)

नन्नय भट्ट के पद्य से इसकी तुलना करने पर स्पष्ट रूप से मालूम होता है कि नन्नय की शैली से इनकी शैली का कितना साम्य है । अरण्य पर्व के शेष भाग की रचना के अतिरिक्त एर्राप्रगड़ ने 'नृसिंह पुराण', 'रामायण', 'हरिवंश' आदि काव्यों की रचना की है ।

नन्नय, तिक्कन और एर्राप्रगड़ इन तीन कवियों को 'कवित्रय' कहते हैं । इन तीनों महाकवियों ने अनुवाद को औचित्य की दृष्टि से, ठेठ तेलुगु साँचे में ढालकर एक नूतन काव्य की ही रचना की है, जिसे किसी मौलिक काव्य से कम गौरव प्राप्त नहीं है । कवित्रय के हाथों में पड़ कर 'महाभारत' ने तेलुगु जन-मन के हृदय में घर कर लिया है । 'कवित्रय' की रचना शैली ही परवर्ती कवियों के लिए मार्ग दर्शक बनी रही ।

इस युग के अन्य कवियों में केतन, मारन्न, गोन बुद्धा रेड्डी, हुळक्कि भास्कर पेद्दन, नाचन सोमनाथ प्रमुख हैं । केतन ने दंडी कृत 'दश कुमार चरित' को चम्पू काव्य के रूप में अनूदित कर, तिक्कन के कर-कमलों में समर्पित किया । 'विज्ञानेश्वरीयमु' ('धार्मिक ग्रन्थ') और 'आन्ध्र भाषा भूषणमु' (व्याकरण ग्रन्थ) इनकी अन्य रचनाएँ हैं । तिक्कन के शिष्य मारन्न ने 'मार्कंडेय पुराण' का अनुवाद किया है । गोन बुद्ध रेड्डी ने अपने पिता के नाम पर, रामायण को द्विपद-छन्द में रचा है । एक प्रवाद है कि रंगनाथ नामक किसी कवि ने इसकी रचना की है । वैसे यह काव्य 'रंगनाथ रामायणमु' के नाम से ही प्रसिद्ध है । इस काव्य में जंबुमालि, कालनेमि, सती सुलोचना आदि अवाल्मीकीय प्रसंग हैं जो मूल कथा के सौन्दर्य में चार चाँद लगाते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि ये उपकथाएँ शायद आन्ध्र के लोक गीतों के प्रभाव से, काव्य में आई हैं । इस काव्य के वर्णन बड़े ही गम्भीर, पात्रों का शील चित्रण सुन्दर और शैली गेय बन पड़ी है ।

'भास्कर रामायण' के कर्ता हुळक्कि भास्कर, उनके पुत्र मल्लिकार्जुन भट्ट, शिष्य कुमार रुद्रदेव, मित्र अय्यलार्य माने जाते हैं । स्वाभाविक प्रवाह से युक्त होने पर भी काव्य में, अनेक कर्तृत्व के कारण, समग्र ग्रन्थ में एक-सी शैली नहीं है ! शैली की भिन्नता स्पष्ट परिलक्षित होती है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विन्नकोट पेद्दन के 'काव्यालकार चूड़ामणि' में साहित्यिक विषयों के साथ-साथ व्याकरण और छन्द की भी चर्चा की गई है। राजशेखर कवि के 'विद्धसाल-भंजिका' के आधार पर मंचन ने 'केयूरबाहु चरित्रमु' की रचना की। 'नाचन सोममाथ' का 'उत्तर हरिवंशमु' ही उपलब्ध है। इस काव्य के आधार पर ही इन्हें 'कवित्रय' के कवियों के समकक्ष माना जाता है। वस्तु की एकता, रसपोषण, नूतन प्रसंगों की कल्पना और निर्वाह, भाव पांडित्य आदि कई गुणों से युक्त यह काव्य प्रबन्ध युग की रचनाओं का मार्ग दर्शक है।

आचार्य अधवर्ण की गणना इस युग के पंडित कवियों में की जा सकती है। इनका लिखा 'महाभारत' उपलब्ध नहीं है। 'अधर्वणकारिकावलि' के नाम से तेलुगु व्याकरण, संस्कृत श्लोकों में लिखा है।

बद्देन का 'नीतिसार मुक्तावलि', अमरेश्वर का 'विक्रमसेन काव्यमु', त्रिपुरान्तक का 'त्रिपुरान्तकोदाहरणमु' इस युग के अन्य काव्य हैं। उदाहरण काव्यों[1] में विपुरान्तकोदाहरणम्' का शीर्ष स्थान है।

इस युग में शैव कवियों का अपना विशिष्ट महत्व है। ईसा की लगभग 11-12 वीं शती में कर्नाटक प्रान्त में बसवेश्वर द्वारा संस्थापित 'वीर शैव संप्रदाय' ने आन्ध्र देश को खूब प्रभावित किया। उन सिद्धान्तों के प्रचार के लिए अनेक कवियों ने कलम उठाई। देशी इतिवृत्त, देशी छन्द, और देशी भाषा—इन्हें साधन बनाकर वीरशैव कवियों ने जनता में जागरण के भाव फैलाए। इन कवियों ने भाषा और भाव के क्षेत्र में अत्यधिक स्वच्छन्दता दिखाई है। सचमुच इन्हें 'जन-कवि' कह सकते हैं।

इन शैव कवियों में राजकवि 'नन्नेचोड़' का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। इनके समय के बारे में काफी मतभेद रहा है। 'कविराज शिखामणि' की उपाधि से शोभित नन्नेचोड ने 'कुमारसम्भवमु' नामक उत्तम प्रबन्ध काव्य की रचना कर, अपने गुरु जंगम मल्लिकार्जुन को समर्पित किया। काव्य के प्रारम्भ में कालिदास, उद्भट नामक दो संस्कृत कवियों के उल्लेख होने पर भी यह काव्य किसी का अनुवाद नहीं है। इस काव्य के वर्णन सहज सुन्दर और शैली गम्भीर है। रचना शैली के कारण इस काव्य को तेलुगु का पहला प्रबन्ध काव्य माना जा सकता है।

मल्लिकार्जुन पंडिताराध्य के लिख अनेक काव्यों में से 'शिवतत्वसारमु' ही

---

1. एक विशिष्ट प्रकार का काव्य भेद है, जिसमें विभक्तियों के क्रम से पद्य होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपलब्ध है । इसमें शिवा !, अजा !, रुद्रा !, महेशा !, के सम्बोधनात्मक मुकुटों[1] पर सैकड़ों पद्य हैं । यह तेलुगु का पहला शतक है । इस ग्रन्थ में पाशुपत शैव सिद्धान्त और शिव दीक्षा का विस्तार पूर्वक वर्णन है ।

द्विपद रचना में अनन्य और शिव कवि समूह के शिरोमणि पाल्कुरिकि सोमनाथ ने आन्ध्र, संस्कृत, और कन्नड़ भाषाओं में अनेक ग्रन्थ लिखे हैं । इनमें से 'बसव पुराणमु', 'पंडिताराध्य चरित्रमु', 'सोमनाथस्तव', 'अनुभव सार', 'वृषाधिप शतकमु', और 'बसवोदाहरणमु' अपेक्षाकृत प्रसिद्ध रचनाएँ हैं । शिव पारम्य को सिद्ध करने वाली अनेक प्रसिद्ध कथाएँ, इन ग्रन्थों में हैं । सोमनाथ की कविता में अद्वितीय प्रवाह है, जिस की तुलना 'गिरनदी' (जल प्रपात) से की गई है । द्विपद छन्द को लोक प्रिय बनाने वाले, और वीर शैव सिद्धान्तों को जनता तक पहुँचाने वालों में सोमनाथ ही सर्वप्रथम हैं ।

इस युग में ही जिसे प्रारम्भिक (आदि) युग कहा जाता है—'मार्ग कविता' और 'देशी कविता' के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं कि इस युग को साहित्य की प्रारम्भिक दशा माना नहीं जा सकता । एकाध देशी रचना को छोड़ अन्य सभी अनुवाद ही हैं, पर ये अनुवाद नीरस न होकर, मौलिक रचनाओं जैसे लगते हैं । गोदावरी तीरस्थ राज महेंद्री में उद्‌भूत आन्ध्र कविता की स्रवन्ति नेल्लूरू, वरंगल, अद्दंकि आदि स्थानों में फैली पड़ी और समग्र आन्ध्र प्रान्त को अपनी निर्मल धाराओं से तृप्त करने लगी ।

श्रीनाथ युग या काव्य युग (सन् 1400—1500 तक) :

एर्राप्रगड़ के बाद पुराणों के अनुवाद की ओर से ध्यान हटकर काव्य रचना, यदाकदा मौलिक काव्य रचना की ओर दृष्टि गई । 15 वीं शती से 17 वीं शती तक आन्ध्र साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है । 15 वीं शती को प्रबन्ध[2] पूर्व युग कहते हैं या 'श्रीनाथ युग ।' इस युग के साहित्याकाश में जाज्वल्यमान सूर्य के समान कवि सार्वभौम श्रीनाथ विराजमान हैं तो भक्ति-माधुर्य की शीतल ज्योत्स्ना बिखेरने वाले सुधाकर हैं महाकवि पोतन्न । दोनों ने अपनी-अपनी रचनाओं से प्रबन्ध युग के बीज बोए ।

इस युग के युग पुरुष हैं, महाकवि श्रीनाथ । इस कवि सार्वभौम का जीवनकाल ई. सन् 1380-1460 तक माना जाता है । ये अपने सोलहवें साल से ही लिखने लग गए और मृत्यु पर्यंत लिखते ही रहे । अत्यन्त विलासी और वैभवशाली जीवन बिताने के बाद इनके जीवन के अन्तिम दिन दुखद रहे ।

---

1. शतक में सभी पद्यों के अन्त में संबोधन एक जैसा होता है ।
2. प्रबन्ध के विषय में 'रायलु युग' में विवरण दिया गया है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्रीनाथ की रचनाओं में से 'शृंगार नैषध', 'भीमखंड', 'काशी-खंड 'हर विलास', 'क्रीड़ाभिराम', 'पल्नाटि वीर चरित्र' आदि रचनाएँ प्राप्त हैं 'मरुत्तराट् चरित्र', 'शालिवाहन सप्तशति' और 'पंडितराध्य चरित्र' आदि रचनाएँ उपलब्ध नहीं हैं। स्वच्छन्द प्रकृति के इस महाकवि ने अपनी रचनाओं में अप्रतिम प्रतिभा का प्रदर्शन किया है। अनुवादों में भी मूल इतिवृत्त को ऐसा चमका दिया है कि वे मौलिक-काव्य से लगने लगे हैं। पांडित्यपूर्ण प्रौढ़ शैली के साथ-साथ देशी रचना में भी आप सिद्धहस्त हैं। 'विद्वदौषधं' माने गए 'नैषध' और 'अयःपिंड' माने गए 'काशी खंड' की रचना करनेवाले इस कविवर ने द्विपद नामक देशी गेय छन्द में 'पल्नाटि वीर चरित्र' की रचना की। 'सीसमु' नामक देशी छन्द के आप मास्टर माने गए हैं। विभिन्न अवसरों पर कहे गए इनके मुक्तक बहुत प्रसिद्ध हैं। एक उदाहरण लीजिए—

सिरिगलवानिकि जेल्लुनु
तरुणुल बदियारुवेल दगबेंड्लाडन्
दिरिपेमुन किद्दरांड्रा
परमेशा ! गंगाविडुवु पार्वति चालुन् ।

(गुन्टूर जिले के पलनाडु इलाके से जहाँ पानी का अत्यन्त अभाव है, जाते हुए श्रीनाथ ने कहा—श्री संपत्ति वाले का 16 सौ स्त्रियों से विवाह कर लेना समुचित है। पर भिखारी के दो दो स्त्रियाँ क्यों ?—हे शंकर ! तुम्हारे लिए पार्वती बस है, गंगा को छोड़ दो न !)

इस महाकवि ने आन्ध्र देश के प्रत्येक राज दरबार में गौरव को प्राप्त किया। यही नहीं बल्कि रेड्डी राजाओं के यहाँ तो इनका कनकाभिषेक भी हुआ था। तेलुगु साहित्य के इतिहास में इतना विलासी और वैभवशाली व्यक्तित्व किसी दूसरे कवि का नहीं हुआ। श्रीनाथ की कविता 'हरके जटाजूट से विनिर्गत गंगा-तरंगों की भाँति' अविरल वेग तथा पवित्र वाग्धारा लिए हुए है, जिसमें अवगाहन करने पर पाठक का मन परितृप्त हो जाता है।

महान् भक्त और महाकवि बम्मेर पोतना श्रीनाथ के समसामयिक ही नहीं, रिश्ते में साले माने जाते हैं। इस रिश्ते पर आधारित कई गाथाएँ लोक-प्रचार में हैं। पोतन्न ने श्रीमद् भागवत के अतिरिक्त 'भोगिनी दंडकमु' और 'वीरभद्र विजयमु' नामक दो अन्य काव्यों को भी रचा है। संस्कृत में 20 हजार ग्रन्थों में परिव्याप्त महाभागवत पुराण को पोतन्न ने 30 हजार पद्यों के महाकाव्य के रूप में ढाला है और श्री रामचन्द्रजी के चरण कमलों में समर्पित किया है। 'निजदार सुतोदर पोषण' के लिए अपनी काव्य कन्या को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अधम नरेशों के हाथ न बेचकर ये महात्मा जीवन-भर हल चलाते रहे। एक बार इन्होंने कहा –

'बालरसालसाल नवपल्लव कोमल काव्य कन्यकन्
कूळलकम्मि यप्पडुपु गूडु भुजिंचुट कंटे
सत्कवुल् हालिकुलैन नेमि ? गहनांतर सीमल कन्दनूलकी
द्दालिकुलैन नेमि ? निजदारसुतोदर पोषणार्थमै ।'

(बालरसाल (आम्र) वृक्ष के नव पल्लव-सी कोमल काव्य-कन्या को नीचों के हाथ बेचकर, (वेश्यावृत्ति-सी) उस भोजन को खाने की अपेक्षा अपने बाल-बच्चों के पेट भरने के लिए, सत्कवि किसान बनें तो क्या हुआ ? जंगलों में कंद मूल खोद लें तो क्या हुआ ?)

'आन्ध्र महाभागवत' भक्ति और माधुर्य का आकर है। साहित्यिक महत्व के साथ लोकप्रियता में भी इस काव्य का सानी नहीं है। अनन्य भक्ति का निरूपण करनेवाला यह पद्य, ऐसे पद्यों में से एक है जो सामान्य जनता की जबान पर है।

मंदार मकरंद माधुर्यमुन देलु
मधुपंबु वोवुने मदनमुलकु ?
निर्मल मंदाकिनी वीचिकल दूगु
रायंच जनुने तरंगिणुलकु ?
ललित रसाल पल्लंव खादियै चोक्कु
कोयिल सेरुने कुटजमुलकु ?
पुर्णेंदु चंद्रिका स्फुरित चकोरंक
बरुगुने सांद्र नीहारमुलकु ?
अंबुजोदर दिव्य पदारविंद
चिंतनामृत पान विशेष मत्त
चित्तमेरीति नितरंबु जेरनेर्चु
विनुतगुणशील ! माटलुवेयुनेल ?

(मंदार पुष्पों के मकरंद के माधुर्य का स्वाद लेनेवाला भ्रमर नीम के पेडों की ओर जायेगा ? (कभी नहीं)। मन्दाकिनी की निर्मल वीचिकाओं पर डोलनेवाला राजहंस कभी छोटे नदी-नालों में जाएगा ? कोमल आम्र-पल्लवों पर मुग्ध होनेवाली कोयल क्या मामूली वृक्षों के पास जाएगी ? पूर्णिमा के उज्ज्वल चन्द्र की शीतल किरणों को खानेवाला चकोर क्या ओस की बूंदों पर रीझेगा ? इसी प्रकार श्री विष्णु भगवान के चरण-कमलों की सुधा के पान से मत्त-चित्त, दूसरे विषयों पर कैसे आसक्त होगा ?)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुछ कारणों से पोतन्न के भागवत के कुछ भाग नष्ट हो गए। उन भागों को एर्चूरि सिंगन, गंगन और वेलिगंदल नारय ने पूरा किया।

इस युग में इन दोनों मूर्धन्य कवियों के बाद पिल्ललमर्रि पिन वीरभद्र का स्थान है। इनके लिखे काव्य-ग्रन्थों में 'शृंगार शाकुन्तलमु' और 'जैमिनी भारतमु' ही प्राप्त हैं। व्यास और कालिदास की रचनाओं के आधार पर इन्होंने शकुन्तला की कथा को चार आश्वासों के प्रबन्ध काव्य का रूप दिया है। इस काव्य में इतिवृत का विकास-क्रम 'अभिज्ञान शाकुन्तल' के आधार पर है तो उसके परिणाम की कल्पना 'महाभारत' के अनुरूप है। 'जैमिनी भारत' का अश्वमेध पर्व ही प्रचार में है। पिनवीरन ने उसी भाग को ग्रहण कर, अनेक उप कथाओं को जोड़कर, प्रौढ़ काव्य की रचना की है।

जक्कनका 'विक्रमार्क चरित्रमु' अनन्तामात्यका 'रसाभरणमु', 'अनन्तका छन्द', और 'भोजराजीयमु', गौरन का 'हरिचन्द्रोपाख्यानयमु' और 'नवनाथ चरित्रमु'[1] मडिकिसिगन का 'पद्मपुराणमु' और 'सकल नीति सारमु', दग्गुपल्लि दुग्गन का 'नचिकेतोपाख्यानमु' कोरवि गोपराजु का, 'सिंहासन द्वात्रिंशति', दूबगुंट नारायण कवि का 'पंचतन्त्रमु', वेन्नेलकंटि सूरन का 'विष्णु पुराणमु आदि अन्य प्रसिद्ध काव्य हैं।

नंदि मल्लय और घंट सिंगन आन्ध्र के सर्वप्रथम कवि-युग्म के वे कवि हैं जिन्होंने 'प्रबोध-चन्द्रोदयमु' और 'वराह-पुराणमु' की रचना की। संकीर्तनों में—गेय पदों में—भगवान वेंकटेश्वर का स्तवन करने वाले ताल्लपाक अन्नमाचार्य भी इसी युग में हुए हैं। आन्ध्र के 'कबीर' वेमन्न ने अत्यन्त सरल और सुबोध शब्दों में समाज में फैली रूढ़िवादिता का खंडन कर मानवता के स्वर को ऊँचा किया—

मालवानि नेल मरि मरि निंदिपंगा
नोडलु रक्तमांस मोकटि गादे
वानिलोन मेलगु वानि कुलंबेदि
विश्वदाभिराम विनुर वेमा !

वर्ण-व्यवस्था की निन्दा करते हुए वेमन्न कहते हैं कि हरिजन (पंचम) की बार बार निन्दा क्यों करते हो ? शरीर, रक्तमाँस आदि सभी एक से नहीं है ? उसके अन्दर रहने वाले परमतत्व का वर्ण कौन-सा है ? अर्थात् बाहरी भेद व्यर्थ है।)

---

1. दोनों ही द्विपद-काव्य हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वेमन्न के हजारों पद्य हैं जिन्हें 'वेमन्न शतकमु' कहते हैं। भाव और भाषा की अकृत्रिमता के कारण वेमन्न की लोकप्रियता आज तक अक्षूण्ण है।

आन्ध्र साहित्य के इतिहास में काव्य प्रक्रियाओं के वैविध्य के लिए इस युग का विशिष्ट स्थान है। कवियों की दृष्टि रस सृष्टि की अपेक्षा रचना-कौशल और शैली पर अधिक केन्द्रित होने लगी। लम्बी समास रचना, यमक आदि शब्दालंकारों का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा।

राजमहेंद्री, अद्दंकि, विद्यानगर, ओरुगुल्लु (वरंगल), कोंडवीडु आदि नगर कविता-कन्या के क्रीड़ा-स्थल बने रहे।

रायलु युग या प्रबन्ध युग (ई. सन् 1500—1700) :

'काव्य युग' का उत्तर भाग ही प्रबन्ध युग है। काव्य युग में प्रबन्ध रचना की जिन विशिष्टताओं का सूत्रपात हुआ, उनको इस युग के कवियों ने पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। ख्यातवृत्त और कल्पित वृत्तों को लेकर, अष्टादश वर्णन युक्त अनेक मौलिक प्रबन्ध काव्यों की रचना हुई। बहुमुखी तथा परमोज्ज्वल साहित्यिक कृतियों से सम्पन्न इसी युग में तेलुगु के पंच महाकाव्यों[1] का निर्माण हुआ है।

आन्ध्र साहित्य में 'प्रबन्धकाव्य' का विशिष्ट अर्थ है। "गद्य-पद्य-कथन-संवादात्मक समस्त काव्य भेदों को अपने में समेटे हुए सम्पूर्ण शिल्पमूर्ति है प्रबन्ध-सरस्वती।" (श्री पिंगली लक्ष्मीकांत।) संस्कृत में :महाकाव्य' की परिभाषा और लक्षणों के अनुरूप ही प्रबन्ध के स्वरूप का विवरण दे सकते हैं। एक नायकाश्रय, वस्तु की एकता, अष्टादश वर्णन, शृंगार रस की प्रधानता, आलंकारिक शैली, मौलिकता आदि लक्षणों से युक्त काव्य को 'प्रबन्ध-काव्य' कहते हैं। "भारत में बीज प्राय, एर्रन में अंकुरित और सोमन में पल्लवित यह प्रबन्ध लता श्रीनाथ के हाथ में बढ़कर खूब पल्लवित हुई। यह लता रायलु युग में ही फलों से लदी। 'मनुचरित्र' उस लता का प्रथय पुष्प-फूल है।"

विजयनगर के महाराजा श्रीकृष्ण देवराय (1510—1530) की 'भुवनविजय' नामक सभा आन्ध्र साहित्य के प्रसिद्ध कवियों से सुशोभित थी। श्रीकृष्ण देवराय स्वयं कवि और पंडित थे। संस्कृत ग्रन्थों के अतिरिक्त इन्होंने तेलुगु में 'आमुक्तमाल्यदा' की रचना की। इसमें गोदादेवी या आंडाल के भगवान

---

1. मनुचरित्र, वसुचरित्र, प्रभावती प्रद्यूम्नमु, आमुक्तमाल्यदा, पांडुरंग माहात्म्यमु।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विष्णु से विवाह की कथा का वर्णन बड़ी ही प्रौढ़ पंडिताऊ शैली में किया गया है।

आन्ध्र प्रबन्ध कविता के पितामह अल्लसानि पेद्दन ने 'मनुचरित्र' या 'स्वारोचिष मनुसंभव' नामक श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य की रचना की। शृंगार रस प्रधान यह काव्य, चरित्रचित्रण, प्रकृति के मनमोहक वर्णन, शब्द चयन एवं आलंकारिक शैली में अपना सानी नहीं रखता। इनकी प्रांजल शैली का एक उदाहरण देखिए—

'अटजनि गांचे भूमिसुरुडंबर चुम्बि शिरस्सरज्झरी
पटल मुहुर्मुहुर्लुठदभंगतरंग मृदंग निस्स्वन
स्फुट नटनानुकूल परिफुल्ल कलापकलापि जालमुन्
गटक चरुत्करेणु करकंपित सालमु शीतशैलमुन्।

(वहाँ हिमालय पर) जाकर, आकाश को चूमने वाले शिखरों से निःसृत झरनों के समूह के चंचल तरंगों के शब्दों को मृदंग के स्वर मान, पंख फैलाकर नाचने वाले मयूरों के समूह से युक्त और पर्वतों में विचरने वाली हथिनियों के सूँडों से हिलाए जाने वाले वृक्षों वाले शीताचल को उस ब्राह्मण ने देखा।)

'भुवन विजय के आठ प्रसिद्ध कवियों में (अष्टदिग्गज) पेद्दन सचमुच 'पेद्दन' बड़े माने जाते हैं। रायलु ने इनका जैसा सम्मान किया वैसा सम्मान संसार के शायद ही किसी और कवि को मिला हो।

मादय्यागारि मल्लन का 'राजशेखर चरित्रमु', नंदितिम्मन का 'पारिजातापहरणमु', धूर्जटि कवि का 'काळहस्तिमाहात्म्यमु' और 'काळहस्तीश्वर शतकमु' नृसिंह कवि का 'कवि कर्ण रसायनमु', ताल्लपाक चिन्नन्न का 'परमयोगि विकासमु' और 'उषा परिणयमु', अय्यलराजु रामभद कवि का 'रामभ्युदयमु', तेनालि राम कृष्ण का 'पांडुरंग माहात्म्यमु' आदि प्रसिद्ध काव्य हैं।

कहते हैं, नासिका पर लिखे गए निम्न लिखित सुन्दर पद्य के कारण नंदितिम्म 'मुक्कु (नाक) तिम्मन्न' के नाम से प्रख्यात हुए।

"नानासूनवितान वासनल नानंदिंचु सारंगमे
लानन्नोल्लदटंचु गंधफलि वल्काकं दपंबंदियो
षा नासाकृति बूनि सर्व सुमनस्सौरभ्य संवासमैं
पूनें ब्रेक्षणमालिका मधुकरी पुंजबुनिर्वकलन्।"

(विविध पुष्पों की सुगंधियों से प्रसन्न होने वाला भ्रमर मुझे क्यों नहीं चाहता? इस क्रोध के मारे घोर तप कर, चंपा पुष्प स्त्री की नासिका बन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गया। तब सब प्रकार के सुमनों के सौरभ के योग्य बन उसने वीक्षण मालिका रूपी मधुकरी समूह को अपने दोनों तरफ रख लिया।)

नंदितिम्मन्न के पारिजातापहरण काव्य में श्रीकृष्ण की महिषी सत्य भामा के प्रणय-मान का हृदयंगम वर्णन किया गया है। श्रीकृष्ण पर क्रुद्ध होकर सत्या उन्हें लात मारती है तो कवि कहता है :—

'जलजातासन वासवादि सुरपूजा भाजनंबै तव
र्चुलतांतायुधु गन्नतंड्रि शिरमच्चो वामपादंबुनन्
तोलगंद्रोसे लतांगि यट्लयगु नाथुल् नेरमल्सेय पे
रलुकन् जेदितयट्टि कान्तलुचित व्यापार मुल्नेर्तुरे ?'

(ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं से पूजित, मन्मथ के जनक (श्रीकृष्ण) के सिर को बाएँ पैर से ढकेल दिया। वैसा होना स्वाभाविक ही है क्योंकि प्रिय के अपराध करने के कारण क्रुद्ध होनेवाली प्रिया को, 'उचित-अनुचित का विचार कहाँ रहता है।')

पिंगलि सूरन्न इस युग के अनन्य प्रतिभाशाली कवि हैं। इन्होंने 'कलापूर्णोदयमु' और 'प्रभावीत प्रद्युम्नमु' नामक दो प्रबन्ध काव्य और 'राधव पांडवीयमु' नामक द्वयर्थि काव्य की रचना की है। 'कलापूर्णोदयमु' कवि की भावुक कल्पना और अद्भुत-कथा-निर्वाह-कौशल का ज्वलन्त प्रमाण है। मानों यह एक पद्यात्मक उपन्यास ही है। 'राघवपांडवीयमु' में समग्र काव्य के प्रत्येक पद्य में, रामायणपरक तथा भारतपरक, दोनों ओर लगने वाले अर्थ मिलते हैं। शब्द श्लेष और अर्थ श्लेष के सहारे, दो भिन्न कथाओं का निर्वाह करना कवि की बौद्धिक प्रतिभा तथा उद्भट पांडित्य का प्रमाण है।

सचमुच ही कृष्ण देवराय का युग आन्ध्र सरस्वती के लास्य के अनुकूल क्षेत्र रहा है। महापराक्रमी एवं कभी भी पराजित न होने वाले उस महाराज ने राज्य लक्ष्मी की अपेक्षा साहित्य लक्ष्मी की ही अर्चना की है।

रामराज भूषण कवि श्रीकृष्ण देवराय के दामाद रामराज (तल्लि कोट सन् 1564—1565 के युद्ध के प्रसिद्ध वीर) के दरबार में थे। इन्होंने 'वसुचरित्र' नामक श्लेष-काव्य, 'हरिश्चन्द्र नलोपाख्यानमु' नामक द्वयर्थि काव्य और 'नरस भूपालीयमु' नामक लक्षण ग्रन्थ की रचना की है। रामराज-भूषण कवि उच्च कोटि के कवि, पंडित और आचार्य थे।

तेलुगु साहित्य की सर्व प्रथम कवयित्री आत्मकूरिमोल्ल भी इसी युग में हुई। आत्मकूरिमोल्ल ने 'रामायण' की रचना कर, आन्ध्र साहित्य में अपने लिये अमर स्थान बना लिया है। मोल्ल रामायण की शैली प्रौढ़ है, ग्रंथ में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किये गये वर्णन मनोहारी बन पड़े हैं। तिमम्कक नामक एक कवयित्री ने 'सुभद्रा कल्याणमु' नामक द्विपद काव्य की रचना की है।

तिरुपति वेंकटेश्वर (बालाजी) के मन्दिर में संकीर्तन करनेवाले महाभक्त अन्नमाचार्य का उल्लेख ऊपर हो चुका है। पेद तिरुमलाचार्य, चिन्नन, चिन तिरुमलाचार्य और तिरुवेंगळप्प आदि इन्हीं के परिवार के सुप्रसिद्ध साहित्यकार हैं। तिरुवेंगळप्प ने 'काव्य प्रकाशिका' और 'अमरकोश' की टीकाएँ लिखी हैं। वेलगपूड़ि वेंगयामात्य ने 'श्रीकृष्ण कर्णामृत' का सुन्दर पद्यानुवाद किया है।

इस युग में ऐतिहासिक महत्व के कुछ काव्य लिखे गए हैं। इनमें कासे सर्वप्प का 'काकतीय राजवंशावळि' (वरंगल के प्रतापरुद्र की गाथा), अंदुगुल वेंकय्य का 'नरपति विजयमु' (विजयनगर के आर्वीटी राजाओं का इतिहास) और कुमार धूर्जटिका 'कृष्णराय विजयमु' (श्रीकृष्ण देवराय के जीवन से संबंधित) मुख्य हैं। ये काव्य ग्रन्थ कल्हण की राजतरंगिणी के आदर्श पर लिखे गये हैं। काव्य होने पर भी इनमें कई ऐतिहासिक सत्य भरे पड़े हैं।

विजयनगर के पतन के बाद दक्षिण के बहमनी राजवंश के मुसलमान बादशाहों ने भी तेलुगु साहित्य की श्रीवृद्धि में प्रशंसनीय योग दिया है। कंदुकूरि रुद्रकवि ने 'निरंकुशोपाख्यानमु' 'जनार्दनाष्टकमु', 'सुग्रीव विजयमु' की रचना की है। तेलुगु भाषा में उपलब्ध यक्षगानों में 'सुग्रीव विजयमु' सर्वप्रथम है।[1] इस रुद्रकवि को गोलकुण्डा के इब्राहीम कुतुबशाह ने 'चिंतलपालेमु' नामक गाँव देकर पुरस्कृत किया था। चरिगोंड धर्मन का 'चित्रभारतमु', हरिभट्ट का 'मत्स्य पुराणमु' और 'नृसिंह पुराणमु', पोन्निकंटितेलगन्न का 'ययाति चरित्रमु' अद्दंकिगंगाधर कवि का 'तपतीसंवरणोपाख्यानमु', 'सारंगु तम्मय्यका 'वैजयन्ती विलासमु', मल्लारेड्डी का 'पट्चक्रवर्ती चरित्रमु', 'पद्मपुराणमु' तेलंगाने में लिखे गए प्रसिद्ध काव्य हैं। गोलकुण्डा का राजदरबार कवियों का आश्रय स्थान रहा है। इब्राहीम को कवियों ने 'इभराम' बनाकर 'राम' में अधिक महत्वशाली बनाया है। 'ययाति चरित्रमु' ठेठ तेलुगु में, तत्सम और तद्भव शब्दों को बिलकुल छोड़कर, लिखा गया पहला काव्य है।

रायलु-युग में तेलुगु कविता का चरम-विकास देखने को मिलता है। इस युग के अधिक कवियों ने अनुवाद करना छोड़कर, पुराण के किसी भाग के आधार पर स्वतन्त्र मौलिक काव्यों की रचना करनी शुरू की। अष्टादश

---

1. दक्षिण के लोक नाट्य का ही परिष्कृत रूप है यक्षगान।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्णनों से युक्त प्रबन्ध काव्यों में, कवियों की कल्पना शक्ति एवं काव्य-प्रतिभा के ज्वलन्त उदाहरण मिलते हैं। इन रचनाओं में श्रृंगार रस की प्रधानता रही। पांडित्य प्रदर्शन एक गुण-सा माना जाने लगा। मुसलमान राजाओं की आन्ध्र साहित्य की सेवा उल्लेखनीय है।

इस युग में विजयनगर, गोलकुण्डा, मथुरा, नंद्याल, चन्द्रगिरि आदि स्थान कविता के बिहार क्षेत्र बने हुए थे।

दक्षिण-आन्ध्र युग (1800–1875 तक) :

विजयनगर साम्राज्य के वैभव के दिनों में सारा दक्षिण देश आन्ध्र नायक राजाओं (विजयनगर के सामंत राजा) के शासन में था और कई आन्ध्र सुदूर दक्षिण में जा बसे थे। विजयनगर के पतन के बाद आन्ध्र-सरस्वती का विहार-क्षेत्र दक्षिण के तंजाऊर, मदुरा, मैसूर स्थानों में रहा। उन राज्यों के शासकों ने स्वयं काव्य-रचना की और कई कवि-पंडितों को आश्रय देकर, उनसे कई सुन्दर काव्यों की रचना करवाई। यही कारण है कि इस युग को 'दक्षिणांध्रयुग' कहते हैं। भाषा-प्रयोग में कुछ स्वच्छन्दता दिखाने के कारण और श्रृंगार वर्णन को अश्लीलता की सीमा तक पहुँचाने के कारण, कुछ विद्वान् इस युग को क्षीण-युग या ह्रास-युग भी कहते हैं। पर रचनाओं की संख्या और वैविध्य के कारण इस कथन में सत्य का अंश कम दिखाई पड़ता है।

दक्षिण में आन्ध्र भाषा को और रचना को प्रोत्साहित करनेवाले प्रथम शासक हैं रामनाथपुर जिले के शिवपुरी के गोळ्ळवंश के नायक। चिनरामप्पा ने पच्चकप्पुरपु तिरुवेंगळ कवि से द्विपद छन्द में 'चोक्कनाथ चरित्र' की रचना करवाई। तदुपरान्त दक्षिण में आन्ध्र साहित्य की विभिन्न काव्य-प्रक्रियाओं की श्रीवृद्धि हुई। गद्य रचनाएँ, पद्यकाव्य, यक्षगान, गेय पद आदि रचना-शैलियों की भरमार रही।

तंजाऊर के राजा रघुनाथ भूपाल (1614—33) श्रीकृष्ण देवराय के समान ही 'साहिती समरांगण सार्वभौम' थे। कहा जाता है कि इन्होंने कुल सौ ग्रन्थ रचे हैं। लेकिन अब रामायण का कुछ भाग, 'वाल्मीकि चरित्र, 'श्रृंगार सावित्री' और 'नल चरित्र' ही उपलब्ध हैं। इनके दरबार में 'मधुरवाणी' नामक एक कवयित्री थी, जिसने इनके रामायण का संस्कृत में अनुवाद किया। इस युग के श्रेष्ठ कवि हैं चेमकूर वेंकट कवि। इन्होंने 'सारंगधर चरित्र', 'विजय विलासमु' नामक काव्यों की रचना कर उन्हें रघुनाथ भूपाल को समर्पित किया। इनकी कविता शब्दालंकारों से लदी और श्लेष-ध्वनिमय होती

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

थी । कृष्णाध्वरिने 'रघुनाथ भूपालीयमु', 'नैषध पारिजातमु' की रचना की । इनमें पहला लक्षण ग्रन्थ है तो दूसरा द्वयर्थि काव्य । काळय्य कवि का 'राजगोपाल विलासमु' मन्नारगुडिके क्षेत्र-माहात्म्य का वर्णन करने वाला काव्य है । शैली प्रौढ़ एवं समास-बहुला है ।

रघुनाथ के पुत्र विजय राधव ने लगभग पचास पुस्तकों की रचना की है । लगभग बीस यक्षगान, 'रघुनाथाभ्युदयमु', 'पादुका-सहस्रमु' नामक द्विपद काव्य, कुछ दण्डक, सांगत्य, रगड़ इनकी रचनाएँ हैं । 'रघुनाथाभ्युदयमु', में अपने पिता के जीवन-चरित्र का प्रभावशाली चित्रण किया है । इनके दरबार में रंगाजम्म नामक एक सुप्रसिद्ध कवयित्री थीं । रंगाजम्म ने संग्रह भारत, भागवत और रामायण, 'उषापरिणयमु', 'मन्नारुदास विलासमु' आदि यक्षगानों की रचना की । इसी समय कोनेटि दीक्षित, वेंकट पति सोमयाजि मन्नारुदेव आदि कवियों ने भी यक्षगान लिखे ।

कालक्रम से तंजाऊर महाराष्ट्रों के अधिकार में चला गया । इन महाराष्ट्र शासकों ने तेलुगु भाषा के प्रति आदर ही नहीं दिखाया, प्रत्युत् तेलुगु में स्वयं कई काव्यों एवं नाटकों की रचना भी की है । सम्प्रति यक्षगान साहित्य के लिए तंजाऊर रत्नाकर ही है । इस युग में लिखे गए दो हिन्दी यक्षगानों का भी पता चला है ।

इस युग में पद-कविता को अमर बनाने वाले दो महाभक्तों का भी जन्म हुआ । त्यागराजु के सैकड़ों कीर्तनों (जिन्हें 'कृतियाँ' कहते हैं) के अतिरिक्त 'प्रह्लाद विजयमु' और 'नौका विजयमु' नामक दो यक्षगान भी हैं । त्यागय्य की रचनाएँ भक्ति की अनन्य मधुरिमा से पूर्ण हैं । क्षेत्रय्य ने मोव्वगोपाल पर कई पदों की रचना की है । ये पद अभिनय (नाट्य) के अधिक उपयुक्त हैं । त्यागय्य की रचनाओं में संगीत और साहित्य की गंगा जमुना है तो क्षेत्रय्य के पदों में संगीत, साहित्य और अभिनय की त्रिवेणी ।

चेञ्जि नामक प्राचीन स्थान के राजवंश से सम्बन्धित सरवमु चिन नारायणराजु (1600—1650) ने 'कुवलयाश्व चरित्रमु' नामक काव्य की रचना की है ।

तंजाऊर के बाद मथुरा और पुदुवकोट राज्य पण्डितों और कवियों के आश्रय स्थान बने । मधुरा के नायक राजाओं के समय में कई गद्य-ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है जिनमें समुखमु वेंकग कृष्णप्प नायक का 'जैमिनी भारतमु', कुंदुर्ति वेंकटाचलपति का 'भारत, भागवत वचनमुलु', तुपाकुल अनन्त भूपाल का 'विष्णु पुराणमु', 'सुन्दर काण्ड' और 'भगवद्गीता' आदि उल्लेखनीय हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पद्य काव्यों में कामेश्वर कवि कृत 'सत्यभामा सान्त्वनमु', 'वेंकटकृष्णप्प' नायक के 'अहल्या संक्रंदनीयमु', 'राधिका सान्त्वनमु', शेषमु वेंकट पति का 'तारा शशांक विजयमु', मुद्दुपळनि (कवयित्री) का 'राधिका सान्त्वनमु' प्रसिद्ध हैं। ये सभी उत्कट शृंगार के काव्य है। इनमें 'तारा शशांक विजयमु' में तो अश्लील शृंगार की हद कर दी गई हैं। ऐतिहासिक वचन (गद्य) ग्रन्थों में 'रायवाचकमु' प्रमुख है।

पुदुक्कोट के कवियों में नुदुरुपाटि वेंकन का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। इन्होंने 'आन्ध्र भाषार्णवमु' नामक शब्दकोश, तथा 'मल्लु पुराण', 'रघुनाथीयमु', 'राजवंश प्रशस्ति' आदि ग्रन्थों की रचना की। राय रघुनाथ नायक ने (1769–1789), 'पार्वती परिणयमु' नामक प्रौढ़ काव्य की रचना की। ये एक उद्भट पण्डित थे।

मैसूर राज्य के आन्ध्र कवियों में पालवेकरि कदिरीपति प्रमुख हैं। इन्होंने 'शुकसप्तति' नामक काव्य-ग्रन्थ की रचना की है। इस काव्य में उस समय की सामाजिक परिस्थितियों का सजीव चित्रण मिलता है। गद्य काव्यों में कळुवे वीर राजु का 'वचन भारतमु' प्रसिद्ध है। नञ्जराजु का 'हालास्य माहात्म्यमु' भी एक सुन्दर रचना है।

यह न समझना चाहिए कि इस युग में केवल दक्षिणी आन्ध्र देश में ही साहित्य-रचना होती रही; अपितु मध्य आन्ध्र और तेलंगाने में भी उच्च कोटि के साहित्य की सृष्टि हुई है।

18 वीं शती के मध्य आन्ध्र के कवियों में दामेर्ल वेंगळ नायक, कवि सार्वभौम कूचिमञ्चि तिम्मकवि, जग्गकवि, आड़िदमु सूरकवि, कंकण्टि पापराजु, दिट्टकवि नारायण कवि प्रमुख हैं। तिम्मकवि का 'अच्चतेनुगु रामायणमु' (ठेठ तेलुगु) और ठेठ तेलुगु में ही लिखा गया 'नीला सुन्दरी परिणयमु आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। एनुगु लक्ष्मण कवि, एलकूचि बाल सरस्वती (पुरुष ही है !) और पुष्पगिरि तिम्मन्न ने भर्तृहरि के सुभाषितों का पद्यानुवाद किया है। इन तीनों में से लक्ष्मण कवि की रचना का ही अधिक प्रचार हुआ। मंगळगिरि आनन्द कवि और पिंगळि एल्लनार्य ने 'वेदान्तसार' और 'तोभ्य चरित्रमु' नामक दो काव्य लिखे हैं जो ईसाई-धर्म से सम्बन्धित हैं।

19 वीं शती के कवियों में शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री, मण्डपाक पार्वतीश्वर शास्त्री, गोपीनाथमु वेंकट कवि विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। कृष्णमूर्ति शास्त्री ने 'सर्व कामदा परिणयमु', 'पञ्चतन्त्र' आदि काव्यों के अतिरिक्त संस्कृत में 'हरि कारिकाएँ' नाम से एक आन्ध्र व्याकरण की रचना की है। पार्वतीश्वर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शास्त्री ने लगभग अस्सी ग्रन्थ लिखे हैं, जिनमें 'राधाकृष्ण सम्वादमु' अधिक प्रसिद्ध है। वेंकट कवि ने 'शिशुपाल वध' और 'वाल्मीकि रामायण' का सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किया है।

इस युग की कवयित्रियों में तरिगोण्ड वेंकमाम्ब नामक कवयित्री प्रमुख हैं। इन्होंने 'वेंकटाचल महात्म्यमु' 'ज्ञान वासिष्ट रामायणमु' और 'राजयोगसारमु' नामक ग्रन्थ लिखे हैं।

इसी समय के तेलंगाने के कवियों में सुरभि माधवरायलु परशुराम पन्तुल लिंग मूर्ति, मरिगण्टि कवि उल्लेख योग्य है। माधवरायलु जटप्रोलु रियासत के शासक थे। उन्होंने 'चन्द्रिका परिणयमु' की रचना की जिसमें श्लेष, यमक आदि शब्दालंकारों का सुन्दर निर्वाह किया गया है। लिंग मूर्ति ने यौवन के दिनों में 'रति-मन्मथ विलासमु' नामक प्रबन्ध की रचना की। वृद्धावस्था में आपने 'सीतारामाञ्जनेय सम्वादमु' नाम से अद्वितीय वेदान्त-ग्रन्थ की रचना की। आपके पुत्र राममूर्ति ने 'शुक्र चरित्र' नाम से एक वेदान्त-ग्रन्थ की रचना की है।

रायलु युग में श्रृंगार रस का जो प्रवाह उमड़ा, उसने अपनी रस-धारा से सारे युग को आप्लावित कर दिया। यह प्रवृत्ति अश्लीलता की ओर अधिक झुकी हुई थी। राजाओं में जो निष्क्रियता और विलासिता फैल रही थी, उसी के प्रतिबिम्बि थे ये श्रृंगार-काव्य। काव्यों में हृदय पक्ष की अपेक्षा बुद्धि पक्ष ही विशेष प्रबल था। अतः भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष ही अधिक निखर उठा था। परिणाम-स्वरूप सभी रचनाओं का एक मात्र लक्ष्य पाण्डित्य-प्रदर्शन ही रह गया था। यह युग 'यक्षगान-साहित्य' के लिए स्वर्ण युग है। बीसियों की संख्या में यक्षगान लिखे गए। इसी समय गद्य-साहित्य का भी प्रारम्भ हुआ।

प्रान्त तो तमिल था और राजा महाराष्ट्रीय शासक थे; फिर भी इस काल में आन्ध्र-साहित्य की अपूर्व श्रीवृद्धि हुई।

तंजाऊर, मधुरा, गद्वाल, विजयनगर, बोब्बिली, वेंकटगिरि आदि के अतिरिक्त, आन्ध्र देश के सभी छोटे-मोटे राज्य-रियासत कविता के क्षेत्र बन गए।

आधुनिक युग (1875 से 1920 तक) :

सन् सत्तावन का स्वतन्त्रता-युद्ध भारतीय साहित्य में ही नव जागरण का सन्देश लाया हो, ऐसी बात नहीं है; बल्कि इसके परिणाम स्वरूप, पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध से मुंह फेरकर भारतीय स्वदेश और स्वभाषा की ओर ध्यान देने लगे। समग्र राष्ट्र में उद्‌बुद्ध यह नवीन चेतना राजनैतिक, धार्मिक,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में अभिव्यक्त होने लगी। राजनैतिक क्षेत्र में कांग्रेस के रूप में, धार्मिक क्षेत्र में आर्य समाज के रूप में, सामाजिक क्षेत्र में ब्रह्म समाज के रूप में व्यक्त हुआ। विचारों की अभिव्यक्ति का साधन साहित्य ही है। अतः नव जागरण का सुष्ठु प्रभाव देश के प्रत्येक प्रान्त के भाषा-साहित्य में परिलक्षित होने लगा। एक ही तरह के भावों को भिन्न-भिन्न भाषा का जामा पहनाकर व्यक्त किया जाने लगा।

आधुनिक युग की सभी प्रवृत्तियों एवं आन्दोलनों का सम्यक् प्रभाव तेलुगु साहित्य पर पड़ा।

तेलुगु के आधुनिक साहित्य से परिचय प्राप्त करने से पहले दो ऐसे अंग्रेजी महानुभावों के नामों का उल्लेख होना चाहिए, जिनका आन्ध्र चिर-ऋणी है। सर सी. पी. ब्राउन महाशय ने अथक परिश्रम कर तेलुगु की अनेक अप्रकाशित एवं जीर्ण प्राय पुस्तकों का पुनरुद्धार किया, तेलुगु का एक व्याकरण बनाया और अंग्रेजी-तेलुगु, तेलुगु-अंग्रेजी के शब्दकोश तैयार किए। दूसरे महानुभाव हैं कर्नल कालिन मेकन्जी, जिन्होंने गाँव-गाँव घूमकर प्राचीन पुस्तकों का उद्धार किया, लुप्त इतिहास पर प्रकाश डाला और कवियों की लुप्त रचनाओं को प्रकाश में लाने का महान कार्य किया।

आधुनिक युग के प्रारम्भ में ही चिन्नयसूरि (1809—1862) नामक एक बड़े विद्वान् ने 'बाल-व्याकरणमु' की रचना की जो इस भाषा का परिनिष्ठित (स्टैण्डर्ड) व्याकरण माना जाता है। उस व्याकरण के लक्ष्य के रूप में 'नीति चन्द्रिका' (पञ्चतन्त्र) नामक पुस्तक को गद्य में लिखा।

19 वीं शती के चतुर्थ चरण का आरम्भ ही आधुनिक युग का उषःकाल है। पाश्चात्य प्रभाव से नव चेतना की जो लहर उमड़ पड़ी, उसके परिणाम स्वरूप साहित्य में विभिन्न शैलियों और रीतियों का प्रारम्भ हुआ। गद्य साहित्य के लिए वीरेशलिंगम और पद्य साहित्य के लिए तिरुपति-वेंकट कवि ने युग पुरुष के रूप में नवीन साहित्य का श्रीगणेश किया। तेलुगु कविता को पाण्डित्य के कठघरे से मुक्त कर, उसे जनसामान्य तक पहुँचाकर, फिर से उसे नव जीवन देने वाले इन महाकवियों के शिष्य-प्रशिष्यों से आधुनिक आन्ध्र साहित्य भरा पड़ा है।

आन्ध्र साहित्य में प्राचीन सम्प्रदायों के अनुकूल भाषा और भावों में कविता करने वाले आज भी हैं। 19 वीं शती के अन्तिम चरण में और 20 वीं प्रथम दशक में इन प्राचीन सम्प्रदायवादी कवियों की संख्या अधिक थी। इनमें श्री श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री (1865—1961) का विशिष्ट स्थान है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शास्त्री जी ने 'रामायण' 'भारत' और 'भागवत' इन महाकाव्यों के अतिरिक्त सौ से अधिक काव्यों की रचना की है। आप राजमहेन्द्री में रहते थे। आपकी कविता, विषय और शैली में एकदम प्राचीन ढर्रे की है। दीर्घ समासों से भरी हुई होने पर भी आपकी कविताओं में अनुपम प्रवाह है। श्री वेंकटशास्त्री जी के बाद आपको राजकवि के पद पर नियुक्त कर आन्ध्र सरकार ने आपका सम्मान किया था।

प्राचीन सम्प्रदायवादी कवियों में श्री वाविलकोलनु सुब्बाराव, जनमञ्चि शेषाद्रि शर्मा, कोक्कोण्डा वेंकटरत्नम् पन्तुलु, वड्डादि सुब्बारायडु, वेदमु वेंकटराय शास्त्री, मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री, दासु श्रीरामलु आदि मुख्य हैं। 'आन्ध्र वाल्मीकि' के नाम से प्रसिद्ध वाविलकोलनु सुब्बाराव ने 'वाल्मीकि-रामायण' का यथामूल अनुवाद किया, उनके जीवन काल में ही इस अनुवाद के चार संस्करण प्रकाशित हो गए थे। उनकी व्याख्या के रूप में उन्होंने स्वयं 'मन्थरमु' नामक टीका भी लिखी है।

प्राचीन सम्प्रदाय को न छोड़ते हुए नवीन भाव से युक्त कविता करने वालों में श्री वेंकट-पार्वतीश्वर कवि-युग्म प्रमुख हैं। इनकी 'एकान्त सेवा' एक तरह से 'मर्मकविता' (रहस्यवादी कविता) का बीज बोनेवाली है।

वीरेशलिंगस पन्तुलु जी ने भी शुरू-शुरू में प्राचीन सम्प्रदायवादी रचनाएँ की थीं, पर समाज-सुधार के लिए पद्य की अपेक्षा गद्य को अधिक उपयुक्त मानकर बाद में गद्य में ही रचनाएँ करने लग गए। 'शुद्धान्ध्र-निरोष्ठ्य-निर्वचन-नैषधमु' नामक काव्य में आपने अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन किया है। इस ग्रन्थ को आपने ठेठ तेलुगु में, बिना ओष्ठ्य वर्णों के और वचन (गद्य) में लिखा। उसके बाद नारद-सरस्वती सम्वादमु. में अपने निर्जीव-सी तेलुगु कविता की दुर्दशा का विदारक चित्रण किया।

बीसवीं शती के पहले दशक में यद्यपि प्राचीन काव्यधारा का जोर रहा; फिर भी नवीन कविता धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमाने लगी थी। गुरजाडा अप्पाराव जी ने 'मृत्याल सरमुलु' नामक गय कविताओं के एक संग्रह का प्रकाशन कर नव कविता का श्रीगणेश किया। 'कोत्तपातल मेलु कलयिक, क्रोम्मेरुंगुलु जिम्म' (प्राचीन और नवीन के सुन्दर सम्मेलन से, नव आलोक को फैलाते) कविता करने की प्रतिज्ञा, नूतन वस्तु, नए छन्द और व्यावहारिक भाषा का प्रयोग करते हुए, सर्व मानव-समत्व, देशभक्ति आदि भावों से भरी कविताएँ लिखीं। 'देशमण्टे मट्टि कादोयि, देशमण्टे मनुपुलोयि' (देश का अर्थ मिट्टी नहीं है, देश से मतलब जनता से है।) 'मञ्चि अन्नदि माल अयिते,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नेनुगूड मालनवुतायोनि' (यदि अच्छाई 'माला' (हरिजन; पञ्चम) है, तो मैं भी वही बनूंगा।) आदि पंक्तियों का सूक्तियों के रूपों में उपयोग होता है।

श्री रायप्रोलु सुब्बाराव ने प्राचीन गौरव का गान करते हुए, राष्ट्रीयता के भावों का प्रचार किया था। आप पर विश्वकवि गुरुदेव का प्रभाव पड़ा था।

वेदशाखलु वेलसे निच्चट
आदिकाव्यं बलरे निच्चट।

[वेदों की शाखाएँ फैल पड़ीं यहाँ, आदि काव्य रचा गया यहाँ पर।]

1913 में ही इन्होंने 'ललिता', 'तृणकंकणमु' नामक खण्ड काव्यों की रचना कर, भाव कविता (छायावादी कविता) के बीज बोए।

20 वीं शती के दूसरे शतक में स्वतन्त्रता का आन्दोलन जोर पकड़ने लगा। सत्याग्रह-समर का सर्व प्रथम प्रारम्भ गुण्टूर जिले में हुआ था। 'साइमन कमीशन' को पहली बार काला झण्डा दिखाने वाला वीर एक आन्ध्र ही था। उस वीर का नाम था श्री टंगुटूरि प्रकाशम पन्तुलु जो बाद में आन्ध्र-केसरी कहलाया। समग्र देश की स्वतन्त्रता की पुकार के साथ, प्रत्येक प्रान्त की माँग भी आन्ध्र की थी। इन दोनों भावों ने मिलकर देश के और विशेषकर आन्ध्र की प्राचीन गौरव गाथाएँ, वर्तमान दुर्दशा आदि पर प्रभावशाली कविताएँ करने की प्रेरणा दी। श्री गरिमेल्ल सत्यनारायण कवि ने ब्रिटिश सरकार की निरंकुशता का बड़ा ही मार्मिक वर्णन करते हुए लिखा है :—

नूट नलुबदिनाल्गु नोटिकि तगिलिंचि
माट लाडवद्दंटाडु; मम्मु
पाट पाड वद्दंटाडु; टोपी
तीसि वीपुन बापुन बादुताडु।

[(ब्रिटिश सरकार का) वह सिपाही हमारे मुँह पर 144 धारा लगाकर हमें बोलने से मना करता है। हमें अपना (राष्ट्रीय) गीत तक गाने नहीं देता। (सिर पर से) टोपी नीचे फेंककर पीठ पर प्रहार करता है।]

'हंपी क्षेत्रमु' नामक कविता में कोड़ालि सुब्बाराव प्राचीन आन्ध्र के गौरव का स्मरण कर वर्तमान की दुर्दशा को देखकर कराह उठते हैं—

शिललु द्रविंचि एड्चिनवि,
जीर्णमुलैनवि तुंगभद्रलोपल गुडिगोपुरमुलु,
सभास्थलुलैनवि कोंडमुच्चु गुंपुलकु
चरित्रलो मुनिगिपोयिनादान्ध्र वसुन्धराधिपोज्ज्वल विजय
प्रताप रभसंबोक स्वप्न कथावशेषमै।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(शिलाएँ भी पिघल कर रो पड़ीं। मन्दिर और महल तुंगभद्रा में डूबकर खण्डहरों में परिवर्तित हो गए। वे बन्दरों के सभा स्थल बने हुए हैं। आन्ध्र राजाओं के उज्ज्वल प्रताप की कहानी स्वप्न-कथा मात्र बनकर, इतिहास में लुप्त प्राय हो गई है।)

विश्वनाथ सत्यनारायण ने प्राचीन आन्ध्र वैभव का गान करते हुए 'आन्ध्र-प्रशस्ति', 'आन्ध्र-पौरुष' आदि कविताएँ लिखी हैं।

ब्रिटिश शासन की क्रूरता और प्रचण्डता को देखकर कुछ सुकुमार विहंगम अपने नीड़ों में छिपे-छिपे कुछ गुनगुनाने लगे। प्रथम महायुद्ध के बाद सारे देश में निराशा-सी फैल गई थी। जिस प्रकार की परिस्थितियों में हिन्दी क्षेत्र में छायावाद का जन्म हुआ, तेलुगु में उसके (छायावाद के) समकक्ष 'भाव-कविता' पनप उठी और 1920 के बाद तेलुगु कविता में लाक्षणिक प्रयोग, आत्माभिव्यक्ति, भाषा की वक्रता, अस्पष्टता, एवं प्रकृति-प्रेम आदि की धूम मच गई। रीति और नियमों के स्थान पर अब भाव और लय का आग्रह बढ़ने लगा।

नाटक :

यक्षगान देशी रूपक हैं। ऐसा माना जाता है कि इन देशी रूपकों को छोड़ संस्कृत रूपक के लक्षणानुसार श्री कोराड रामचन्द्र शास्त्री ने 'मञ्जरी मधुकरीयमु' नामक पहला नाटक लिखा। उनके बाद कई प्रसिद्ध पण्डितों ने और कवियों ने संस्कृत, अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के नाटकों के सुन्दर अनुवाद प्रस्तुत किए हैं। केवल 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' ही के लगभग बीस अनुवाद प्रकाशित हुए हैं।

आन्ध्र नाटक साहित्य की विशेषता यह रही है कि यहाँ के नाटक प्रारम्भ से ही 'रंगस्थल' को ध्यान में रखकर लिखे जाते थे। 1880 में धारवाड़ (महाराष्ट्र) से जो नाटक कम्पनियाँ आई, उनके प्रभाव से कई नाटक मण्डलियाँ खुलीं और अभिनय के लिए कई सुन्दर नाटक लिखे गए। बल्लारि में धर्मवरमु रामकृष्णमाचार्य (1884) ने कई मौलिक नाटक लिखे और 'सरस विनोदिनी' सभा के तत्वावधान में ये नाटक अभिनीत हुए। चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंह जी ने 'गयोपाख्यानमु', 'पारिजातापहरणमु' आदि पौराणिक नाटक लिखे। तिरुपति-वेंकट कवियों के 'पाण्डव उद्योग विजय' नाटक बहुत प्रसिद्ध है।

19 वीं शती में लिखे गए नाटकों में 'विषाद-सारंगधर' (प्रथम दुखान्त नाटक) गुरजाडा अप्पाराव का 'कन्या शुल्कमु' (प्रथम सामाजिक-व्यंग्यात्मक नाटक जो व्यावहारिक भाषा में लिखा गया है।) और वेदमु वेंकटराय शास्त्री जी का 'प्रताप रुद्रीयमु' (पात्रोचित भाषा का प्रयोग करनेवाला प्रथम नाटक) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

20 वीं शती के प्रारम्भ में इसी प्रकार के पौराणिक इतिवृत्त पर आधारित नाटक ही अधिक लिखे गए। द्वितीय दशक में सामाजिक नाटकों की रचना होने लगी।

अन्य साहित्यिक प्रक्रियाओं के समान ही वीरेशलिंगम जी ने प्रहसनों के रूप में एकांकी का प्रारम्भ किया है। उस समय कोक्कोण्ड वेंकटरत्नम पन्तुलु ने 'नरकासुर-विजय-व्यायोग' का अनुवाद कर संस्कृत के एकांकी के स्वरूप का दिग्दर्शन कराया।

वीरेशलिगम पन्तुलु जी का 'राज शेखर चरित्र' जो उस समय के समाज का दर्पण है, तेलुगु का पहला उपन्यास माना जाता है। यह 'विकार आफ वेकफील्ड' का छायानुसरण मात्र है। गुलीवर की कहानियों के समान उन्होंने 'सत्य राजा पूर्व देश यात्राएँ' नामक पुस्तकें भी रची हैं।

कोक्कोण्ड वेंकटरत्नम पन्तुलु ने कादम्बरी का आधार लेकर सन् 1864 में 'महाश्वेता' नामक उपन्यास लिखा।

स्वयं लिखने की अपेक्षा प्रतियोगिताएँ चलाकर वीरेशलिंगम जी ने कई उपन्यास लिखवाए। इनमें चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहम जी के 'रामचन्द्र विजयमु', 'हेमलता', 'कर्पूरमञ्जरी', 'अहल्याबाई', 'सौन्दर्य तिलक' मुख्य हैं। केतवरपु वेंकटशास्त्री और भोगराजु नारायण मूर्ति ने कई ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं। अडवि बापिराजु के 'हिमबिन्दु', 'गोन नन्नारेड्डी' आन्ध्रों के इतिहास से सम्बन्धित है। विश्वनाथ सत्यनारायण जी ने भी कई उपन्यास लिखे हैं। इनमें सबसे छोटा उपन्यास 'एक वीरा' है। यह उपन्यास रचना-कौशल में अद्वितीय है। आपका सबसे बड़ा उपन्यास 'वेयिपडगलु (सहस्र फन) तो भारतीय संस्कृति का मानो विश्वकोष ही है।

सन् 1850 से ही संस्कृत की कई कथाओं के अनुवाद और छायानुवाद होने शुरू हो गए थे। चिन्नयसूरि, वीरेशलिंगम पन्तुलु, वेंकटरत्नम पन्तुलु, वेंकटराय शास्त्री ने शिष्ट भाषा में कई कहानियाँ लिखी हैं, पर इन्हें आधुनिक कहानी की परिभाषा की कसौटी पर नहीं कसा जा सकता।

20 वीं शती के प्रारम्भ में कई पत्र-पत्रिकाओं में संस्कृत के अतिरिक्त अंग्रेजी एवं अरबी कहानियों के अनुवाद प्रकाशित होते थे।

श्री गुरजाडा अप्पाराव ने सन् 1911 में आज की कहानी रचना का श्रीगणेश किया। बिद्बाटु (भूल-सुधार) 'देवुड चेसिन मनुषुल्लरा' (भगवान के बनाए हुए हे मानवो !) आदि कहानियाँ तेगुलु की प्रारम्भिक कहनियाँ' हैं। 1915 में दैनिक 'आन्ध्र-पत्रिका' के शुरू होते ही अधिक संख्या में कहानियाँ लिखी जाने लगीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चिन्ता भीमशंकरम् जी की जासूसी कहानियाँ, कोडवटिगण्टि वेंकट सुब्बय्य की सामाजिक कहानियाँ, चिन्ता दीक्षितुलु की बालोपयोगी कथाएँ इसी युग की हैं। मुनि माणिक्यम नरसिंहाराव गृहस्थ जीवन में निहित हास्य को अभिव्यक्त करते हुए रचना करने लग गए।

1920 में 'साहिती' के प्रकाशन से कहानी रचना को और भी प्रोत्साहन मिला।

आलोचनात्मक साहित्य के जन्मदाता भी वीरेशलिंगम ही हैं। 'आन्ध्र कवुल चरित्र' उनकी विशिष्ट कृति है। 20 वीं शती के प्रथम दशक में सर सी. आर. रेड्डी का 'कवित्व तत्व विचारमु' आधुनिक (पाश्चात्य विचार-धारा से प्रभावित) आलोचना का प्रवर्तक ग्रन्थ है। इस समय तेलुगु में आलोचनात्मक पुस्तकें लिखी तो गईं, पर उनकी संख्या अधिक नहीं है।

लेखकों की संख्या, रचनाओं की संख्या और साहित्य के विभिन्न प्रकारों के विस्तार की दृष्टि से भारतीय साहित्य के क्षेत्र में तेलुगु साहित्य का एक विशिष्ट स्थान है। कहा भी है कि आन्ध्र के प्रत्येक घर में कम-से-कम एक कवि है। इस विस्तृत साहित्य का इन थोड़े से पृष्ठों में परिचय मात्र कराने का यह अल्प प्रयास है।

[**नोट**—सन् 1920 से आज तक के तेलुगु साहित्य का संक्षिप्त परिचय 'कवि-श्री माला तेलुगु–काटूरि वेंकटेश्वर और पिंगलि लक्ष्मीकान्तम में दिया गया है।]

तिरुपति वेंकट कवुलु :

"दोसमटं चेरिगियुनु दुंदुडुकोप्पग वेंचिनार मी
मीसमु रेंडु वासलकु मेमे कवींद्रुलमंचु देलपगा
रोसमु कल्गिनं गविवरुल् ममु गेल्वुडु-गेल्चिरेनि यी
मीसमु तीसि मी पदसमीपमुलं दललुंचि म्रोक्कमे।"

[यह जानकर भी कि मूंछ रखना दोष है अक्खड़ता के साथ मूंछ यह बताने के लिए बढ़ा रखी है कि दोनों भाषाओं में—आन्ध्र और संस्कृत में—हम ही कवीन्द्र हैं। जिन्हें इन मूँछों को देखकर रोष आता हो, वे हमें जीत लें। यदि जीतें तो इन मूँछों को निकाल कर, आपके चरणों पर सिर न रख दें?]

इस प्रकार की अपूर्व प्रतिज्ञा कर, एक अर्द्धशती तक आन्ध्र-कविता-साम्राज्य पर निर्द्वन्द्व शासन चलाने वाले कवि युग्म के कवि श्री तिरुपति और श्री वेंकट। उनके शिष्यों-प्रशिष्यों एवं एकलव्य शिष्यों से भरा पड़ा है आधुनिक-आन्ध्र-काव्य जगत्।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस कवि युग्म में पहले व्यक्ति श्री दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री हैं, दूसरे हैं श्री चेळ्ळपिळ्ळ वेंकट शास्त्री। तिरुपति शास्त्रीजी का जन्म कृष्णा जिले के 'एण्डगण्डि' नामक ग्राम में सन् 1871 में हुआ और मृत्यु सन् 1919 में हुई। माता का नाम शेषम्मा और पिता का नाम वेंकटावधानी था। वेंकट शास्त्री जी का जन्म 'एनाम' (भारत में फ्रांसीसी उपनिवेश) में हुआ पर निवास स्थान पश्चिम गोदावरी जिले का 'कड़ियम' नामक ग्राम था। इनका जन्म सन् 1970 में हुआ और मृत्यु सन् 1950 में। श्री वेंकट शास्त्री की माता का नाम चन्द्रम्मा और पिता का नाम कामय्य था। तिरुपति शास्त्री शिष्टाचार-सम्पन्न पण्डित परिवार के थे। उनके पिता, दादा-परदादा वेदों के प्रसिद्ध पण्डित थे। वेंकट शास्त्री जी का परिवार कविता का आकर था। उनके परदादा नरसकवि ने 'यामिनीपूर्ण तिलक विलासमु' और 'वेंकटेश्वर विलासमु' नामक प्रबन्ध-काव्यों की रचना की थी। इन दोनों में प्रकाण्ड विद्वान् श्री चर्ल ब्रह्मय्य शास्त्री जी के यहाँ व्याकरण शास्त्र का अध्ययन किया। संयोग से सहाध्यायी बने। और दोनों महानुभावों का जीवन पर्यन्त अटूट संग बना रहा। ब्रह्मय्य शास्त्री जी के पास आने से पहले वेंकट शास्त्री जी ने थोड़ी-बहुत अंग्रेजी, तेलुगु भाषा और साहित्य का अध्ययन किया। उसी समय वे थोड़ा-सा गाना-बजाना, कुश्ती लड़ना तथा कविता करना भी सीख गए थे। श्री श्रीपाद-कृष्णमूर्ति शास्त्री[1] के पास आपने तीन महीने तक 'कुमार सम्भव' के दो सर्ग पढ़े। एनाम के भगवान वेंकटेश्वर पर आपने एक शतक लिखना शुरू किया। उसमें प्रयुक्त कुछ व्याकरण विशेषों का जवाब न दे सकने के कारण पाणिनीय व्याकरण पढ़ने के लिए आप काशी को चल पड़े। मार्ग में राघवाचार्य, अनन्ताचार्य, और सूरय्य के पास थोड़े-थोड़े समय तक पढ़ते रहे। आँख की बीमारी के कारण कुछ समय तक आपकी पढ़ाई बन्द रही। अन्त में आप ब्रह्मय्य शास्त्री जी के पास आए। उस समय तिरुपति शास्त्री ब्रह्मय्य जी के पास अध्ययन कर रहे थे। वेंकट शास्त्री जी में हठ और श्रद्धा अधिक थी जब कि तिरुपति शास्त्री जी कई विषयों को देखी-अनदेखी कर देते थे। इन दोनों का मेल सोने में सुगन्ध-सा सिद्ध हुआ। वेंकट शास्त्री जी के सम्पर्क से ही तिरुपति शास्त्री जी को कविता करने का अभ्यास हो गया था। इसीलिए वे एक स्थान पर कहते हैं—

---

1. आन्ध्र के दूसरे राजकवि हैं, जिनकी मृत्यु 1916 में हुई। इन्होंने सौ से अधिक पुस्तकें लिखी हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वितताल्मीय शतावधान कविता विद्यापयोराशिसं
भृत शिष्यांबुद वाङ्मयामृतरस प्रीताखिलान्ध्र क्षमा
धृत रज्यद्रसिकावतंसकृत वंदि स्तोत्रमालाविभू
षितु मा वेंकटशास्त्री ने बोगडेदन् शिष्यस्वरूपम्मुनन् ।

[अपने महान शतावधान कविता रूपी विद्या के लिए समुद्र समान, सम्यक् रूप से सम्पन्न शिष्य मेघों के वाङ्मय के अमृत रस से सन्तृप्त बने समग्र आन्ध्र के प्रसन्न बने रसिक श्रेष्ठों द्वारा किए गए स्तोत्र रूपी मालाओं से विभूषित वेंकट शास्त्री की मैं, शिष्य स्वरूप में स्तुति करूँगा ।]

विद्याध्ययन के समय से ही दोनों ने मिलकर कविता करने का अभ्यास किया । 'माता-पिता के एक न होने पर भी दोनों विद्या के कारण ही भाई-भाई बने और समस्त रचनाएँ मिलकर ही करने लग गए । 'ओक्करू रचियिंचिरेनियुनु गादगु दिर्पति वेंकटीयमैं' (कोई एक भी लिखे तो वह रचना 'तिरुपति-वेंकटीय' मानी जाएगी ।) इस वचन को उन्होंने जीवन पर्यन्त निभाया । तिरुपति शास्त्री के स्वर्गवास के बाद लगभग तीस वर्ष तक वेंकट शास्त्री निरन्तर लिखते रहे, पर वे सारी रचनाएँ दोनों के नाम पर हैं । ऐसे उदाहरण संसार के इतिहास में विरले ही मिलते हैं ।

अध्ययन के समाप्त होने पर कुछ समय तक इस कवि युग्म ने समग्र आन्ध्र देश को अपने अवधान-कविता के प्रवाह से परिप्लावित कर दिया । कविता को पण्डितों की चहारदीवारी से बाहर लाकर उसे जन-सामान्य तक पहुँचाया । अवधान कला का प्रदर्शन करते हुए वेंकटगिरि, गद्वाल, आत्मकूरु, वनपर्ति, विजयनगर, किर्लपूडि, नूजिवीडु, बोब्बिलि आदि आन्ध्र देश के प्रसिद्ध 'संस्थानों' (रियासतों) में जाकर, वहाँ के शासकों को अपनी प्रतिभा-व्युत्पत्ति से प्रभावित कर, उनसे पुरस्कार प्राप्त किए । तदुपरान्त मछलीपट्टणम के नागरिकों के निमन्त्रण पर, वेंकट शास्त्री वहाँ के हिन्दू हाइस्कूल में लगभग तेरह वर्ष तक तेलुगु के अध्यापक के रूप में कार्य करते रहे । उस समय यह नगर आन्ध्र के राजनैतिक सामाजिक और साहित्यिक जागरण का केन्द्र बना हुआ था । इस हाइस्कूल में काम करते हुए, भाषा की शिक्षा की अपेक्षा, उन्होंने कविता की शिक्षा खूब दी । उनकी प्रेरणा से उत्साह प्राप्त कर, कवि के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करने वालों में विश्वनाथ सत्यनारायण, वेटूरि प्रभाकर शास्त्री, वेलूरि शिवराम शास्त्री, काटूरि वेंकटेश्वरराव, पिंगलि लक्ष्मीकान्तम आदि प्रमुख हैं । तिरुपति शास्त्री जी पोलवरमु के जमींदार श्री कोच्चेर्लकोट कृष्णाराव बहादुर जी के दरबार के विद्वान् बने हुए थे । वेंकट कृष्णाराव जी प्राच्य एवं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाश्चात्य भाषाओं के विद्वान् थे। इस प्रकार का आदार-सत्कार वे थोड़े ही दिनों तक पा सके थे कि काल पुरुष उन्हें उठा ले गया। दिवाकर के अस्तंगत होने पर वेंकट शास्त्री इस प्रकार विलख उठे—

नाकन्न धीबलम्मुन
नेकादु तनूबलमुन नेंतयु हेच्चौ
लोकस्तुत्युडु तिर्पति
नाकन्नन् मुन्नें येट्लु नाकमु मुट्टेन।

[मेधाबल में ही नहीं शारीरिक बल में भी मुझ से कहीं शक्तिशाली हैं। लोक से प्रशंसित तिरुपति शास्त्री, मुझसे पहले ही कैसे स्वर्ग को पहुँच गए।]

सन् 1919 के बाद से सन् 1950 तक वेंकट शास्त्री जी की कलम से लिखी गई सभी रचनाएँ दोनों के नाम पर ही प्रकाशित हैं।

सन् 1933 में मछलीपट्टणम में महान् वैभव के साथ श्री वेंकट शास्त्री जी का षष्ठिपूर्ति-महोत्व मनाया गया। उसके बाद श्री शास्त्री जी कृष्णा नदी के किनारे विजयवाड़ा में बस गए और अन्त तक वहीं रहे।

देश के स्वतंत्र होने पर हमारी सरकार ने भारत की प्रत्येक भाषा के लिए एक राजकवि की नियुक्ति की। आन्ध्र देश में सर्वप्रथम उस गौरव को पाने वाले श्री वेंकट शास्त्री ही थे। उन्हें पुरस्कृत करने के लिए आन्ध्र और मद्रास सरकार ने (तब तक अलग आन्ध्र प्रान्त नहीं बना था।) विजयवाड़ा में उपस्थित हो उस महाकवि एवं शतावधानी का सत्कार कर अपने को धन्य माना।

सन् 1950 को फरवरी की 15 तारीख को शिवरात्रि के पर्व पर वेंकट शास्त्री जी कैलासवासी हो गए।

रायलु युग में नन्दि मल्लय और घण्ट सिंगय नामक दो कवियों ने मिलकर कविता की थी, पर पता नहीं, उन्होंने अवधान-विद्या का प्रदर्शन किया या नहीं। कहा जाता है कि वसु चरित्र के कर्ता रामराज भूषण 'शत लेखिनी ग्रन्थ सन्धान चातुरी' युक्त थे। आधुनिक काल में माडभूषि वेंकटाचार्य, देवुलपल्लि बन्धु, वेंकट रामकृष्ण कवि (अन्तिम दो कवि युग्म हैं) आदि ने भी 'अवधान' किए थे। पर तिरुपति वेंकट कवुलु के समान इस विद्या को विख्यात करने वाले नहीं थे। 'जगदाश्चर्य-करावधान कविता सम्पत्ति' से कवि युग्म तिरुपति वेंकट कवि ही थे। प्रारम्भ में ये 'तिरुपति वेंकटेश्वर' (बालाजी) ही के नाम से प्रसिद्ध हुए थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'अष्टावधान' और 'शतावधान' की प्रक्रियाओं का यहाँ थोड़ा परिचय दे देना असंगत नहीं होगा। 'शतावधान' का अर्थ है सौ लोगों को, उनकी इच्छा पर, (विषय और वृत्त) संस्कृत में और तेलुगु में, क्रम से सौ आशु पद्यों के प्रथम चरण मात्र सुनाना। सौ पद्यों को सुनाने के बाद उसी संख्या में से या श्रोताओं की इच्छा के अनुकूल फिर उन्हीं पद्यों के पूरे चार चरण सुनाना पड़ता है। 'अष्टावधान' में चार-पाँच लोगों को आशु कविता सुनाना—किसी को किसी विषय पर पद्य, समस्या पूर्ति, निषेधाक्षरी, व्यस्ताक्षरी, दत्ताक्षरी आदि प्रकार के पद्य, शास्त्र-चर्चा या आकाश पुराण, घण्टियों को गिनना, शतरञ्ज आदि आठ कामों में चित्त को एक ही समय में एकाग्र करना। अन्त में फिर से सभी पद्य सुनाना। इस प्रकार के इन दो विद्याओं में, इस कवि युग्म ने अपूर्व प्रतिभा दिखा, प्रति पक्षियों से भी प्रशंसा पाई। तिरुपति शास्त्री का अप्रतिम पाण्डित्य और वेंकट शास्त्री की असाधारण मेधा ने मिलकर इस कठिन कार्य को सुगम बना दिया। दिनभर दिमाग को हल्का कर देनेवाले शतावधाम अष्टावधान में लगे रहकर, रात में देर तक विनोद कार्यक्रमों में भाग लेकर, मजे की नींद सोकर, फिर दूसरे दिन सवेरे कुछ खाए बिना ही अवधान के शेष भाग की पूर्ति करने के लिए तैयार रहने वाले इस कवि युग्म को देख, लोग चकित रह जाते थे। दोनों के हृदय और मस्तिष्क एक से काम करते थे। प्रौढ़ पण्डितों और प्रभुओं की सभाओं में ही नहीं, बाल-पामर-गोष्ठियों में भी अपनी कविता-चातुरी से प्रशंसाएँ पाते थे। एक बार उन्होंने स्वयं कहा है :—

शतघंटकवनम्मु सल्पु संगतियन्न
गरतलामलकाम्मु गादेमाकु,
अष्टावधानकष्टावलंबनमन्न
'नंविकोंडय दंडनंबु' माकु,
आशुधारा कवित्वाडंबरं बन्न
'नल्लेरु पै बंडिनडक' माकु,
सत्काव्य निर्माण चाकचक्यंबन्न
षड्रसोपेत भोजनमु माकु,
व्यर्थमगु वादमुलोनर्चुनट्टि वारि
डंब मणगिंचुटापोशनंबु माकु
दानराधेय ! कविसमुदायगेय !
पंडितविधेय ! रामभूपालराय !

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

[सौ लेखिनयों को साथ-साथ कविता कहना, यह कार्य हमारे लिए हस्तामलक (सुलभ साध्य) है। अष्टावधान रूपी कठिन कार्य हमारे लिए 'नविकोण्डय के दण्ड' के समान अत्यल्प है। आशुधारा से कविता कहना (लोग इसे आडम्बर मानते हैं) हमारे लिए हड़जोड़ा पर गाड़ी के चलने के समान है। सत्काव्य निर्माण (रचना) का कार्य हमारे लिए, षड्रसोपेत भोजन के समान है। व्यर्थ ही वाद विवाद करनेवालों के गर्व का दमन करना हमारे लिए आपोशन के समान है। हे दानराधेया! कवि समुदायगेया! पण्डित विधेया'! हे राम-भूपाल राय! यह है हमारी सामर्थ्य]

ओक चरणंबतंडु मरियोक्कटि नेनु मरोक्कटातडुन्
सकल कवींद्रसंततुलु सम्मति चे दललूचि मेच्चगा
प्रकटतराशुधार दनरन् रचियिंपगनेर्तुमय्य !' नू
टिकि सेलगय्य ! निक्कमिदि डेब्बदिमाटलु सेप्पनेटिकिन् !

[एक चरण वह और एक चरण मैं, इस प्रकार सकल कवीन्द्रों की प्रशंसाओं के पात्र होते हुए, प्रसिद्ध आशुधारा से कविता कर सकते हैं। सौ पद्यों तक कोई संकोच नहीं है, कहते जाएँगे, हे राजन्! यह तो सच है। हजार बातें क्यों कहें!]

गुरुकुल से निकलते ही उन्होंने पहली बार 'काकिनाड़ा' नामक नगर में श्री दुरिसेटि शेषगिरि राव जी के यहाँ अष्टावधान किया। तब इनकी आयु केवल 20 वर्ष की थी। श्री शेषगिरि राव जी इन युवकों की अनन्य प्रतिभा और मेधा से चकित हो गए थे। तब इनकी सामर्थ्य की और अधिक परीक्षा करने के लिए श्री वादम् वेंकटरत्नम ने शतावधान करने के लिए कहा। ये युवक मान गए। दूसरे दिन सभा का आयोजन किया गया। उस दिन शाम को दोनों मिलकर गाँव के बाहर नारियल के वन में गए और वहाँ नारियल के वृक्षों को ही प्रश्नकर्ता मानकर उन्होंने वहाँ 'शतावधान' किया। इस शतावधान के बाद उन्हें यह आत्मविश्वास हो गया कि शतावधान तो क्या अब सहस्रावधान भी किया जा सकता है।

दूसरे दिन बहुत बड़ी सभा हुई। प्रश्न करनेवाले सौ पण्डित सामने बैठे हुए थे और उनके पीछे सैकडों की संख्या में जनता बैठी हुई थी। सौ विषयों पर दो-दो चरण कहते-कहते शाम हो गई। अब शेष दो चरणों की पूर्ति कैसे हो? कल पर यदि छोड़ दें तो ये कवि रात भर में सोच लेंगे और कल कह देंगे, अतः अवकाश नहीं देना चाहिए। तब सभी पण्डितों ने एक निर्णय किया कि सौ पद्यों को कह सुनाने की आवश्यकता नहीं है, क्रम छोड़कर किन्हीं दस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पण्डितों को उनके पद्य सुनाएँ तो ठीक रहेगा। उसके लिए भी ये युवक तैयार हो गए और दस, सोलह, बत्तीस, तीन, सौ, छप्पन इस तरह बिना किसी क्रम के ही पद्यों को इन्होंने सहज ही में सुना दिया। इसे देखकर सभी लोग दंग रह गए और देश के चारों कोनों में तिरुपति वेंकट कवियों की अनुपम प्रतिभा की बात फैल गई। अब वहाँ से आन्ध्र प्रदेश के सभी बड़े नगरों में, सभी संस्थाओं में इन कवियों ने अष्टावधान और शतावधान किए। जहाँ भी गए विजयश्री इन्हीं के पल्ले पड़ती थी। तिरुपति शास्त्री अपने पाण्डित्य और प्रतिभा से विरोधियों को निरुत्तर कर देते तो वेंकट शास्त्री उदण्डता और समस्या पूर्ति से विरोधियों को मुंह-तोड़ जवाब देते। राजाओं और जमींदारों ने स्वागत-सत्कार किया है, वरन् चार गालियाँ देकर ये लोग वहाँ से चल देते।

एनुगु नेक्किनारु धरणींद्रलु म्रोक्कगनिक्किनारु स
न्मानमुलंदिनारु बहुमानमुलंग्रहिंचिनार ले
व्वानिनि लेक्कपेट्टक निवारणदिग्विजयंबोनर्चि प्र
ज्ञानिधुलंचु बरुगोनिनारलु मीरु कवित्वसंपदल्।

[कविता-सम्पत्ति के कारण आप (तिरुपति-वेंकट कवि द्वय) हाथी पर चढ़े धरणी पतियों के पैर पड़ने पर अकड़े, अनेक सम्मान पाए, अनेक पुरस्कार प्राप्त किए, किसी की परवाह न कर निर्द्वन्द्व हो दिग्विजय कर आपने 'प्रज्ञानिधि' का नाम पाया।]

इनकी धारणा शक्ति से अत्यधिक प्रभावित होकर श्रीमती एनी बीसेन्ट ने इस प्रकार लिखा है।

'I have much pleasure in stating that I was present at the remarkable exhibition given by D. Tirupati Shastry and Venkata-sastry, of the powers of memory they possess. It entirely excelled anything I should have thought possible. Judging by ordinary standards and in addition to feats of memory the Shastries showed great powers of improvising Verse in difficult metres and nimble wit in repartee. (28th Dec, 1893 Adayard, Madras)

आन्ध्र विश्व विद्यालय ने वेंकट शास्त्री जी को 'कला प्रपूर्ण' की उपाधि प्रदान कर सम्मानित किया।

इस प्रकार [अट्टु गद्वात्तिटु चेन्नपट्टणमु मध्यन् गल्गु देशम्बु] (उधर गद्वाल से लेकर इधर मद्रास के बीच के समग्र देश में) घूमकर, उड़ीसा के सीमावर्ती विजयनगर तक जाकर, कविताभिषेचन के अभाव में ऊसर बने आन्ध्र-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साहित्य-क्षेत्र को, कविता की अमृत-वर्षा-धाराओं से पुलकित बना दिया, हरा भरा बना दिया। अंग्रेजी के प्रभाव से और पण्डितों की पाण्डित्य गरिमा से गूंगी-सी बनी आन्ध्र-कविता-कन्या को इन कवीश्वरों ने मुखर बना दिया।

इन अष्टावधान-शतावधानों के अनेक प्रसंगों पर होनेवाले वाद-विवादों ने इनकी कीर्ति को और भी फैलाया। ये अष्टावधान व शतावधान तिरुपति-वेंकट कवियों की प्रतिभा-व्युत्पत्ति के ज्वलन्त उदाहरण हैं। किसी ने ठीक ही कहा है कि तिरुपति-वेंकट कवियों की अपेक्षा उनसे सम्बद्ध गाथाएँ उनके मुक्तक उनकी वीरोक्तियाँ और चमत्कारपूर्ण सम्भाषण के नमूने ही देश में रह जाएँगे।

"तिरुपति वेंकट कवियों की कविता प्राचीन कविता के लिए भरत वाक्य हैं तो नवीन कविता का नांदी-पाठ है।" उनकी रचनाओं में प्राचीन कविता की पाण्डित्य-गरिमा के साथ, नवीन कविता का प्रसाद-गुण युक्तता और सरलता दृष्टिगोचर होती है। 'पाण्डित्य की अटवी' (वन) से कविता का उद्धार कर, उसे जन सामान्य तक पहुँचाने वाले तिरुपति वेंकटेश्वर ही हैं।

तिरुपति कवियों ने काव्य के अतिरिक्त नाटक, गद्य, आलोचना और कथाएँ भी लिखी हैं।

'बुद्ध चरित्रमु', 'लक्षणा 'परिणयमु', 'एल्लामाहात्म्यमु', 'श्रीनिवास विलासमु', 'देवी भागवतमु', 'पतिव्रता', 'सुशीला', 'पूर्व हरिश्चन्द्रमु', 'शिव लीलाएँ', 'श्रवणानन्दमु', 'पाणिगृहीता', 'नानाराज सन्दर्शनमु' (मुक्तक संग्रह) 'जातक चर्या' आदि काव्य ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। 'कामेश्वरी शतक' सुन्दर भक्ति शतक है।

'पाण्डव जननमु', 'पाण्डवोद्यगमु', 'पाण्डव-अश्वमेधमु', 'पाण्डव-राजसूयमु', 'पाण्डव विजयमु', 'पाण्डव-प्रवासमु', महाभारत के इतिवृत्त से सम्बन्धित इन छह नाटकों के अतिरिक्त 'मुद्राराक्षस', 'मृच्छकटिक', 'प्रभावती प्रद्युम्न' का सुन्दर अनुवाद किया है। 'बाल रामायणमु' भी एक सुन्दर अनुवाद है। 'एडवर्ड पट्टाभिषेकमु', 'व्यसन विजयमु', 'दम्भ वामनमु', 'अनर्घ राघवमु' 'पण्डित राजमु' इन कवियों के अन्य नाटक हैं।

गद्य ग्रन्थों में 'विक्रमांक देव चरित्रमु', 'चन्द्र प्रभा चरित्रमु', 'हर्ष चरित्रमु' मुख्य हैं। व्यावहारिक (बोलचाल की) भाषा[1] में लिखे गए अनेक

---

1. व्याकरण-युक्त भाषा को 'ग्रान्थिक (ग्रन्थों में उपयुक्त) भाषा' और व्याकरण नियम रहित बोलचाल की भाषा को 'व्यावहारिक भाषा' कहते हैं। आधुनिक काल में आकर, 'व्यावहारिक भाषा' की ओर झुकाव अधिक हो गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्मरण 'कथलु-गाथलु' के नाम से प्रकाशित किए जा रहे हैं, जिनके अब तक पाँच भाग प्रकाश में आए हैं।

'गीरतमु', 'गुण्टूरिसीम', श्रृंखला तृणीकरणमु', पश्यांपुश्यां', 'शनिग्रह आदि प्रतिपक्षियों का खण्डन करते हुए लिखे गए ग्रन्थ हैं। शतावधानों में—उक्त समय में कहे गए पद्यों को—भी कुछ का पुस्तक रूप में प्रकाशन हुआ है।

'पल्लेटूळ्ळ पट्टुदललु (ग्रामीणों के हठ) नाम से ग्रामों में प्रचलित रूढ़ियों और अन्ध विश्वासों का खण्डन करते हुए, व्यंग्य प्रधान प्रहसन लिखा है।

इन तेलुगु रचनाओं के अतिरिक्त तिरुपति-वेंकट कवियों ने संस्कृत में 'धातुरत्नाकर' नामक राम कथा-चम्पू काव्य 'शृंगार शृंगाटक' नामक छोटा-सा वीथी-रूपक, 'काली सहस्र' नामक काव्य और कई अष्टक एवं स्तोत्र लिखे हैं।

श्री वेंकट शास्त्री जी की षष्टिपूर्ति महोत्सव के उपलक्ष्य में श्री काटूरि-वेंकटेश्वरराव जी के सम्पादन में 'तिरुपति-वेंकट कवियों' की लगभग सभी रचनाएँ आठ भागों में प्रकाशित हुई थीं।

महात्मा बुद्ध के जीवन पर आधारित अंग्रेजी काव्य है 'Light of Asia'। उसपर आधारित 'बुद्ध चरित्रमु' की रचना हुई जिसमें 600 ही पद्य थे। परन्तु बाद में अश्वघोष के 'बुद्ध चरित्र' और क्षेमेन्द्र कृत' 'बुद्धजन्म' में से कुछ श्लोकों का अनुवाद कर 1002 पद्यों का 'बुद्ध चरित्र' नामक काव्य प्रकाशित हुआ। इस काव्य में महात्मा के जन्म, तपस्या और धर्म प्रचार का सरस वर्णन किया गया है। इस काव्य का निम्न पद्य सुप्रसिद्ध है—

> जननम्मुन् मरणम्मु जन्तुवुलकुन् स्वाभाविक, म्मेरि के
> ल्लिनिजंबौने, सुखंबुलेक्कडिवि तल्ली ! ऐटिकेडादियै
> ननु गालेदु प्रयोजकुन्, सुजनमन्दारम्मु, चेट्टंत वा
> निनि पुत्रुन् दिर्गांम्रिगि रायिकरणिन् जीविंचि यिट्लुंडने ?

महाराज बृहत्सेन की पुत्री लक्ष्मणा का श्रीकृष्ण के साथ विवाह का वर्णन करनेवाला काव्य है 'लक्षणा परिणयमु'। इसमें नारद प्रसंग और कीरका सन्देश मनोहर बन पड़े हैं। 'एलामाहात्म्य' में एला नदी की उत्पत्तिकारण स्वरूप एल नामक महामुनि शौर किम्मीर नामक राक्षस की तपस्या का वर्णन है। 'श्री निवास-विलासमु' संस्कृत के उसी नाम के चम्पू काव्य का अनुवाद है जिसमें भगवान विष्णु के श्रीनिवास रूप में अवतरित हो; पद्मावती और अविवेलु मंगा के साथ विवाह कर सात पर्वतों पर, 'बालाजी' बन रह जाने की कथा है। 'देवी भागवतमु' संस्कृत के 'देवी भागवत' का अनुवाद है पर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुवाद के समय कवियों ने 'आन्ध्र महाभारत' शैली को आदर्श मान रचना की है। 'पतिव्रता' और 'सुशीला' में दो पतिव्रता नारियों की कथाएँ हैं। 'श्रवणानन्दमु' और 'पाणि गृहीता' में परोक्ष रूप से वेश्यागमन की निन्दा करते हुए दो विलासी पुरुषों के जीवन-चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। शृंगार रस प्रधान होते हुए भी नीति बोध की रचनाएँ हैं। 'श्रवणानन्दमु' का यह पद्य जनता की जबान पर है :—

धनना पोवुनु, मानमा चेडुनु, निन्दा नेत्ति पै केक्कु लो
ननुमानितुरु तल्लितंड्रलु, कुलंबा वन्नेकुं दग्गु, नु
तन मांद्यंबु घटिल्लु, बन्दुगुलु पन्तंबोप्प निंदितुरो
मनमा! वोद्दिक नादुमाट विनुमा, मरियाद गापाडुमा!

[धन तो चला जाएगा। मन तो बिगड़ जाएगा। सिर पर निन्दा नाच उठेगी। माता-पिता भी मन में सन्देह करते रहेंगे। कुल-मर्यादा घट जाएगी। नया आलस्य पैदा हो जाता है। जान-बूझकर सम्बन्धीजन निन्दा करते हैं। रे मन! मेरी बात सुनो, अब छोड़ दो इसे (वेश्यागमन को)। मेरी लाज बचाओ।]

'नानाराज सन्दर्शनमु' और 'कलगूरगम्प' (विविधा) में समय-समय पर और राजसभाओं में भेजे गए और कहे गए पद्यों का संग्रह है। ये पद्य कवियों की प्रतिभा और समस्या पूर्ति के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

आत्मकथा लिखने की प्रथा का प्रारम्भ पाश्चात्य प्रभाव से हुआ है। वीरेशलिंगम जी ने गद्य में अपनी आत्मकथा लिखकर इसका प्रारंभ किया तो उनसे पहले ही वेंकट शास्त्री जी ने 'जातक चर्या' नाम से अपनी जीवनी को काव्य के रूप में निबद्ध किया है। वे प्राचीनता और नवीनता के सन्धि सूत्र हैं। अतः स्वयं अपनी कथा न कहकर, ज्योतिष के अनुरूप अपने जीवन की घटनाओं का वर्णन करते गए। जन्म के समय, ग्रह-सम्पत्ति की व्याख्या के रूप में यह काव्य रचा गया है। 'एवरो व्रासिन रीति स्वविषयमुनु जातक पुमिषन् व्रासेनु दा, कवियगुट वेंक़टेशुडु' [स्वयं कवि होने से वेंकटेश (वेंकट शास्त्री) ने अपने ही विषय को 'जातक' के समान, एसा लिखा, मानों कोई दूसरा लिख रहा हो।] यह काव्य फलित ज्योतिष का अद्वितीय ग्रन्थ है और वेंकट शास्त्री जी के ज्योतिष-शास्त्र के पाण्डित्य का अनुपम उदाहरण है।

'कामेश्वरी शतकमु' में समय-समय पर देवी के प्रति कहे गए पद्यों का संकलन है। इसमें कवि की अनन्य भक्ति और अचञ्चल आत्मविश्वास के दर्शन होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कवुलेल्लन् जयपेट्टु वैभवमोसंगन् लेदो तच्छिष्यवर्ग
विभूतिन् गरुणिंपवो तनुजनुभग्यिंबु गैसेयवो
विविधैश्वर्यमु लिच्चितिक नोकटे विश्वेशि ! नी सन्निधिन्
गविगा नुंड ननुग्रहिंपुमिदिये काम्यंबु कामेश्वरी !

[कवियों के जय ! जय ! करने योग्य वैभव दिया है। शिष्य समूह से मुझे अनुगृहीत किया है। सन्तान भी दे रखी है। विविध ऐश्वर्य भी दिए हैं। हे माता ! कामेश्वरी ! अब मेरी इच्छा एक ही है। वह है तुम्हारे सान्निध्य में कवि बना रहूँ। कृपा कर दो न माते !]

तिरुपति-वेंकट कवियों की रचनाओं में 'गीरतमु' एक विशिष्ट काव्य है। यह एक सुन्दर व्यंग्य (Satire) एवं मुक्तक रचना है। वेंकट शास्त्री जी के किसी शिष्य के उन्हें गुरु न मानते हुए, उनकी निन्दा करने पर यह काव्य रचा गया है। "असत्य प्रलापों से श्री शास्त्री जी के अत्यन्त क्रुद्ध होने पर, उस आवेश के कारण, अनायास ही उमड़ी हुई यह 'गीरत' की कविता धारा, तिरुपति-वेंकट-कवियों की रचनाओं में विलक्षण बन, आन्ध्र भारती को अपूर्व रूप से अलंकृत कर रही है।" (श्री काटूरि-वेंकटेश्वरराव)

ग्रन्थ के नाम की परिभाषा देते हुए कवि कहते हैं—

गीर्षुयेतु रतास्ते वै गीरताः परिकीर्तिताः
तानुद्दिश्यकृतम् काव्यंगीरतम् परिचक्षते ॥

[गिराओं में जिनकी आसक्ति है, उन्हें 'गीरत' कहते हैं। उन सज्जनों को लक्ष्य में रखकर लिखा गया काव्य 'गीरत' कहलाता है।]

'गीरतमु' में 'अधिक प्रसंग दमन', 'गुरु दक्षिणा', विग्रहाराधना', 'लोकाभिरामायणमु' नामक चार भाग हैं। 'महाभारत' के अनुरूप पर्व-विभाग किया गया है। पर्वों का नामकरण निराला है। यथा 'मेकुबिगिम्पु पर्वमु' (कीले कसने का पर्व)' 'चप्पट्ल पर्वमु' (ताली बजाने का पर्व आदि।)

'गीरतमु' के समान ही 'गुण्टूरिसीमा' भी व्यंग्यात्मक रचना है। गीरतमु में 'रामकृष्ण कवि युग्म'[1] पर व्यंग्य किया गया है तो 'गुण्टूरिसीमा' में कोप्परपु कवि युग्म[2] पर। इन काव्यों की भाषा-शैली सरल और सरस हो बोलचाल की भाषा के समान ही है। कहीं-कहीं पाण्डित्य-प्रदर्शन के लिए प्रौढ़ शैली में लिखने पर भी सहज सरलता इनकी कविता का विशिष्ट लक्षण है। 'लोकुल

1. ओलेटि वेंकटराम शास्त्री और वेदुल रामकृष्ण शास्त्री नामक दो कवि।
2. कोप्परपु सुब्बाराव और पार्वतीशम।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नालुकलने आकुलुग जेसी' [जनता की जीभ को ही (बोली को ही) रचना का माधमम बनाकर] लिखने वाले इन कवियों की शैली सहज और सरल न होगी तो कैसी होगी ?

'कवियै पुट्टिनवाड्वेंकन' [यह वेंकन्न (वकट शास्त्री) कवि होकर पैदा हुआ है।][1] कहनेवाले इन कवियों में आत्मविश्वास और स्वाभिमान की मात्रा कूट कूटकर भरी हुई थी। वे समझते थे कि हमारा जन्म ही कविता के लिए हुआ है—

कवनार्थ मुदयिंचितिन्
सुकविता कार्यबे ना वृत्ति
मद्भव मद्दान दरिंतु,
तद्भवमद्भाग्यंबु···· ।

[कविता के लिए ही मेरा जन्म हुआ है और सुकविता करना ही मेरा पेशा है। इसी से इस संसार से तर जाऊँगा, और उस लोक की बात ? वह तो मेरे अदृष्ट की बात है।]

इसी कारण से किसी राजा की सभा में रहना या किसी की नौकरी करना, उन्हें बिलकुल पसन्द नहीं था—

कवुलमिप्पटि रूल्स (rules) कु कट्ट वडमु
घनुलु पंडितरायादि कवुलु चूपू
त्रोवलंबट्टिपोदुमु देवुनैन
लक्ष्यपेट्टमु, माकु वल्लभुलु लेरु ।

[हम कवि हैं। आजकल के नियमों से बँधकर, पण्डितराय आदि के मार्ग पर विचरण करते हैं। भगवान की भी परवाह नहीं करते। हमारा कोई स्वामी नहीं है।]

देवी पूजा-निरत वेंकट शास्त्री जी ने कहा—

नरनाथुल् पलुनंदि मित्रुलयियुन्नं गानि तत्सन्निधिन्
स्थिरवासम्मोनरिंचु पूनिकलु नावे गावु, नी वंटि स
त्करुणाशालिनि पेंपगा बेरिगि, विद्याबुद्धु लन्नेंचि, ने
बरुलन्नित्यमु गोल्चुटोप्पगुने अंबा ! देवि ! कामेश्वरी !

[कई राजा मेरे मित्र हैं, पर उनके यहाँ सदा के लिए रह जाने के प्रयत्न मुझ से नहीं होने के। हे माता कामेश्वरी ! तुम जैसी करुणामयी के

---

1. Poets are born not made.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाथों पलकर बड़े होकर, विद्या-बुद्धि सीखकर, सदा दूसरों की सेवा करते रहना कहाँ तक ठीक है ?]

अजन्त भाषा होने के कारण तेलुगु भाषा में सहज-माधुर्य है। इसी से मुग्ध होकर किसी विदेशी यात्री ने इस भाषा को 'Italian of the East' कहा है। तेलुगु पद्य तो राग-लय संयुक्त हो, सुस्वर में गाया जा सकता है। आन्ध्र देश में पद्य पठन की एक विशिष्ट शैली का प्रारम्भ किया तिरुपति-वेंकट कवियों ने। अवधान के समय जनता को मुग्ध रखने का यह एक अच्छा साधन है। आजकल कई पण्डित इसी शैली का अनुसरण करते हैं। साठ साल के होने पर भी वेंकट शास्त्री का न तो स्वर-माधुर्य ही कम पड़ा और न कलम ही धीमी हुई। षष्ठिपूर्ति महोत्सव के समय में कविवर करुणा श्री (जंध्याल पाप्य शास्त्री जी) के पद्य में यह भाव बड़ी सुन्दरता के साथ व्यक्त किया गया है।

तलमीदि वेंड्रु कल् पलुचबडुवि गानि
पलकु कम्मदनंबु पलुचबडदु,
नडललो दडबाटु पोडसूपुने गानि
नुडुललो दडबाटु नुडुवरादु,
शरीर पटिमंबु जारु चुन्नदि गानि,
धारणापटिमंबु जारलेदु,
ओडलिपै मुडुतलु पोडमुचुन्नवि गानि
कवितलो मुडुतल गान बडवु,
परग नोक्कोक्क येडु पै बडुकोलदि
नीवु वृद्धगुचुंडगा नीदु कवित
यंतकंतकु वयसुपिल्लगुचुनुंडे
जित्रमिदियौर ! सुकविताचित्रकार !

[सिर के बाल पतले पड़ गए पर बोली की मिठास तो पतली नहीं पड़ी। चाल में लड़खड़ाहट आ गई पर, बोल में लड़खड़ाने का नाम तक नहीं। शारीरिक सामर्थ्य कम हो रही है पर धारणा शक्ति ढीली नहीं पड़ी है। शरीर पर झुर्रियाँ पड़ रही हैं पर कविता में कहीं दोष नहीं दीख रहे हैं। एक-एक साल बढ़ते जाने पर, तुम्हारे वृद्ध बनते समय, तुम्हारी कविता तो दिन-दिन युवती बनती जा रही है। हे सुकविता के चितेरे ! यह कैसा विचित्र है ?]

आधुनिक सभ्यता और अंग्रेजी शिक्षा से वेंकट शास्त्री को अत्यधिक घृणा थी। आधुनिकता पर उन्होंने कई चुभते व्यंग्य किए हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सकलम्मुन् गोरिगिंचुकोंदुरकटा ! सन्यासुला ? कारु;'

[सब कुछ मुंड़वा लेते हैं, पर संन्यासी तो नहीं हैं ।]

'बोट्टोकोयतेनियु फालमंदिडरदेमो ! मुंडला ! कारु,

[ललाट भाग पर थोड़ा-सा भी तिलक धारण नहीं करते, पर विधवा तो नहीं है ।]

तेलुगु देश एवं तेलुगु भाषा के प्रति अनन्य अरानुग प्रकट करते हुए वेंकट शास्त्री जी देवी से इस प्रकार विनती करते हैं—

जननाभावमनुग्रहिंपु, मदि नी शक्यमुकादेनि पै
जननम्मंदुनु ना कोसंगुमेट्टुलो संगीत साहित्यमुल्
पनिलेदीयुदरंपु बोषणकुनै भाषांतरम्मुल्

[हे माता ! जन्म साहित्य से अनुगृहीत करो । वह तुमसे नहीं हो सके, तो अगले जन्म में भी किसी तरह संगीत और साहित्य—ये दो विधाएँ दे दो । पेट भरने मात्र के लिए दूसरी भाषाएँ नहीं चाहिए ।]

सन् 1933 के माघ मास के अपने सम्पादकीय में 'भारती' (प्रसिद्ध तेलुगु साहित्यिक पत्र) ने इस प्रकार अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित की थी ।

"19 वीं शती के अन्तिम चरण में जीर्णप्राय बने आन्ध्र-कविता-साम्राज्य का उद्धार कर, देश भर में अपनी विजय-पताकाओं को लहराने वाले पण्डित और कवि सम्राट हैं शतावधानी श्री तिरुपति-वेंकट कवि । इनकी सरस-रचना चातुर्य से कविता-लतांगी नवीन अलंकारों से विभूषित, नूतन-उत्साह से सम्भरित हो नूतन शैलियों से सहृदयों की हृदय-रंग स्थलियों पर लास्य करने लगी । आन्ध्र देश के कई व्यक्ति इन महान् विभूतियों की सेवा-शुश्रूषा कर, उनके अनुग्रह से कवि और पण्डित हो, प्रसिद्ध बने हैं । आज इस देश में श्री शतावधानियों के शिष्यों एवं प्रशिष्यों की संख्या बहुत अधिक है । इस प्रकार आन्ध्रवाणी को पुष्ट बना, आन्ध्रों को साहित्य और कविता-श्री से सम्पन्न करने वाले युग पुरुष श्री तिरुपति-वेंकट कवियों के पवित्र नाम आन्ध्रों के लिए निरन्तर मनन और स्मरण के योग्य हैं ।"

आन्ध्र जनता ने उन्हें 'बाल-कलानिधि', 'विद्वत् कवि', 'बाल-सरस्वति' 'किकवीन्द्र घटा-पञ्चानन' [छोटे-कुकवियों के गज समूह के लिए सिंह समान] आदि उपाधियाँ देकर अपने को धन्य बनाया है। आन्ध्र विश्वविद्यालय ने 'कला प्रपूर्ण' की उपाधि से सम्मानित किया है।

दोनों कवियों की जोड़ी ऐसी अनुपम थी कि देखने वालों को आश्चर्य होता था कि ये दोनों एक हैं ? या इनमें से कौन प्रतिभावान हैं ? इस विचित्र सम्मेलन की व्याख्या करते हुए वेंकट शास्त्री जी कहते हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तिरुपति चेतवच्चेनो यतिप्रतिभामहिमंबु वेंकटे
श्वरुनकु; वेंकटेश्वरुनि वल्लने चेदेनो या महत्वमुल्
तिरुपति; तद्विवेकमु निलिपुलु सैतमेरुंगतिकुं
दिरुपति वेंकटेश्वरुल तेकुव काकवुलंदनेर्तुरे

[तिरुपति से आया हो वेंकटेश को यह अति प्रतिभा की महिमा या वेंकटेश्वर से ही तिरुपति महिमान्वित हुआ हो। पर यह रहस्य तो देवता भी नहीं जानते। तिरुपति-वेंकट कवियों का यह साहस कुकवियों को, कवि मात्रों को कहाँ से लभ्य होगा !]

ऐसा था उनका परस्पर का सौहार्द्र !

अपने अवधानों एवं रचनाओं द्वारा एक अर्द्धशती तक समग्र आन्ध्र देश को प्रभावित किया है इस कवि युग्म ने। प्राचीनता और नवीनता के सन्धि-स्थल पर खड़े हो इन कवियों ने कविता को लोकप्रिय बनाया है।

उधर अंग्रेजियत की बाढ़ और इधर 'पण्डितों के प्रौढ़-भाषा के पक्षपात' के बीच में पड़, पिसनेवाले तेलुगु साहित्य को नव जीवन दे, नव उत्साह से भरनेवाले ये कवि मानों कालिदास और भवभूति ही हों।

इस प्रकार नव्य कवितावतरण के भगीरथ बन, आन्ध्र साहित्य को एक अपूर्व दीप्ति से प्रकाशमान बनाने वाले 'तिरुपति-वेंकट कवि' तेलुगु साहित्य में अजर-अमर कीर्ति के पात्र हैं।

'जयन्ति से सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वातन्त्र्योत्तर तेलुगु साहित्य

स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य का विहंगावलोकन करते समय किसी प्रतिभाशाली आलोचक का यह वाक्य तत्काल स्मरण हो आता है कि—It is an uneasy alliance of Freud and Marx, with Freud as the dominant partner. यह निर्विवाद तथ्य है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भी इन दोनों मेधावियों के सिद्धान्तों का प्रभाव भारतीय साहित्य पर था किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् स्वतंत्र देश की विचारधारा को इन सिद्धान्तों ने इस रूप में आक्रान्त कर लिया है कि साहित्य अपनी देशीयता से मानो वंचित-सा हो गया। (यह बात केवल साहित्य के लिए ही नहीं, जीवन के सभी क्षेत्रों पर लागू हो सकती है)। निराशावाद भी इसके लिए उत्तरदायी है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किये गये संघर्षों के पीछे जो सुन्दर कल्पनाएँ थीं, वे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद साकार तो नहीं हुई, उल्टे जनता को यातनाओं का सामना करना पड़ा। यह निराशा अनेक रूपों में अभिव्यक्त हुई है। इस निराशा की ओर इंगित करते हैं कृष्णा कृपलानी के ये वाक्य—'The prevalant mood is one not of faith so much as of despair, not of daring as of defiance, not passion as of morbidity.' यही कारण है कि स्वतन्त्रता के बाद की इस लंबी अवधि में रविबाबू, शरत या प्रेमचन्द की बराबरी करने वाला साहित्यकार पैदा नहीं हो सका।

सन् 47 के बाद अन्य भारतीय भाषाओं के समान तेलुगु भाषा में साहित्योत्पादन पर्याप्त मात्रा में हुआ है, विषय और रचनाशैली के क्षेत्र में अनेक नये प्रयोग हुए और पुरानी कथावस्तु तथा रचनाशैली को भी अपनाया गया। दिगंबर कवियों के बाद पैगंबर कवियों का उन्मेष हो रहा है तो आज की प्राचीनतावादी (क्लासिकल) रचनाएँ सामने आ रही हैं। प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिभाशाली लेखक अपनी लेखनी द्वारा पाठकों को आकृष्ट तथा प्रभावित कर रहे हैं। किन्तु पता नहीं कि काल की कसौटी पर इनमें कितने खरे उतरेंगे।

तेलुगु प्रदेश में भाषा के क्षेत्र में एक नूतन क्रान्ति परि-लक्षित हो रही है। इसे व्यावहारिक भाषा का आन्दोलन कह रहे हैं। यद्यपि इसका श्रीगणेश बीसवीं शती के दूसरे दशक में ही हो गया था, परन्तु सन् साठ के बाद यह आन्दोलन जोर पकड़ता गया। इस आन्दोलन का अर्थ है ग्रान्थिक या

---

1. स्वतन्त्र भारत में साहित्य—श्री नार्ल वेंकटेश्वराव के लेख से उद्धृत।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्याकरण सम्मत भाषा के स्थान पर व्यावहारिक (बोलचाल की) भाषा का प्रयोग करना। जैसे बोलो, वैसा ही लिखो। इस आन्दोलन का प्रभाव इतना व्याप्त हो गया कि आज लगभग सभी को सिर झुकाना पड़ा रहा है।

विगत 25 वर्षों में साधारण मानव के जीवन तथा उसकी समस्याओं को साहित्य में व्यापक तथा यथार्थ प्रवेश मिला है। नये-नये प्रतीक, रूपक, नया वाक्य निर्माण, नये-नये मुहावरे आदि ने रचयिता की अभिव्यक्ति को कल्पनातीत रूप से विस्तार प्रदान किया है। वह धार्मिक तथा राष्ट्रीय सीमाओं को पारकर अन्तर्राष्टीय क्षेत्र में प्रवेश कर चका है!

कविता :

अपने सिद्धान्त या आन्दोलन के आवेश में केवल नारे और दूषण-भूषण ही कविता के विषय बन गये हैं। अनुभूति की अपेक्षा विचार को प्रधानता मिलने से कविता मस्तिष्क प्रधान हो गयी है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद रजाकारों के अत्याचार, पुलिस कार्रवाई, प्रजा शक्तियों का संघर्ष, कम्यूनिस्ट पार्टी पर रोक-थाम, प्रगतिवादी रचनाओं को जब्त करना आदि कार्यों ने तेलुगु साहित्य की गतिविधि को अभूतपूर्व रूप से प्रभावित किया है। अनिसेट्टि सुब्बाराव की 'अग्निवीणा', दाशरथी की 'अग्निधारा', सोमसुन्दर का 'वज्रायुध', कुन्दुर्ति का 'तेलंगाणा', आरुद्र का त्वमेवाहं', रेंटाल का 'संघर्षण', गंगिनेनि का 'उदयिनी' आदि इसके परिणाम हैं।

सन् 1955 के बाद कविता में किसान-मजदूरों की अपेक्षा मध्यवर्ग के व्यक्तियों को खासकर अराजपत्रित अधिकारियों को अधिक स्थान मिला। अराजपत्रित अधिकारी काव्य का नायक बना। उसे वकोली (तितली का पूर्व रूप) माना गया।

सन् 1962 के चीन आक्रमण के बाद कई प्रगतिवादी (साम्यवाद से निबद्ध) कवियों की दृष्टि में परिवर्तन आया और वे राष्ट्रीय समस्याओं की ओर दृष्टिपात करने लगे। दिगंबर कवियों ने बिना किसी मुखौटे के समाज के नग्न स्वरूप का चित्रण किया। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं वि. र. सं. (विप्लव रचयिताओं का संघ) के सदस्य। इस प्रकार समसामयिक परिस्थितों के अनुकूल काव्यधारा अनेक दशाओं से गुजर रही है।

प्राचीन पद्धति के काव्यों में कवि सम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायण के 'रामायण कल्पवृक्ष' का प्रथमतः उल्लेख होना चाहिये। भाव सम्पन्नता के लिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कल्पवृक्ष बना यह महाकाव्य रचना-चातुर्य के कारण 'शिल्पवृक्ष' भी माना जाता है। यह आन्ध्रों का अहोभाग्य है कि विश्वनाथ जैसा सर्वतोमुखी प्रखर प्रतिभावान लेखक आन्ध्र देश में पैदा हुआ है। 'मध्याक्कर' नामक क्लिष्ट और अल्प प्रयुक्त देशी छन्द में उन्होंने भक्तिप्रधान दस शतकों की रचना की है जो 'विश्वनाथ मध्याक्करलु' के नाम से प्रकाशित और केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत है।

आन्ध्रों के इतिहास का सरस वर्णन करते हुए नौ सर्गों में श्री मधुनापन्तुल सत्यनारायण शास्त्री ने 'आन्ध्र पुराण' की रचना की है।

श्री तुम्मल सीताराममूर्ति चौधरी ने गान्धी जी की आत्मकथा का पद्यानुवाद स्वतन्त्रता पूर्व ही प्रकाशित किया था। स्वतन्त्रता के बाद उन्होंने 'महात्मुनि कथा' के नाम से गान्धी जी के जीवन के उत्तर भाग को काव्य के रूप में निबद्ध किया है।

श्रीमान् वानमामलै वरदाचार्य ने महाकवि पोतन्ना के जीवन को महाकाव्य के रूप में प्रस्तुत किया है। आचार्य जी सभी प्रकार की रचना शैलियों में सिद्धहस्त हैं।

क्लासिक पद्धति में लिखे गये अन्य काव्यों में सर्वश्री आत्मकूरि गोविन्दाचार्य का 'गोविन्द रामायण', तंगिराल जगन्नाथ शास्त्री का 'जगन्नाथ रामायण', वेदुल वेंकट शास्त्री का 'अद्भुत रामायण', विद्वान् बिर्नीडि प्रसन्न का 'पृथ्वी भागवत' (पृथ्वीराज और संयोगिता की कथा), गुंटि सुब्रह्मण्य शर्मा का बुद्ध चरित्र, गुर्रम जाषुवा का 'क्रीस्तु चरित्र' उल्लेखनीय हैं।

सर्वश्री विश्वनाथ वेंकटेश्वर्लु, नोरि नरसिंह शास्त्री, इंद्रगंटि हनुमच्छास्त्री, सन्निधानम सूर्यनारायण शास्त्री, दिवाकर्ल वेंकटावधानी आदि ने प्राचीन पद्धति में सुन्दर काव्य लिखे हैं।

आन्ध्रों की विशिष्ट साहित्य प्रक्रिया अष्टावधान और शतावधान है। अवधान करनेवालों में सर्वश्री सी. वी. सुब्बन्न, कोट वीरांजनेय शर्मा, डॉ. प्रसादराय कुलपति, कुक्कुटेश्वरराव आदि उल्लेखनीय हैं।

गेय कविता रचना के प्रथम उत्थान में छायावादी रचनाओं का तथा द्वितीय उत्थान में प्रगतिवादी तथा प्रयोगवादी रचनाओं का प्राचुर्य रहा। सन् 50 के बाद विविध विषयों तथा नाना रसों से युक्त गेय रचनाएँ लिखी जा रही हैं। कथाकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक, शतक, सिनीगीत आदि सभी प्रकार की विधाओं के लिए गेय (देशी मात्रा छन्द में लिखे गये) प्रयुक्त हो रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कथा काव्यों में श्री नारप रेड्डी के 'कथगादिदि वध' (यह कथा नहीं, वध है) और 'रजनी'; विद्वान् विश्वंका 'पेन्नेटि पाट'; वानमामलै वरदाचार्य के 'विप्रलब्ध'; नागभैरव कोटेश्वरराव का 'तुफानु' उल्लेखनीय हैं। इनमें श्रमिकों की कथा के साथ ग्रामीण वातावरण का सफल चित्रण किया गया है।

डॉ. सी. नारायण रेड्डी ने ऐतिहासिक इतिवृत्त को ग्रहण कर 'नागार्जुन-सागरम्', 'कर्पूर वसन्तरायलु', 'विश्वनाथ नायकुडु' नामक गेय काव्यों की रचना की है। नागभैरव कोटेश्वरराव का 'रंगाजम्मा', इन्द्रगंटि श्रीकान्त शर्मा का 'शिला मुरली' भी उल्लेखनीय हैं।

डॉ. नारायण रेड्डी ने पं. नेहरू की कथा को 'जाति रत्नं' (श्रेष्ठ रत्न) के नाम से काव्य बद्ध किया है।

वर्णन प्रधान गेय काव्यों में सोमसुन्दर का 'गोदावरी जलप्रलयं', नारायण रेड्डी का 'ऋतु चक्र', मुकुराल रामा रेड्डी का 'देवरकोंड दुर्ग' प्रसिद्ध हैं।

मेनका और विश्वामित्र की कथा को सुप्रसिद्ध कलाकार, शिल्पी और कवि मड़िपड़ग बलरामाचार्य ने 'मेनका विश्वामित्र' नामक गेय वृत्त काव्य में निबद्ध किया है।

गेय नाटिका के लेखकों में डॉ. नारायण रेड्डी, नारप रेड्डी, बापु रेड्डी, डॉ. के. वी. आर. नरसिंहम्, डॉ. यस्वी. जोगाराव सुप्रसिद्ध हैं।

अधिक्षेप, व्यंग्य के आधार पर गेय रचना करने वालों में कालोजि नारायणराव, गज्जल मल्ला रेड्डी के स्वर अत्यन्त तीखे हैं। 'नव्वे कत्तुलु' (हँसती तलवारें) (मुकुराल रामा रेड्डी) भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय रचना है।

मुक्तक और शतक लिखने वालों में नारायण रेड्डी और आरुद्र के नाम लिये जाने चाहिये।दाशरथी का 'कविता-पुष्पकम्' प्रणय और शृंगार भावनाओं से भरपूर सरस गेय काव्य है।

आधुनिक युग में गेय कविता को मूर्धन्य स्थान प्राप्त हुआ है। इस क्षेत्र में डॉ. नारायण रेड्डी ने अन्यतम कृतियों की रचना की है और अद्वितीय प्रतिष्ठा प्राप्त की है।

छन्दोबद्ध रचनाओं तथा गेय कविता के बाद वचन कविता (free verse) का उल्लेख होना चाहिये। प्रगतिवादी कवियों के साथ प्रयोगवादी कवियों ने वचन-रचना को प्रश्रय दिया था। आरुद्र का 'त्वमेवाऽहं' इस क्षेत्र में सफल काव्य है। दाशरथी की लम्बी रचना 'मस्तिष्कं लो लेबोरेटरी' भी उल्लेखनीय है। पाँचवें दशक के मध्य भाग तक वचन कविता को एक विशिष्ट रूप मिल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गया है। श्री कुन्दुर्ति आंजनेयुलु फ्रीवर्स फ्रंट के अगुआ माने जाते हैं। अजन्ता, डॉ. मादिराजु रंगाराव, गोपाल चक्रवर्ती आदि ने सफल वचन-रचनाएँ प्रस्तुत की हैं।

डॉ. रंगाराव, वेगुंट मोहन प्रसाद, डॉ. अरिपिराल विश्वं, दुर्गानन्द आदि की रचनाओं में आन्तरिक चैतन्य तथा आन्तरिक संघर्ष को अभिव्यक्ति मिली है तो सी. विजयलक्ष्मी, शीला वीर्राजु सी. वी. कृष्णाराव, पेर्वारं जगन्नाथं, वे. नरसिंहा रेड्डी, संपतकुमार, वरवरराव, डॉ. शिवप्रसाद आदि की रचनाओं में लोकवृत्त तथा लोक जीवन के सुख-दुखों को अभिव्यक्ति मिली है। प्रथमत: कथात्मक वचन कविता लिखने का श्रेय शीला वीर्राजु को प्राप्त हुआ है। दिगंबर कवियों ने वर्तमान सामाजिक व्यवस्था के प्रति अपना तीव्र असन्तोष प्रकट किया है। दिगंबर कविगण (छ: कवि) ने वर्तमान समाज के प्रति द्वेष, घृणा, असन्तोष व्यक्त करने के लिए जुगुप्साप्रद प्रतीकों का प्रयोग कर पाठकों को आकृष्ट किया और धीरे-धीरे मार्क्सीय धारा में विलीन हो, विप्लव कविता के समर्थक बने। किन्तु श्री श्री की अध्यक्षता में स्थापित वि. र. सं. (विप्लव रचयितल संघ) से अलग ही रहे।

वचन कविता के क्षेत्र में वरंगल से प्रकाशित 'चेतनावर्त' (2 भाग) का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मानव के सर्वतोमुखी विकास, लोकतन्त्र व्यवस्था, राष्ट्रीय दृष्टिकोण, आधुनिक भाव चैतन्य को प्रधान लक्ष्य के रूप में चुनकर लिखे गये चार कवियों की रचनाएँ इन संकलनों में संगृहीत की गयी हैं। ये चार कवि संपतकुमार, डॉ. सुप्रसन्न, पेर्वारं जगन्नाथं और वे. नरसिंहा रेड्डी हैं।

उपन्यास :

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं कि आजकल तेलुगु साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास और कहानी का राज्य है। प्रतिवर्ष 100-150 उपन्यास और 2–3 हज़ार कहानियाँ प्रकाशित हो रही हैं। हाँ, यह सच है कि परिमाण ही श्रेष्ठता का लक्षण नहीं है, किन्तु इस बाढ़ में अवश्य ही कुछ ऐसी रचनाएँ हैं जो तेलुगु उपन्यास तथा कहानी को विश्वसाहित्य के मंच पर गौरवपूर्ण स्थान का अधिकारी बनाती हैं।

स्वतंत्रता के बाद प्रकाशित उपन्यासों में निम्न समस्याएँ प्रमुख रूप से उभर कर आयी हैं। (1) साम्यवादी समाज व्यवस्था–पूँजीवादी और जमींदारी व्यवस्था का विरोध, वर्ग संघर्ष का चित्रण। नैतिक समस्याएँ–यथार्थ के धरातल पर आदर्श का चित्रण। (3) वर्णान्तर विवाह और विवाह से सम्बद्ध अन्य समस्याएँ। (4) मध्य वर्ग की आर्थिक समस्याओं के आधार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर जीवन का विशद चित्रण। (5) नेताओं पर या वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था पर व्यंग्य आदि।

उपर्युक्त समस्याओं को लेकर कई लेखकों ने सुन्दर उपन्यासों की रचना की है। इन उपन्यासों में अधिकतर नगर-जीवन का चित्रण पाया जाता है।

ग्रामीण जीवन का विविध रूपों में चित्रण करने वाले उपन्यासों में 'कीलबोम्मलु' (कठपुतलियाँ)—जी. वी. कृष्णाराव, कोल्लायिगट्टितेनेमि (अंगोछा पहनें तो क्या हुआ)—महीधर राममोहनराव, 'नल्लरेगडि' (काली मिट्टी)—पालगुम्मि पद्मराजु, 'संघं चेसिन मनिषि' (मानव जिसे समाज ने बनाया) और 'दीपशिखा'- पोलामगड़ सत्यनारायण मूर्ति, 'चिल्लर देवुल्लु' (छुटपुट देवता)—दाशरथि रंगाचार्य, ऊबिलो दुन्न' (कीचड़ में भैंसा) आदि उल्लेखनीय हैं। 'ऊबिलो दुन्न' प्रयोगात्मक रचना है। रंगाचार्य के 'मोदुग-पूलु' (टेसू के फूल) में तेलंगाने के विप्लव का सफल चित्रण किया गया है।

इस युग के उपन्यासों की श्री बुद्धि का श्रेय विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं को है। इन पत्र-पत्रिकाओं में कई वर्द्धमान युवा उपन्यासकारों की रचनाएँ धारावाहिक रूप से प्रकाशित की जा रही हैं। उपन्यास-प्रतियोगिताएँ भी चलाकर, उत्तम रचनाओं को पुरस्कृत कर लेखन-कार्य को प्रोत्साहित करने में ये पत्र-पत्रिकाएँ सराहनीय कार्य कर रही हैं।

स्व. बुच्चि बाबू (चिवरकु मिगिलेदि - अन्त में जो बचेगा), स्व. गोपीचन्द (असमर्थ की जीवन यात्रा, पं. परमेश्वर शास्त्री की वसीयत आदि), श्री राचकोंडा विश्वनाथ शास्त्री (अल्पजीवी, राजु-महिषी), स्व. भास्कर भट्ल कृष्णाराव (प्रवाह में तिनके, युग सन्धि, विचित्र प्रणयम), श्री आर. एस सुदर्शनम (मल्ली वसन्तम) ने उल्लेखनीय रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। भास्कर भट्ल और राचकोंडा के उपन्यासों में चेतना-प्रवाह-शैली का प्रयोग किया गया है। इस शैली में रचित 'अंपशय्या' (नवीन), 'पियक्कड़' (वी. नागराजु) सफल उपन्यास हैं।

ऐतिहासिक उपन्यास लिखने वालों में कवि सम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायण और श्री नोरि नरसिंह शास्त्री उल्लेखनीय हैं। विश्वनाथ जी ने 'पुराण वैर ग्रन्थमाला', 'नेपाल-कश्मीर राजवंश की कथाएँ' के नाम से बीसियों उपन्यास लिखे हैं जिनमें पुराणों में बताये विषयों के आधार पर इतिहास रचना की ओर संकेत है। श्री नरसिंह शास्त्री ने संख्या में कम उपन्यास (रुद्रमादेवी, नारायण भट्ट, मल्ला रेड्डी, धूर्जटि) लिखे हैं किन्तु ऐतिहासिक उपन्यास की कसौटी पर ये रचनाएँ अपेक्षा कृत खरी उतरती हैं। श्रीमती मल्लादि वसुन्धरा,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डॉ. पाटिबंड माधव शर्मा, डॉ. धूलिपाल श्रीराममूर्ति, डॉ. बोड्डुपल्लि पुरुषोत्तम आदि के नाम भी उल्लेख योग्य हैं।

बलिवाडा कान्ताराव (दीवार पर तस्वीर, धोखा खानेवाला भाई), कोम्मूरि वेणुगोपाल राव (खपरैल का मकान, हाउस सर्जन), पुराणं सूर्यप्रकाश राव (जीवन गगन बदलते मनुष्य), अवसराल रामकृष्णरास (वह प्रश्न और यह जवाब, चपक और चमेली), शीला वीर्राजु (मैना) आदि ने मध्य वर्गीय समाज तथा उनकी समस्याओं का प्रभावशाली चित्रण किया है। कोडवटिगुंटि कुटुंबराव (पढ़ाई), पालगुम्मि पद्मराजु (रामराज्य के लिए राजमार्ग, दूसरे अशोक के तीन दिन का शासन) आदि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व से लेकर आज तक की परिस्थितियों का, परिवर्तनशील समाज का चित्रण किया है। पोरंकि दक्षिणा-मूर्ति ने उत्तम आंचलिक उपन्यासों की रचना की है।

स्वतन्त्रता के बाद लेखिकाओं ने उपन्यास के क्षेत्र में संख्या की दृष्टि से तो लेखकों को मात कर दिया है। रचना-वैशिष्ट्य की दृष्टि से भी कई श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। लेखिकाओं ने विशेष रूप से सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं को लेकर स्त्री के जीवन उतार-चढ़ाव, कर्तव्य-उत्तर दायित्व—का चित्रण किया है। इनमें श्रीमती मुप्पाल रंगनायकम्मा का स्वर सबसे ऊँचा है। यद्दनपूडि सुलोचनाराणी की रचनाएँ अपनी मधुर एवं सरस शैली के कारण अत्यन्त लोकप्रिय बन गयी हैं। श्रीमती इल्लिदल सरस्वती देवी, वासिरेड्डी सीतादेवी, आनन्दा रामं, बोना देवी, लता, आरिकँपूडि कौसल्या देवी आदि ने अपने-अपने दृष्टिकोण से स्त्री जीवन का चित्रण किया है। इनके अतिरिक्त द्विवेदुल विशालाक्षी, मालती चंदूर, उन्नव विजयलक्ष्मी, गंटि वेंकट रमण और परिमला सोमेश्वर ने भी कुछ अच्छे उपन्यासों की रचना की है।

सम्प्रति तेलुगु उपन्यास के क्षेत्र में अधिकतर रचनाएँ मध्य वर्ग का विशद चित्रण प्रस्तुत कर रही हैं। कतिपय रचनाओं में वर्तमान मानव की विचारधारा का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। कुछ रचनाओं में मधुर कल्पनाओं के द्वारा पाठक के मन को सुख-शान्ति प्रदान करने का प्रयत्न किया गया है। जासूसी उपन्यासों की रचना भी पर्याप्त मात्रा में हो रही है। यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं कि आजकल तेलुगु साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास का राज्य है।

कहानी :

उपन्यास की अपेक्षा कहानी का क्षेत्र अधिक विस्तृत है। नागरिक और ग्रामीण जीवन की असंख्य समस्याओं को असख्य दृष्टिकोणों से कहानी में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभिव्यक्त किया गया है। विषय-वैविध्य की दृष्टि से तेलुगु कहानी बेजोड़ है किन्तु रचना-शैली और संक्षिप्तता की दृष्टि से तेलुगु कहानी को अभी विकसित होना है।

1950 के आसपास प्रकाशित कहानियों में अंग्रेज सरकार के चले जाने के बाद देशी राजाओं अथवा छोटे-मोटे जमींदारों के मानसिक परिवर्तन अथवा व्यथा को चित्रित करनेवाली कुछ अच्छी रचनाएँ हैं। विशाल आन्ध्र की परिकल्पाना की आकांक्षा को लेकर आन्ध्र की प्रसिद्ध नदियों, प्राचीन क्षेत्रों की पृष्ठभूमि पर आंचलिक जीवन का वर्णन आंचलिक भाषा में करने वाली कहानियाँ भी लिखी गयी थीं। इनमें उल्लेखनीय 'नौका प्रयाण' (पा. पद्मराजु), अरक घाटी में गिरा शिखर (बुच्चि बाबू), 'पानी' (पद्दिभोट्ल सुब्बरामय्य) आदि हैं। अडिवि बापिराजु, मा. गोखले, कोलकलूरि इनाक, ताडिगिरि पोतराजु ने भी इस प्रकार की श्रेष्ठ कहानियाँ रची हैं।

ग्रामीण जीवन का सफल चित्रण करते हुए करुण कुमार ने अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। गोपीचन्द ने ग्रामीणों का शोषण करने वाले व्यक्तियों अथवा परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य करते हुए कहानियाँ लिखी हैं।

पारिवारिक जीवन के मधुर हास्य का चित्रण करते हुए मुनिमाणिक्यं नरसिंहाराव जी ने उत्तम कहानियाँ लिखी हैं। इस क्षेत्र में के. रामलक्ष्मी, इच्छापुरं जगन्नाथराव, पी. भानुमति के नाम उल्लेखनीय हैं। पारिवारिक प्रेम का चित्रण करते हुए कहानियों की रचना करने वालों में मंजुश्री, रुद्राभट्ल नरसिंहाराव, अवसराल रामकृष्णाराव, बट्टिकोंड विशालाक्षी, कोम्मूरि वेणु-गोपालराव, पुराणं सूर्यप्रकाश राव आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। दहेज, विवाह, पति-पत्नी के संबंधों को लेकर कोनकल्ल वेंटकरत्नं, बलिवाड़ा कान्ताराव, वाचस्पति, कोड़वटिंगटि कुटुंबराव, परिमला सोमेश्वर आदि ने अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। श्रमिक और मजदूर की समस्याओं को लेकर श्री श्री, पिच्चेश्वर-राव आदि ने अच्छी कहानियाँ लिखीं हैं।

गुमाश्तों के जीवन की अथवा मध्य वर्गीय समाज की समस्याओं को लेकर वाकाटि पांडुरंगाराव, कलवकोलन सदानन्द, ऐ. वी. यस. अच्युतवल्ली, काली-पट्नम रामाराव, अरिगे रामाराव आदि ने प्रभावशाली कहानियाँ लिखी हैं। अध्यापकीय जीवन को लेकर ग्रामीण जीवन की पृष्ठभूमि पर मधुरान्तकं राजाराम ने अच्छी कहानियाँ लिखी हैं।

राजनीतिक अथवा सामाजिक व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य करते हुए मुल्लपूड़ि वेंकटरमण, मंचिराजु वेंकटराव, आर. यस, वसुन्धरा ने अच्छी कहानियाँ लिखी हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राचकोंडा विश्वनाथ शास्त्री और बुच्चि बाबू ने मनोविश्लेषण प्रधान कहानियाँ लिखी हैं। राचकोंडा की शैली बेजोड़ है, जो छोटे-छोटे वाक्यों को लिए काव्य का-सा आनन्द देती है।

मुप्पाल रंगनायकम्मा, बीनादेवी, वासि रेड्डी सीता देवी ने स्त्री जीवन की समस्याओं को लेकर सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं। आरिकेपूड़ि कौसल्या देवी और मद्दनपूड़ि सुलोचनाराणी अपनी मधुर कल्पनाओं से युक्त कहानियों द्वारा पाठकों को क्षण भर के लिए भुलावा देकर आनन्द सागर में ऊभ-चूभ कर देती हैं। यह शैली साधारण पाठकों को अत्यधिक आकर्षित करती है अतः इस प्रकार की कहानियों के कारण पत्र-पत्रिकाओं के प्रसार में वृद्धि होना स्वाभाविक ही है। हाँ इतना सच है कि स्त्रियों की समस्याओं का यथार्थ और सहज चित्रण लेखिकाएँ ही कर सकती हैं। आर्थिक स्थितिगतियों का तथा स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का जीवन पर जो प्रभाव पड़ता है, उसका लेखिकाएँ बड़ी निर्भीकता के साथ चित्रण कर रही हैं, यह बड़े हर्ष की बात है।

उपर्युक्त कहानीकारों के अतिरिक्त सैकड़ों कहानीकार हैं जो लगन के साथ साहित्य की सेवा कर रहे हैं। गोल्लपूड़ि मारुतिराव, मंजुश्री, ताल्लूरि नागेश्वर राव, आरुद्र, राजा राममोहन राव, तुरगा जानकी राणी, काविलपाटि विजयलक्ष्मी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं

नाटक :

सन् 1943 में आन्ध्र विश्वविद्यालय ने नाटक रचना तथा अभिनय की प्रतियोगिताओं का प्रारम्भ किया था। सन् 45 में प्रजा नाट्य मंडली की स्थापना हुई थी। इन दोनों घटनाओं के बाद तेलुगु नाटक साहित्य में एक नये युग का प्रारम्भ हो गया था। इससे पारम्परिक नाटक पद्धतियाँ (रचना एवं अभिनय की) समाप्त हुईं, प्रयोगात्मक नाटकों का अभिनय शुरू हुआ। पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों की अपेक्षा सामाजिक इतिवृत्त को प्राधान्य मिलने लगा तथा तेलुगु रंगमंच की रूपरेखा बदलने लगी।

सामाजिक नाटकों में प्रधानतया स्त्री सम्बन्धी समस्याओं को, समष्टि परिवार की समस्याओं को तथा वर्ग संघर्ष (जमींदार-किसान अथवा मालिक-मज़दूर) का चित्रण किया गया। कोंडमुदि गोपालराय शर्मा का 'एदुरीत' (प्रवाह के विरुद्ध तैरना) वर्णान्तर विवाह को लेकर लिखा गया तो आचार्य आत्रेय के 'एन.जी.ओ.' (अराज पत्रित अधिकारी) में मध्य वर्ग की समस्याओं का चित्रण मिलता है।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था की पोल खोलने वाले नाटककारों में आत्रेय,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राचकोंडा विश्वनाथ शास्त्री, कोडालि गोपालराव प्रमुख हैं। सुप्रसिद्ध सिनी-अभिनेता नागभूषणं का 'रक्तकन्नीरु' (खून के आँसू) इस क्षेत्र में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। विगत 16 वर्षों में इस नाटक को 200 से अधिक बार खेला गया है और आज भी इस नाटक के लिए टिकट मिलना बहुत कष्टसाध्य है।

ग्रामीण समस्याओं का चित्रण करने वाले नाटककारों में सुंकर, वासि रेड्डी, बोयि भीमन्ना, के. एल. नरसिंहाराव उल्लेखनीय हैं।

मनोविश्लेषणात्मक नाटकों की रचना करने वालों में बुच्चि बाबू (आत्मवंचना), आर. वी. यस. रामस्वामी, राघव, पात्रो प्रसिद्ध हैं।

डॉ. कोर्रपाटि गंगाधरराव ने अनेक विषयों को लेकर लगभग सौ नाटक और नाटिकाएँ लिखी हैं। ये सभी रचनाएँ अभिनीत होकर लोकप्रिय हुई हैं।

हास्यरस प्रधान नाटककारों में (जिनमें व्यंग्य का पुट भी है) सोमंचि यज्ञन्न शास्त्री (पेद्द मनुषुलु—संभ्रान्त व्यक्ति), डी. बी. नरसराजु (नाटक), भमिडिपाटि राधाकृष्ण (कीर्तिशेषुलु—जिनकी कीर्ति ही बची हुई हो), रावि कोंडलराव (नालुगिल्ल चाविडि—चार घरों के बीच का आंगन, कुक्क पिल्ल दोरिकिंदि— कुत्ते का पिल्ला मिल गया) आदि प्रमुख हैं।

अनिसेट्टि सुब्बाराव, पिनिसेट्टि श्रीराममूर्ति, बेल्लंकोंडा रामदास, अवसराल सूर्याराव ने वर्तमान मध्य वर्गीय सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण करते हुए उत्तम नाटकों की रचना की है। नंडूरि रामकृष्णमाचार्य, पडाल, आमंचर्ल गोपालराव ने ऐतिहासिक नाटक, श्रीरामुल सच्चिदानंद शास्त्री, बोयि भीमन्ना ने पौराणिक नाटक लिखे हैं। गेय और नृत्य नाटिकाएँ लिखनेवालों में शिवशंकर स्वामी, नोरिनरसिंह शास्त्री, देवुलपल्लि कृष्ण शास्त्री, बी. रजनीकान्त राव, डॉ. सी नारायण रेड्डी, दाशरथी, मल्लवरपु विश्वेश्वरराव, विंजमूरि शिवरामाराव, शशांक, बापु रेड्डी प्रमुख हैं। आरुद्र, कुंदुर्ति, डॉ. अरिपिराल विश्वं ने कुछ वचन गेयों की रचना की है।

बालकों के लिए नाटक लिखने वालों में जंध्याल पापय्य शास्त्री, इल्लिंदल सरस्वती देवी, न्यापति राघवराव प्रमुख हैं। रेडियो नाटक लिखने वालों में गोरा शास्त्री, हितश्री, कोडवटिगंटि, सुब्बाराव, प्रयाग नरसिंह शास्त्री, अमरेन्द्र लब्धप्रतिष्ठ हैं।

आलोचना :

तेलुगु साहित्य में आलोचना सम्बन्धी रचनाएँ संख्या में अधिक नहीं हैं। इसका कारण यह है कि यह माना जाता है कि जो सृजनात्मक साहित्य की रचना नहीं कर सकता, वही आलोचक बनता है। फिर भी जो कुछ आलोचना प्रधान साहित्य है, वह गंभीर और उत्तम है। प्राचीन साहित्य की जितनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आलोचना हुई है। और जितनी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, उतनी आधुनिक साहित्य पर नहीं। विश्वविद्यालयों में भी अनुसन्धान अधिकतर प्राचीन साहित्य और प्राचीन कवियों पर किया जा रहा है।

कवि जीवनियाँ, साहित्य का इतिहास, साहित्य की विशिष्ट विधाओं का इतिहास, विशिष्ट काव्य की आलोचना, भाषा, व्याकरण, छन्द संबंधी आलोचना आदि विषयों पर प्रामाणिक ग्रन्थ लिखे गये हैं। सुप्रसिद्ध आलोचकों में कट्टमंचि रामलिंगा रेड्डी, राल्लपल्लि अनन्तकृष्ण शर्मा, पिंगलि लक्ष्मीकान्तम, विश्वनाथ सत्यनारायण, गुडिपाटि वेंकटचलं, तापि धर्माराव, निडदवोलु वेंकटराव, गिड्गु सीतापति, खंडवल्लि लक्ष्मीरंजनम्, दिवाकर्ल वेंकटावधानी, पाटिबंड माधव शर्मा आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त साहित्य की आलोचना संबंधी उत्तम लेख और संकलन भी प्रकाशित हुए हैं। इनमें तेलुगु भाषा और साहित्य संबंधी, साहित्यशास्त्र संबंधी तथा अन्य भाषा साहित्य संबंधी रचनाएँ हैं।

संपादित और परिष्कृत पुस्तकों की भूमिकाओं के रूप में तथा पुस्तक समीक्षा के रूप में भी आलोचनात्मक साहित्य प्रकाशित है।

डॉ. केतवरपु रामकोटि शास्त्री, डॉ. जी. वी. कृष्णराव, के. वी. रमणा रेड्डी, कालूरि हनुमन्तराव, डॉ. जी. वी. सुब्रह्मण्यम्, डॉ. के. सुप्रसन्नाचार्य, गुन्टूर शेषेन्द्र शर्मा, आर. यस. सुदर्शनम् आदि ने भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है।

अन्य प्रकाशन :

जीवनी तथा आत्मकथा के रूप में पर्याप्त मात्रा में पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

आचंट जानकीरामं का 'ना स्मृतिपथं लो' (मेरे स्मृति-पथ में) तथा 'सागुतुन्न यात्रा' (गतिशील यात्रा) साहित्यिक महत्त्व की रचनाएँ हैं जिनमें सरस मधुर शैली में आन्ध्र की साहित्यिक गतिविधियों के संस्मरण संकलित हैं। स्व. जाषुवा का 'ना कथा' (मेरी कथा) नामक काव्य भी सुन्दर है। इनके अतिरिक्त श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री जी की पुस्तक 'अनुभवालु-ज्ञापकालु' (अनुभव-स्मृतियाँ) भी उल्लेखनीय है।

सन् 1964 में प्रकाशित 'बाल साहितीमाला' के द्वारा यह पता चलता है कि 1963 तक ही तेलुगु में प्रकाशित बालोपयोगी रचनाओं की सख्या 2000 से अधिक है।

बालोपयोगी गेय साहित्य की रचना करने वालों में नार्ल चिरंजीवी, बी. वी. नरसिंहाराव, न्यापति राघवराव, बी. रजनीकान्तराव, दाशरथी आदि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ने उल्लेखनीय कार्य किया है। बालोपयोगी उपन्यास-कहानियों की रचनाएँ करने वालों में न्यापति राघवराव, कनकदुर्गा रामचन्द्रन, जी. सुरमौली आदि उल्लेखनीय हैं। स्व. मुहम्मद क़ासिम खान का 'बाल विज्ञान सर्वस्व' (Children's Encyclopedia) उल्लेखनीय है।

इनके अतिरिक्त नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित नेहरू बाल पुस्तकालय के शीर्षक से प्रकाशित पुस्तकें तथा साउत इंडिया बुक ट्रस्ट और इंडिया बुक हाउस द्वारा प्रकाशित पुस्तकें भी उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी में, संस्कृत तथा अंग्रेजी में भी कतिपय मौलिक रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। संदर्भ ग्रंथ, शब्दकोश, विज्ञान संबंधी पुस्तकें भी पर्याप्त मात्रा में प्रकाशित हुई हैं। आन्ध्र प्रदेश साहित्य अकादमी प्रामाणिक ग्रन्थों के प्रकाशन में सराहनीय कार्य कर रही है। आन्ध्र प्रदेश बुक डिस्ट्रिब्यूटर्स ने घर-घर में पुस्तकालय की योजना के अन्तर्गत कई अच्छी पुस्तकें प्रकाशित कर, जनता में पुस्तक खरीद कर पढ़ने की आदत डाली है।

बुर्रकथा नामक लोकसाहित्य की एक विधा का उपयोग प्रचार के लिए बहुत किया गया है। साम्यवादियों ने इसका खूब लाभ उठाया है। इस क्षेत्र में सुंकर सत्यनारायण, नाजर, लक्ष्मीकान्त मोहन, बुर्रकथा सम्राट बेनर्जी के नाम लिये जा सकते हैं।

तेलुगु अकादमी तेलुगु भाषा में पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त प्रामाणिक वैज्ञानिक पुस्तकों के प्रकाशन में लगी हुई है और लगभग 200 पुस्तकों का प्रकाशन कर चुकी है।

इस प्रकार तेलुगु साहित्य ने विगत पच्चीस वर्षों में अपूर्व विकास किया है, प्रत्येक प्रक्रिया में श्रेष्ठ ग्रन्थों की रचना हुई है, इतर भाषा साहित्यों से संपर्क के कारण नयी-नयी प्रवृत्तियों का उन्मेष हुआ है और जनता में साहित्य के प्रति अभिरुचि में विशेष वृद्धि हुई है। भारतीय साहित्य के रंगमंच पर तेलुगु साहित्य गौरवपूर्ण स्थान का अधिकारी बना हुआ है।

[स्वतन्त्रता प्राप्ति की 25 वीं वर्षगाँठ के अवसर 'युव भारती' नामक साहित्यिक संस्था ने 'महती' नामक पुस्तक का प्रकाशन किया था जिसमें विगत 25 वर्षों के तेलुगु साहित्य, संस्कृति तथा अन्य गतिविधियों का परिचय देनेवाले लेख संकलित हैं। भारतीय भाषाओं में इस प्रकार के प्रयास का यह प्रथम सुपरिणाम है। इस लेख की रचना में उक्त पुस्तक से सहायता ली गयी है। लेखक तदर्थ 'युव भारती' का आभारी है।]

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु का नाटक साहित्य

"काव्येषु नाटकं रम्यं", "नाटकान्तं हि साहित्य" आदि सूक्तियों में परिचित रहने पर भी, प्रचुर नाटक साहित्य से संपन्न संस्कृत भाषा एवं साहित्य से अत्यधिक प्रभावित रहने पर भी उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशकों तक, तेलुगु में नाटक के दर्शन नहीं होते। तेलुगु में नाटक साहित्य के अभाव के निम्न कारण बताएँ जाते हैं, संस्कृत नाटकों में परिलक्षित होने वाली पात्रानुकूल भाषा का अभाव, तेलुगु के लक्षण ग्रंथों में नाटक, रंगमंच आदि के विश्लेषण का अभाव, अभिनेताओं का समाज में आदरपूर्ण स्थान का अभाव आदि, उत्सव, विवाह आदि अवसरों पर कुछ दृश्य नाटकों के प्रदर्शन का आयोजन होता था किन्तु ये बहुधा "यक्षगान" वीथि भागवत नाम की देशी रचनाओं के अपरिमार्जित प्रदर्शन मात्र होते थे। आधुनिक आन्ध्र साहित्य के नाटक इन यक्षगानों व वीथिभागवतों की अपेक्षा संस्कृत तथा अंग्रेजी नाटक परम्परा से अत्यधिक प्रभावित है।

16 वीं शती के उत्तरार्द्ध में धारवाड के (मूलतः महाराष्ट्र के सांगली ग्राम के आल्टेकर) नाटक समाज ने आन्ध्र प्रान्त में घूम-घूम कर फारसी और हिन्दी नाटकों के प्रदर्शन द्वारा काफी धूम मचाई थी। इन नाटकों की लोकप्रियता से प्रोत्साहित होकर, तेलुगु में नाटक रचना करने और उन्हें अभिनीत करने के लिए कुछ उत्साही युवक मैदान में आए। प्रत्येक नगर में एक या दो नाटक समाजों की स्थापना हुई। प्रख्यात आन्ध्र नेता देशभक्त कोंडा वेंकटप्पय्या पन्तुलु और आन्ध्र-केसरी टी. प्रकाशम पन्तुलु भी उनमें भाग लेते थे।

तेलुगु नाटक साहित्य का प्रारंभिक युग अनुवाद प्रधान तथा अनुकरणात्मक रहा है। आधुनिक आन्ध्र साहित्य के युग पुरुष श्री वीरेशलिंगम पन्तुलु ने "शकुन्तला", "रत्नावली", 'कामेडी आफ एरार्स' आदि अनुवादात्मक नाटक लिखे थे। "अभिज्ञान शाकुन्तलम्" के तेलुगु में पच्चीसों अनुवाद हुए किन्तु वीरेशलिंगम पन्तुलु का अनुवाद ही आज भी श्रेष्ठ माना जाता है। श्री वेदमु वेंकटराय शास्त्री ने "उत्तर रामचरित" और "हर्ष" के सभी नाटकों का, श्री वड्डादि, सुब्बारायुडु ने वेणी संहार का, तिरुपति वेंकट कवुलु ने "मुद्राराक्षस", "मृच्छकटिक" "बाल रामायण" का, श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री ने "नागानन्द" का, श्रीदास श्रीरामुलु ने मालती माधव का, श्री चिलकमूर्ति लक्ष्मी नरसिंहम ने भास के सभी नाटकों का अनुवाद किया था। इनके अतिरिक्त अन्य लेखकों ने संस्कृत के लगभग सभी नाटकों का अनुवाद प्रकाशित किया है। बंगला और हिन्दी के भी कतिपय नाटकों के अनुवाद किए गए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सन् 1860 में श्री कोराड रामचन्द्र शास्त्री ने "मंजरी मधुकरीयमु" की रचना की जो तेलुगु का सर्वप्रथम मौलिक नाटक माना जाता है। सन् 1875 में श्री वाविलाल वासुदेव शास्त्री ने "नंदक राज्य" शीर्षक मौलिक नाटक लिखा था।

मौलिक नाटकों की रचना कर स्वयं उनका प्रदर्शन कर, नाटक प्रक्रिया को लोकप्रिय बनाने वाले प्रथम नाटककार और अभिनेता श्री धर्मवरम् रामकृष्णमाचार्य थे। उन्होंने बल्लारि में "सरस विनोदिनी" की स्थापना की थी। इस सभा ने आन्ध्र प्रान्त में प्रथम पारसी कंपनियों के अनुकरण पर नाटकों का प्रदर्शन किया। आचार्य जी ने 30 से अधिक नाटक लिखे हैं और सभी नाटक अभिनीत हैं। इन नाटकों की कथावस्तु यद्यपि पौराणिक है फिर भी घटना विधान और कल्पना चातुर्य के कारण ये नाटक यथेष्ट लोकप्रिय हुए हैं। "चित्रनतीयमु", "विषाद सारंगधर", "चन्द्रहास", "वरूथिनी" आदि आचार्य जी के प्रसिद्ध नाटक हैं। अंकों को दृश्यों में विभाजित करना प्रोलोग और एपिलोग लिखना लंबे आत्मकथन, कथा को दुखान्त करना, आदि लक्षण पश्चिमी प्रभाव से आचार्य जी के नाटकों में समाविष्ट हुए हैं। "विषाद सारंगधर" तेलुगु का प्रथम दुखान्त नाटक माना जाता है। वर्तमान राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक समस्याओं को आचार्य जी ने अपने पौराणिक नाटकों में भी स्थान दिया है। वे आन्ध्र नाटक पितामह के नाम से विभूषित हुए थे।

उसी बल्लारि नगर में एक और वकील साहब हुए—जिन्होंने नाटकों की रचना कर, उन्हें अभिनीत कराया था। उनका नाम है कोलाचरम् श्रीनिवासराव, राव जी ने "वाणी विलास नाटक सभा" की स्थापना की। राव जी ने भी काफी नाटक लिखे हैं जिनमें "सुनन्दिनी परिणयम्, "विजयनगर राज्य पतनमु", "प्रताक्वरीयमु", "मदालसा", "सत्य हरिश्चन्द्र", पादुका पट्टाभिषेकमु" आदि उल्लेखनीय हैं। "विजयनगर राज्य पतनमु" अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। मौलिक रूप से ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकों की रचना के अतिरिक्त राव जी ने संस्कृत, तमिल और मराठी नाटकों के तेलुगु अनुवाद भी प्रस्तुत किए थे। उन्होंने कुछ सामाजिक नाटक और प्रहसनों की भी रचना की है। राव जी ने प्रपंच नाटक पूने चरित्र (संसार के नाटक साहित्य का इतिहास) लिखा था, जो अपने ढंग का श्रेष्ठ परिचयात्मक और आलोचनात्मक ग्रंथ है। ये ऐतिहासिक नाटक पितामह के नाम से प्रसिद्ध हैं।

श्री वेदमु वेंकटराय शास्त्री जी ने, "प्रताप रुद्रीयमु", "उषा", बोब्बिली नामक तीन मौलिक नाटकों की रचना की थी। "प्रताप रुद्रीयमु" तेलुगु का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सर्वश्रेष्ठ नाटक माना जाता है जो काकतीय प्रतापरुद्र और खिलजी सुलतान के इतिहास प्रसिद्ध संघर्ष से संबद्ध है। इस नाटक का रचना वैशिष्ठ्य, प्रभावशाली चरित्र चित्रण, पात्रोचित भाषा, सूक्ष्म व्यंग्य प्रशंसनीय है। प्रतापरुद्र का मंत्री युगन्धर भास के योगधरायण का स्मरण दिलाता है।

श्री पानुगंटि लक्ष्मीनरसिंह राव ने लगभग तीस नाटकों की रचना कर "आन्ध्र शेक्सपियर" की ख्याति प्राप्त की है। इनके नाटकों में "पादुका पट्टाभिषेकमु", "राधाकृष्ण", "विप्रनारायण" बहुत ही लोकप्रिय नाटक हैं। ये नाटक रचना में पद्य और गीतों की अपेक्षा गद्य को ही महत्व देते थे।

श्री चिलकमूर्ति लक्ष्मी नरसिंहम पन्तुलु का "गयोपाख्यानमु" आन्ध्र के नाटक क्षेत्र का श्रेष्ठ और लोकप्रिय नाटक रहा है। इस नाटक की जितनी प्रतियाँ (एक लाख से अधिक) बिकी हैं, उतनी किसी और नाटक की नहीं बिकी है। "प्रसन्न यादवमु", "पारिजातापहरणमु" "प्रह्लाद चरित्र" इनके अन्य प्रसिद्ध नाटक हैं। नरसिंहम जी के नाटकों पर संस्कृत नाटकों का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है, पर हास्य और व्यंग्य युक्त वार्तालाप अंग्रेजी नाटकों की याद दिलाते हैं।

श्री तिरुपति वेंकट कवुलु का "पांडव उद्योग वियमु" (दो नाटक) इतने प्रसिद्ध हुए हैं कि उनके मधुर पद्य जनता की जबान पर आ गए हैं। श्रीकृष्ण के दूतकर्म वाला दृश्य बड़ा ही मार्मिक तथा प्रभावशाली है। इस जुगलबंदी ने महाभारत की कथा पर आधारित कुछ और नाटक भी लिखे हैं।

श्री बलिजेपल्लि लक्ष्मीकान्तम का लिखा "सत्य हरिश्चन्द्रीयमु" भी काफी लोकप्रिय बना है। इस नाटक के पद्य बड़े ही मधुर हैं।

तेलुगु नाटक के प्रारंभिक युग के नाटकों में श्री गुरजाड़ा अप्पाराव जी का "कन्या शुल्कमु" (1897) सर्व प्रसिद्ध है। इस नाटक के लिखे जाकर 80 वर्ष हो रहे हैं। पर यह नाटक आज भी पंडित पामरजनों में लोकप्रिय है। इस नाटक में बड़े ही तीखे ढंग से सामाजिक कुप्रथाओं की पोल खोली गई है। वेश्या प्रथा, बाल्य विवाह, कन्या शुल्क (शुल्क देकर कन्या को खरीद लेना) नई पीढ़ी के युवकों के ढोंग, फैशन आदि का मार्मिक चित्रण हुआ है। यह नाटक समाज सुधार को दृष्टि में रखकर लिखा गया है। अतः शुद्ध नाटक की कसौटी पर उतना खरा नहीं उतरता। इस नाटक का प्रमुख पात्र "गिरीशम" आन्ध्र प्रान्त में ऐतिहासिक पुरुष ही बन गया है जो ढोंगी और धोखेबाज लोगों का प्रतिनिधि है। परवर्ती सामाजिक नाटकों पर "कन्या शुल्कम" का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। आन्ध्र विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति और सुप्रसिद्ध समालोचक, स्व. डा. सी. आर. रेड्डी जी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के शब्दों में सामाजिक व्यंग्य प्रधान नाटकों की रचना कष्ट साध्य है। इस प्रकार की रचनाओं में "कन्या शुल्कम" अत्युत्तम है। वह मानवता और चैतन्य से भरा हुआ है। इसके पात्र स्त्री और पुरुष मानव सुलभ भावानुभूतियों से युक्त अपनी विशिष्टताओं के साथ दर्शन देते रहते हैं। भिन्न भिन्न प्रकृतियों, आदतों, संप्रदायों, भाव विशिष्टताओं, अन्ध विश्वासों के साथ नित्य के जीवन विधान में दृष्टिगोचर होने वाले संघर्ष का बड़ा ही रम्य चित्रण किय गया है।

कवि सम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण ने कविता, उपन्यास के अतिरिक्त नाटक रचना में भी अपनी अपूर्व प्रतिभा दरसाई है। "नर्तनशाला", "अनारकली", "वराजु" आदि सत्यनारायण जी के सुन्दर नाटक हैं। "नर्तनशाला' में कीचक को उदात्त विषाद नायक के रूप में चित्रित करने का सफल प्रयत्न किया गया है।

तेलुगु नाटक साहित्य के प्रथम उत्थान काल में उपरोक्त नाटककारों के अतिरिक्त सोमराजु रामानुज राव, डी. सीतारामाराव, यज्ञनारायण, मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री, काल्लाकूरि नारायण राव, गुड़िमेड़ वेंकट सुब्बाराव, पिंगलि नागेन्द्र राव आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। प्राचीन परम्पराओं के अनुकूल, गद्य पद्य युक्त इन नाटकों की सामग्री अधिकांशत: ऐतिहासिक एवं पौराणिक रही है।

प्रथम उत्थान के बाद लेखकों का दृष्टिकोण बदल गया। परिणामत: वस्तु और शैली में परिवर्तन स्पष्ट लक्षित होता है। द्वितीय उत्थान की रचनाओं की सामग्री बहुत कुछ वर्तमान सामाजिक समस्याओं पर ही आधारित है। केवल गद्य में ही और वह भी बोलचाल के (व्यावहारिक) नाटक लिखे जाने लगे हैं। गीत और पद्य नाटक के लिए अनुपयुक्त माने गए। रचना विधान और रंगमंच के निर्माण तथा प्रबंध पर पाश्चात्य प्रभाव बढ़ता गया।

आचार्य आत्रेय के नाटकों में मध्यम वर्गीय परिवारों की समस्याओं का प्रभावशाली चित्रण मिलता है। सामान्य मनुष्य के हृदय में वर्तमान परिस्थितियों के प्रति परिलक्षित होने वाले भय, शंका आदि मनोवृत्तियों के चित्रण में श्री आत्रेय सिद्धहस्त हैं। "अद्देकोंप" (भाड़े का मकान), "कप्पलु" (मेढ़क) "भय" आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

श्री कोपेल्ल वेंकटरामाराव ने अपने नाटकों में सामाजिक दुराचारों का खंडन बड़े जोरदार ढंग से किया है। श्री पिनिशेट्टि सुब्बाराव की "पल्लेपडुचु" (ग्राम युवती) में किसान और जमींदार के संघर्ष का सुन्दर चित्रण किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्री बोयि भीमन्ना के "पालेरु", "कूलिराजु", रामदास के "मास्टर जी" "पुनर्जन्म" भी अच्छे नाटक हैं।

श्री बुच्चि बाबू, मनोविश्लेषण प्रधान रचनाएँ करने में सिद्धहस्त हैं। इस दृष्टि से "आत्म वचन" सफल रचना है।

इसके अतिरिक्त डी. वी. नरसराजु, जी. सूर्य, प्रख्यात श्रीराममूर्ति नरसिंहराव आदि लब्ध प्रतिष्ठ नाटककार हैं।

तृतीय उत्थान में बड़े नाटक लिखने की प्रथा कम होती गई और एकांकियों का प्रचलन बढ़ता गया। वैसे एकांकी की रचना का श्रीगणेश द्वितीय उत्थान काल में हो गया था, किन्तु इस युग में आकर वह साहित्य का बहु चर्चित तथा लोकप्रिय अंग बन गया है।

मद्रास के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री. पी. वी. राजमन्नार तेलुगु के सर्व-प्रथम एकांकी लेखक माने जाते हैं। इनके एकांकियों में मध्य वर्गीय समाज की समस्याओं और कुपथाओं का प्रभावशाली चित्रण मिलता है। ये भी कैसे मर्द हैं ? "कृष्णसर्प", "दोष किसका" आदि राजमन्नार जी के सुप्रसिद्ध एकांकी हैं।

श्री गुडिपाटि वेंकटाचलम के एकांकियों पर फ्रायड का गहरा प्रभाव है। स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों को पुरुष के दमन और स्त्री की कुंठाओं को चलम ने बिना किसी झिझक के स्पष्ट कर जोरदार शब्दों में अभिव्यक्त किया है। भले ही आप उनके विचारों व सिद्धान्तों से सहमत न हों परन्तु भावाभिव्यक्ति की कुशलता, प्रभावोत्पादकता, टेकनिक को देखकर चलम की प्रतिभा की सराहना किए बिना नहीं रह सकते।

श्री भमिडिपाटि कामेश्वर राव के एकांकी मधुर हास्य से युक्त हो, पाठकों को बार-बार पढ़ने के लिए विवश करते हैं। "कचट तपलु", बागु बांगु, आदि प्रहसनों के कारण आप की "हास्य ब्रह्म" की उपाधि सार्थक बनी है।

डा. मारेमड रामाराव के ऐतिहासिक एकांकी अत्यन्त लोकप्रिय हुए हैं। रामाराव जी की रचनाओं में "विप्लव", "नैवेद्य" उल्लेखनीय हैं। इतिहास के विद्वान होने के कारण आपकी नाटिकाओं में इतिहास और कल्पना का समन्वय दर्शनीय है।

इस क्षेत्र में चिन्ता दीक्षितुलु, मल्लादि विश्वनाथं, मल्लादि अवधानी, डी. वी. नरसराजु आदि ने उल्लेखनीय कार्य किया है।

1943 के बाद के लेखकों ने यथार्थवादी तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाया। बूच्चिबाबू के "उमरखय्याम" तथा "तिष्य-रक्षिता" इस नए दृष्टिकोण के उदाहरण हैं। आत्रेय की "प्रगति" में मानव समाज की प्रगति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। "स्त्री" नामक एकांकी में क्षणिक क्रोधावेश के वशीभूत पत्नी को घर से बाहर निकाल देने वाले एक गृहस्थ की मानसिक उथल-पुथल का मार्मिक चित्रण किया गया है। इस एकांकी की विशेषता यह है कि पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित होने पर भी इसमें एक भी स्त्री पात्र नहीं है।

"कृष्णा पत्रिका", "भारती", "आन्ध्र पत्रिका", "आन्ध्र प्रभा" आदि पत्र-पत्रिकाओं ने भी एकांकी साहित्य के उन्नयन में सराहनीय सहयोग दिया है।

श्री शिवशंकर शास्त्री ने "दीक्षित दुहिता" "पद्मावती चरण चारण चक्रवर्ती" शीर्षक सुन्दर गेय नाटकों की रचना की है। डा. सी. नारायणरेड्डी का "नव्वनि पुव्वु" (अनहंसा फूल) इसी ढंग का सुन्दर गेय नाटिका है। श्री विश्वनाथ सत्यनारायण का "किन्नरसानि पाटलु" यद्यपि गीत काव्य है फिर भी उसमें गेय नाटक के लक्षण पर्याप्त मात्रा में परिलक्षित होते हैं।

गीति नाटकों के क्षेत्र में मल्लवरपु विश्वेश्वर राव, अब्बूरि रामकृष्णाराव आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

श्री कोप्परपु सुब्बाराव जी का "अली मुठा" (अली का दल) संगीत रूपकों में प्रथम एवं श्रेष्ठ है। रेडियो के लिए गीति नाटक लिखने वालों में श्री देवुलपल्लि कृष्ण शास्त्री प्रथम गण्य है। "कृष्णाष्टमी", "धनुर्दास', उर्वशी, विद्यापति आदि कृष्ण शास्त्री जी की उत्तम श्रव्य नाटिकाएँ हैं। इनके अतिरिक्त श्री रजनीकान्त राव ने भी रेडियो के लिए सुन्दर गेय नाटक लिखे हैं।

काव्य नाटक खासकर रेडियो के लिए लिखने वालों में सर्व श्री कपिल काशीपति, बुच्चिबाबू, गोरा शास्त्री, पद्मराजु, आरुद्र, मुनि माणिक्यम नरसिंहराव ने स्तुत्य प्रयास किया है।

1943 में आन्ध्र विश्वविद्यालय ने नाटक तथा अभिनय की प्रतियोगिताओं का प्रारंभ किया था। 1945 में प्रजा नाट्य मंडली की स्थापना हुई थी। इन दोनों घटनाओं के बाद तेलुगु नाटक साहित्य में एक नए युग का आरंभ हो गया। इससे पारम्परिक नाटक शैलियाँ (रचना एवं अभिनय) समाप्त हुई, प्रयोगात्मक नाटकों का अभिनय शुरू हुआ। पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों की अपेक्षा सामाजिक इतिवृत्त को प्राधान्य मिलने लगा तथा तेलुगु रंगमंच की रूपरेखा बदलने लगी। इसका प्रभाव स्वातंत्र्योत्तर नाटक साहित्य पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

सामाजिक नाटकों में प्रधानतया स्त्री संबंधी समस्याओं को, समष्टि परिवार की समस्याओं तथा वर्ग संघर्ष (जमींदार-किसान अथवा मालिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मजदूर) का चित्रण किया गया। कोंडमुदि गोपालराय शर्मा का "एदुरीत" (उलटी तराई) अंतर्जातीय विवाह को लेकर लिखा गया तो आचार्य आत्रेय के "एन. जी. ओ" (अराजपत्रित अधिकारी) में मध्य वर्ग की समस्याओं को उजागर किया गया।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था की पोल खोलने वाले नाटककारों में आत्रेय, रामकोंडा विश्वनाथ शास्त्री, कोडालि गोपालराव प्रमुख हैं। सुप्रसिद्ध सिनी अभिनेता नागभूषण का "रक्तकन्नीरू (खून के आँसू) इस क्षेत्र में अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। इस क्षेत्र में सोमंचि यज्ञन्न शास्त्री, गोल्लपूडि मारुतीराव, गोरा शास्त्री आदि ने श्रेष्ठ एकांकी प्रस्तुत किए हैं।

ग्रामीण समस्याओं का चित्रण करने वाले नाटककारों में सुंकर सत्य-नारायण, वासिरेड्डी, बोयि भीमन्ना, के यल. नरसिंहराव उल्लेखनीय हैं।

मनोविश्लेषणात्मक नाटकों की रचना करने वालों में बुच्चिबाबू, आर. वी. एस. रामस्वामी, राधव, गणेश पात्रों आदि प्रसिद्ध हुए हैं।

डा. कोर्रपाटि गंगाधर राव ने अनेक सामाजिक विषयों को इतिवृत्त के रूप में ग्रहण कर लगभग सौ रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। ये सभी नाटक-नाटिकाएँ अभिनीत होकर समादृत हुई हैं।

हास्यरस प्रधान नाटककारों में (जिनमें व्यंग्य का पुट भी होता है) सोमचि यज्ञन्न शास्त्री (पेद्द मनुष्युलु भद्र पुरुष), डी. बी. नरसराजु, (नाटक) भमिडिपाटि राधाकृष्ण (कीर्तिशेपुलु ख्यातिशेषी) रावि कोंडलराव (नालुगिल्ल-चाविडि) चार घरों के बीच का आंगन, कुक्कपल्लिा दोरिकिंदि (पिल्ला मिल गया) आदि उल्लेखनीय हैं।

अनिसेटि सुब्बाराव, पिनिसेट्टि श्रीराममूर्ति, अवसराल सूर्याराव ने वर्तमान मध्यवर्गीय सामाजिक परिस्थितियों का यथातथ्य चित्रण करते हुए उत्तम नाटकों की रचना की है।

बालकोपयोगी नाटक एकांकी लिखने वालों में जंध्याल पापय्या शास्त्री, इल्लिदल सरस्वती देवी, न्यायपति राघवराव आदि प्रमुख हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट रूप में कहा जा सकता है कि तेलुगु का नाटक साहित्य अपेक्षाकृत सम्पन्न है और प्रतिभावान लेखकों के रचना वैशिष्ट्य के कारण भारतीय नाटक साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान रखता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु का कथा साहित्य

योरोपीय भाषाओं के संपर्क से भारत के आधुनिक साहित्य को परिपुष्ट बनाने वाली साहित्य-विधाओं में कहानी का विशिष्ट स्थान है। प्राचीन भारतीय-साहित्य कहानी के अनेक रूपों से भरा पड़ा है। किन्तु आधुनिक कहानी 'बृहत्कथा', 'कथा सरित्सागर', 'पंचतन्त्र', हितोपदेश' आदि की कहानियों से एकदम भिन्न है। आज की भारतीय कहानी, उक्त प्राचीन भारतीय परम्परा को छोड़, पश्चिमी साहित्यिक प्रवृत्तियों की अनुगामिनी बनी हुई है। आधुनिक आन्ध्र-गद्य-पद्य-साहित्य में कहानी ने अपनी क्रमिक और समुचित परिणति के कारण अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है और वह समस्त भारतीय साहित्य में गौरवप्रद स्थान का अधिकारी बन चुकी है।

नयी कहानी के प्रचार में 'प्रेस' का प्रचलन मुख्य कारण है। पत्र-पत्रिकाओं के लिए नित-नूतन और लघु रचनाओं की आवश्यकता बनी ही रहती है। उक्त आवश्यकता की पूर्ति के लिए लेखकों की दृष्टि इस साहित्यिक विधा की ओर आकृष्ट हुई। जीवन विधान के संश्लिष्ट (Complicated) बनकर, पाठक के पास, लंबी-लंबी रचनाओं के पढ़ सकने के अवकाश के अभाव ने भी कहानी को अधिक प्रचलित बनाया। कहानी का, जीवन या व्यक्तित्व से संबंधित अंशों या समस्याओं की अभिव्यक्ति का सफल साधन सिद्ध होना भी, कहानी के बहु प्रचार का मुख्य कारण बना। इस प्रकार अनेकानेक कारणों से लोकप्रिय बनकर, तेलुगु कहानी ने स्वरूप शिल्प, स्वभाव आदि में अपनी एक विशिष्टता सम्पादित कर ली है। संक्षिप्तता, विषय की एकोन्मुखता, चरित्र-चित्रण की मनोवैज्ञानिकता, प्रभाव की एकाग्रता आदि विशिष्ट गुणों से युक्त हो, तेलुगु के कथा साहित्य ने समस्त भारतीय साहित्य में प्रमुख स्थान बना लिया है।

युग पुरुष :

आधुनिक तेलुगु साहित्य के युग पुरुष श्री वीरेशलिंगम पन्तुलु ने यदि किसी साहित्य-विधा को स्पर्श नहीं किया तो वह कहानी है। यह सौभाग्य गुरजाडा अप्पाराव का रहा। सन् 1910 में आपने अपनी पहली कहानी अंग्रेजी में प्रकाशित की। तदनन्तर 'आपका नाम', 'सुधार' आदि कहानियाँ आपने लिखी थीं। हाल में अप्पाराव जी की कहानियों का संग्रह 'आणि मुत्यालु' (चोखे मोती) के नाम से प्रकाशित हुआ है। पन्तुलु जी समाज-सुधार के प्रेमी थे। भाषा के क्षेत्र में भी 'ग्रान्थिक भाषा' (व्याकरण सम्मत शिष्ट भाषा) को छोड़ 'व्यावहारिक भाषा' (बोल चाल की भाषा) को ही आपने प्रश्रय दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अप्पाराव जी ने लघु-कथा रचना की जो परम्परा चलायी, वह आज तक अबाध रूप से चली आ रही है और प्रत्येक वर्ष हजारों की संख्या में कहानियाँ प्रकाशित हो रही हैं।

श्री वेदमू वेंकटराय शास्त्री और चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंहम ने प्राचीन ढर्रे की बहुत सी कहानियाँ लिखी थीं। शास्त्री जी ने संस्कृत के कथा साहित्य का सुन्दर अनुवाद भी प्रस्तुत किया था।

शतावधानी और महापंडित श्री वेलूरिशिवराम शास्त्री जी ने प्राचीन और नवीन का सामंजस्य स्थापित करते हुए विभिन्न विषयों की पृष्ठभूमि पर, सुधारवादी दृष्टिकोण से कई कहानियाँ लिखी हैं। ये कहानियाँ किसी विशिष्ट धर्म का संकेत करती हैं अथवा किसी विशेष संदेश को देने वाली होती हैं। 'कथा षट्कमु' में आपकी श्रेष्ठ कहानियाँ संगृहीत हैं। 'आनन्द भवनमु' नाम की कहानी सर्वश्रेष्ठ आदर्शवादी कहानी मानी जाती है।

तेलुगु कथा साहित्य का ठेठ रूप :

श्री श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री तेलुगु के प्रथम श्रेणी के कहानीकार थे। पश्चिमी प्रभाव से अस्पृष्ट तेलुगु कथा साहित्य का ठेठ रूप इनकी कहानियों में परिलक्षित होता है। इनकी रचनाएँ प्राचीनतावादी परिवारों के वातावरण के अनुरूप हैं। सहज सुन्दर वार्तालाप और यथार्थ घटनाओं से युक्त ये कहानियाँ अमृत की बूंदें मानी गयी हैं। 'गुलाब का इत्र' और 'सीधा जवाब' नामक कहानियाँ अधिक लोकप्रिय हुई हैं। शास्त्री जी की कहानियों के आठ संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। आपने केवल वार्तालापमय कुछ कहानियाँ भी लिखीं थीं।

कथावस्तु, भावाभिव्यक्ति, शैली और भाषा में नवीतना को लाने वाले हैं श्री गुडिपाटि वेंकटचलम्। संप्रदाय और परम्परा का विरोध, स्वेच्छाराज आपको प्रिय रहे हैं। कथा साहित्य के इतिहास में आप 'विपथग' और 'विप्लवकारी' के नाम से प्रख्यात हैं। विरोधी दल की कटु आलोचना का सामना करते हुए भी अचंचल रहे हैं, 'चलं'। जिन्हें इनकी रचनाएँ पसंद आयीं, उन्होंने इन्हें उपदेष्टा कहा, दूसरों ने बाढ़ और उपद्रव। जो भी हो, ये अत्यन्त प्रज्ञाशाली लेखक थे और एक तरह से आधुनिक कहानी में शक्ति और जीवन का प्रसार करने का श्रेय आप ही को है। 'हंपी कन्याएँ', 'सिनेमा ज्वर', प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

अद्वितीय शिल्प :

कवि सम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण कहानी की रचना में भी सिद्धहस्त सिद्ध हुए हैं। कविता के समान ही आपकी कहानी में शिल्प अद्वितीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाल ही में आपकी कहानियों के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'तीन भिखारी' 'माक्ली दुर्ग का कुत्ता', 'जमींदार का लड़का', रिसर्च स्कालर' आदि आपकी सुन्दर कहानियाँ हैं। आधुनिक सभ्यता पर कटु व्यंग भी आपकी कुछ कहानियों में परिलक्षित होता है।

श्री तल्लावज्झल शिवशकर शास्त्री जी की 'नीलकंठम की कहानियाँ' विशेष रस पूर्ण और लोकप्रिय हैं। आप कहानी के अच्छे आलोचक भी हैं।

अडिवि बापिराजु में समस्त ललित कलाओं का समन्वित रूप परिलक्षित होता है। वाणी के अतीत रूप को चित्र में और चित्र के अतीत भाव को वाणी में अभिव्यक्त कर सकने वाले आप सहज कलाकार थे। इसी कारण कथा साहित्य में आपका विशिष्ट स्थान है। कल्पना वीथियों में विहार करते हुए आपने अनेक सुन्दर कहानियाँ लिखी थीं। 'तिरुपति पहाड़ की सीढ़ियाँ', 'भोगीरा की घाटी', 'शैल बाला', 'हम्पी के खंडहर', अधिक लोकप्रिय हुई हैं। 'तरंगिणी', 'राग मालिका', 'अंजली' नाम से कहानियों के संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

गल्पिका :

कहानी की रचना और आलोचना में भी कुशल हैं, श्री कोडवटिगंटि कुटुम्बराव। प्रगतिशील दृष्टिकोण लेकर मध्यम वर्ग का यथार्थ चित्रण करने में आप सिद्ध-हस्त हैं। विविध विषयों को लेकर विभिन्न प्रकार की कहानियों को लिखने वालों में आपका नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। तेलुगु कथा-साहित्य में 'गल्पिका' नामक कथाभेद की रूप कल्पना करने वाले हैं आप। 'पक्षी के लिए गया पिंजडा', 'भागी हुई औरत', 'औरत का जन्म' आदि आपकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

क्लान्त और श्रान्त दैनिक जीवन में माधुर्य भरने वाली मृदु मधुर हास्य-रचना करने वालों में मुनि माणिक्यम नरसिंहराव सर्व प्रथम हैं। आपकी कहानियों की नायिका 'कान्तम्' तेलुगु साहित्य में अमर बन गयी है। दुखपूर्ण और निराशामय पारिवारिक जीवन को रसपूर्ण सिद्ध किया है मुनिमाणिक्यम ने। आन्ध्र देश में कहानियों के अधिक प्रचार का कारण कान्तम् की कथाएँ हैं, यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

मीठा व्यंग्य :

कथन चक्रवर्ती के नाम से प्रसिद्ध श्री चिन्ता दीक्षितुलु ने कहानी की रूप रेखाओं का निर्माण कर, छोटी-बड़ी सभी अवस्थाओं वाले पाठकों की रुचि के अनुकूल कई कहानियाँ रची थीं। प्राचीन सम्प्रदाय के समर्थक होते हुए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आपने आधुनिक सभ्यता पर मीठी चोट की है। आपकी कहानियों में मधुर व्यंग्य पाठक को गुदगुदा देता है। 'वटारावु कथलु' 'एकादशी', कहानी-संग्रह हैं।

'बेरिस्टर पार्वतीराम' नामक हास्य व्यंग्य प्रधान प्रसिद्ध उपन्यास लिखने वाले श्री मोक्कप्पाटि नरसिंह शास्त्री जी ने पारिवारिक जीवन को चित्रित करते हुए कुछ कहानियाँ लिखी हैं। इनमें 'चित्रा' नामक कहानी अति प्रसिद्ध है।

अच्छे पंडित होते हुए भी कलाकार के भावुक हृदय के साथ रचना करने वालों में श्री इन्द्रगण्टि हनुमच्छास्त्री प्रसिद्ध हैं। आप के स्केच और कल्पना चित्र कहलाने वाली रचनाओं में कहानी शिल्प के उत्कृष्ट रूप दृष्टि-गोचर होते हैं। आपकी कहानियों का एक संग्रह प्रकाशित हुआ है।

और करुण भी :

श्री करुणकुमार की कहानियों के तीन चार संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इन कहानियों में आप का नाम सार्थक हुआ है। ग्रामीण जनता के पीड़ित जीवन के करुण चित्रों से ये कहानियाँ भरी पड़ी हैं। ग्रामीण जीवन की गहराइयों तथा मानव मनोविज्ञान की प्रवृत्तियों का चित्रण आपकी कहानियों को पठनीय बनाते हैं।

आधुनिकतन उत्थान के कहानीकारों में पालगुम्मि पद्मराजू, गोपीचंद, बुच्चि बाबू, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री पद्मराजु ने यद्यपि संख्या में कम ही कहानियाँ लिखी हैं, किन्तु ये कहानिदाँ ही आपकी अपार कीर्ति के कारण बनी हैं। 'तूफान' नामक कहानी ने विश्व लघु कथा प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार प्राप्त कर तेलुगु भाषा को अनन्य गौरव से समलंकृत कियाहै। कहानी का निर्माण शिल्प, संयोजनाक्रम, संवादों की सहज सुन्दरता आदि इन कहानियों की विशेषताएँ हैं। ग्रामीण तथा नागरिक जीवन के कई मनोवैज्ञानिक चित्र आपने उपस्थित किये हैं। 'प्रतीक्षित मुहूर्त', 'निर्गन्ध कुसुम', 'नौका यात्रा', आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। आप कहानी के आलोचक भी हैं।

गोपीचन्द इस युग के अत्यन्त प्रतिभाशाली और सबल कहानीकार हैं। उपन्यासकार, कहानीकार होने के साथ साथ आप अच्छे आलोचक भी हैं। आपकी रचनाएँ पाठक के मस्तिष्क को उद्वेलित कर चिन्तन के लिए वाध्य कर देती हैं। ऐतिहासिक घटनाक्रमों, सामाजिक परिस्थितियों व्यक्तियों की मानसिक गतिविधियों और उनके हेतुभूत भिन्न-भिन्न वातावरण को समझ कर, रचना करने वाले बौद्धिक लेखक हैं गोपीचन्द। वे हृदय की अपेक्षा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मस्तिष्क को अधिक प्रभावित करते हैं। सामाजिक और राजनैतिक विषयों से आपकी कलम अधिक प्रभावित है। अत: आपके भाव एवं आदर्श सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं से अधिक संबद्ध दीखते हैं। 'उदार सूद', 'अंधेरे कोने', स्वगत' आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। आपकी कहानियों के पाँच संग्रह निकल चुके हैं।

नवीन लेखकों में श्री बुच्चिबाबू का स्थान विलक्षण है। आप पहले अंग्रेज़ी के प्राध्यापक रह चुके थे। अत: आपकी रचना शैली पर अंग्रेजी का अत्यधिक प्रभाव परिलक्षित होता है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आपकी कहानियों की विशेषता है। रचना शिल्प पर संपूर्ण अधिकार होने से, बुच्चिबाबू अपनी कहानियों में विविधता ला सके हैं। रचनाओं में दृष्टिगत होने वाले उपमान लेखक की व्युत्पत्ति को बतलाते हैं तो व्याख्याएँ प्रतिभा को। फ्रायड के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रभाव बुच्चिबाबू की रचनाओं में परिलक्षित होता है। 'मेरे बारे में कहानी लिखो न ?' 'जंगल की चाँदनी', 'जीने की सीढ़ियाँ', मणिदीप', निरन्तरत्रय' आदि आपकी सुप्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

भरद्वाज, घनिकोंड, अनिसेट्टि आदि फ्रायड के सिद्धान्तों को मान कर लिखने वाले लेखक हैं तो, शंडिला, मधुरान्तकम राजा राव, बलिवाडा कान्ता राव, भास्कर भट्ल कृष्णाराव, आदि पारिवारिक जीवन की समस्याओं का चित्रण करते हुए अच्छी कहानियाँ लिख रहे हैं। अन्य उदीयमान लेखक असंख्य रचनाओं से तेलुगु के कथा साहित्य को संपन्न बना रहे हैं, जिनके केवल नाम गिनने से लेख के कलेवर के असंतुलित हो जाने की आशंका है।

कथा साहित्य को संपन्न बनाने वालों में श्रीमतियों की संख्या कम नहीं है। पारिवारिक जीवन के सुन्दर तथा मार्मिक चित्र इन श्रीमतियों की रचनाओं में दृष्टिगत होते हैं। श्रीमति इल्लिंदल सरस्वती देवी, मालती चन्दूर, वसुन्धरा, एल्लाप्रगडा सीता कुमारी, वासिरेड्डी सीता देवी, अद्देपल्लि विवेकानन्द देवी, नन्दगिरि इन्दिरा देवी, ए. रमादेवी, छाया देवी, श्रीदेवी, जानकी रानी आदि प्रसिद्ध लेखिकाएँ हैं।

तेलुगु में अन्य भाषाओं की कहानियों के सुन्दर अनुवाद हुए हैं और हो रहे हैं। प्राच्य और पाश्चात्य कहानी साहित्य के द्वारा नूतन चैतन्य और शक्ति का अनुभव कर, लेखक कई सुन्दर और मौलिक रचनाएँ कर रहे हैं। तेलुगु का कथा साहित्य भारतीय साहित्य में उत्कृष्ट स्थान का अधिकारी बना हुआ है। वस्तु संविधान और शिल्प की उत्तमता को लेकर, आशा है, भविष्य में तेलुगु के कथाकार भारतीय कथा साहित्य को और भी सुसम्पन्न बनाएंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु साहित्य में हास्य

जातीय मनस्तत्व का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि आन्ध्र जाति स्वभावत: हास्य प्रिय है। जीवन यात्रा में सचमुच 'सीरियस' विषयों को देखकर उनकी 'सीरियसनेस' को समझकर भी, हँस देने की शक्ति आन्ध्रों में है। स्वयं अपने प्रतिबिम्ब को देखकर हँस ले सकते हैं आन्ध्र। वास्तव में हास्य मानवता का जीता-जागता लक्षण है। खिल खिलाकर हँसना या मुस्कान की चाँदनी बिखेर देना मानसिक स्वास्थ्य का द्योतक है। आन्ध्र जाति की यह हास्य प्रियता उसके शिष्ट साहित्य, लोक साहित्य, मुक्तक पद, कहावत आदि में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं के समान ही तेलुगु में भी लिखित साहित्य 11 वीं शती से मिलता है। 11 वीं से 14 वीं शती तक का समय 'पुराण युग' या 'अनुवाद युग' कहलाता है। इस युग में वैदिक धर्म निष्णात महाराजाओं के प्रोत्साहन से धर्मनिष्ठ कवियों ने संस्कृत के कतिपय पुराणों एवं काव्यों का अनुवाद बड़ी प्रतिभा के साथ किया है। नन्नय, भीमकवि, नन्नेचोड, सोमनाथ, तिक्कन्न, केतन, एर्राप्रगडा, नाचनसोम, गौरन, त्रिपुरान्तक आदि इस युग के महाकवि हैं। इस पुराण अनुवाद युग में, एक मात्र हास्य रस को प्रधानता देकर काव्य रचना संभव नहीं थी; किन्तु उस युग के कवियों ने जहाँ जहाँ प्रसंगवश अवसर मिला, वहाँ औचित्य पूर्ण और सरस विधान से हास्य रस का पोषण किया है।

आदि कवि नन्नय ने महाभारत के अन्तर्गत भीमसेन के पेटूपन और मयसभा में दुर्योधन की दुर्दशा का हास्यरस पूर्ण चित्रण किया है। तिक्कन्ना के हास्य में व्यंग्य का पुट अधिक रहता है। वे राजनीति के दाँव-पेंचों से अत्यधिक परिचित थे अत: 'अन्तरंगमुन निडिन हास्य रसम्बु मोमुपैंवेल्लि विरियंगनीक' (अन्तर में उमड़ते हास्य को मुख पर प्रदर्शित न करते हुए) उन्होंने हास्य का पोषण किया है। उनके हास्य प्रसंगों में निगूढ़ व्यंग्य एवं अवहेला का भाव झलकता रहता है। आलंबन के वर्णन की पद्धति, विकृति को ध्वनित करने की निपुणता, हास्यप्रद प्रसंग को ला खड़ा करने का चातुर्य, व्यंग्य पूर्ण वाक् चमत्कार आदि तिक्कन्ना की विशेषताएँ हैं।[1] एर्राप्रगडा ने बड़े संयत रूप से हास्यरस

---

1. तेलुगु हास्य : श्री मुट्नूरि संगमेशम जी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का पोषण किया है। इस प्रकार 'कवित्रय'[1] की रचनाओं में हास्य बड़े संयत और सीमित रूप में दिखाई पड़ता है। उन्होंने 'स्मित' तक ही अपने हास्य को सीमित रखा है।

नन्नेचोड कवि ने अपने 'कुमार संभव' में काम-दहन के प्रसंग में और दक्षयज्ञ के अवसर पर हास्यरस का सुन्दर निर्वाह किया है। कामदेव को उपालम्भ देती हुई रति के ये वचन हृद्य बन पडे हैं—

'कोनि बालुरैननु दिनि पिप्पि युमिसेडि चेरुकु विल्लनि नम्मि चेत बट्टि,
मेलतल तलवेंड्रु कुल बोंदि कंदेडु नलरु पुष्पमुलम्मुलनि तलंचि,
तलिराकुलैन गदल्पनोपनि मंदपवनुंडु नोक पेनु प्रापु गाग,
नवलल्ु सोपिन नाकाशमुन बारुनवि शुकमुलु मूलबलमु गाग,
नेंत वेसवि मुट्टिन नेंड गमरु
ननु वसंतुडु दगु सहायंबु गाग,
गाकिपिल्लल कोडु पिकमुलु बोटु
मगलुगा नुग्रपै बोव दगुने मदन !"

(छोटे बच्चों द्वारा भी, दाँतों से सीठी बनाकर थूके जाने वाले ईख को ही धनुष मानकर, कामिनियों के केशों के सम्पर्क से ही मुरझा जाने वाले फूलों को बाण मानकर, कोंपल को भी हिला न सकने वाले मन्द पवन को अवलंब बनाकर, अबलाओं के देखने पर ही आकाश मार्ग में भाग निकलने वाले शुकों की मूल सेना रचकर, थोड़ी-सी धूप से भी कुम्हला जाने वाले वसन्त को सहायक बनाकर, कौओं के बच्चों से भी हारने वाले पिकों को योद्धा बनाकर, हे मदन ! तुम उग्र (शिव) पर आक्रमण करने जा रहे हो ?)

भास्कर, बद्देना आदि रामायण के कवियों को हास्यरस के निरूपण का अवसर ही नहीं मिला। वानर सेनाओं के वर्णन में विकृत आकार, वाक् और चेष्टाओं के वर्णन में हास्य की थोड़ी-सी झलक मिलती है।

द्विपद (हिन्दी के दोहे के समकक्षी) में रचना कर, वीर शैव सम्प्रदाय का जोरों से प्रचार करने वाले सोमनाथ आदि कवियों ने हास्य को बिलकुल ही छोड़ दिया है।

तेलुगु साहित्य के इतिहास में 14 वीं से 16 शती तक का समय 'काव्य

---

1. नन्नय ने महाभरत के प्रथम ढाई सर्ग, तिक्कन्ना ने शेष पन्द्रह पर्व और एर्राप्रगडा ने अरण्य पर्व के शेष भाग की रचना की थी। तेलुगु महाभारत के इन तीन कवियों को 'कवित्रय' कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

युग' कहलाता है। इस युग की रचनाओं में कला कौशल और रचना विधान को अधिक महत्व मिला। युग का साहित्यिक वातावरण पुराणों की अपेक्षा काव्यों के अनुकूल था जिसमें शृंगार-वर्णन के लिए अधिक अवसर प्राप्त था। इस युग के काव्यों में शृंगार के साथ-साथ हास्यरस का भी सुन्दर परिपाक हुआ है।

इस युग के प्रतिनिधि कवि थे कवि सार्वभौम श्रीनाथ। अनेक ग्रंथों की रचनाकर, अनेक राजाओं के आश्रय में रहकर, अतुलित विलास-वैभव का उपभोग कर, इस महाकवि ने अपनी प्रचण्ड प्रतिभा से, अपने युग के साहित्य-क्षेत्र को आतंकित कर रखा था। श्रीनाथ इतने उत्साही तथा अक्खड़ थे कि जीवन भर सुख भोगकर, अंतिस समय में घोर यातनाओं को सहकर भी, वे यह कह सके कि 'दिविज कवि गुंडेल् दिग्गुरनग नरुगुचुन्नाडु श्रीनाथुडमरपुरिकि' (अमरलोक के कवि के हृदय को कंपित करता हुआ श्रीनाथ अमरपुरी को जा रहा है।) श्रीनाथ के काव्यों में हास्य रस का रूप शृंगार मिश्रित था। इनके अतिरिक्त समय-समय पर कहे गए मुक्तक पद्यों में हास्य का निखरा रूप मिलता है। उदाहरण के लिए एक मुक्तक लीजिए। एक समय वे 'पलनाटि-सीमा' (प्रदेश) में से गुजर रहे थे। वहाँ जल का अत्यंत अभाव है। मारे प्यास के तड़पते हुए भी कविवर को हँसी सूझी। उन्होंने कहा—

"सिरिगल वानिकि चेल्लुनु
तरुणुल पदियारु वेल दग बेंड्लाडन्
दिरिपेमुन किद्दराँड्रा
परमेशा गंग विडुम पार्वति चालुन्।"

(हे परमेश्वर ! जिसके पास श्री (लक्ष्मी, संपत्ति) है, उसके योग्य है सोलह हजार स्त्रियों से विवाह करे। किन्तु भिखारी को दो स्त्रियाँ क्यों ? इसलिए गंगा को छोड़ दो। तुम्हारे लिए पार्वती पर्याप्त है।)

भगवान से जल माँगने का भी कितना अनोखा तरीका है।

महाभक्त पोतन्ना ने अपने महाभागवत में कहीं-कहीं हास्यरस का चित्रण किया है किन्तु श्रीकृष्ण की बाल्य क्रीड़ाओं के वर्णन में हास्यरस की मधुर झाँकी मिलती है। यथा,

आडंजनि वीरल पेरु
गोडक नी सुतुडु द्रावि योक यिचुक ना
कोडलि मूति दुडिचिन
गोडलु म्रु च्चनुचु नत्त कोट्टे लतांगि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन पड़ोसियों के घर खेलने जाकर, तुम्हारे पुत्र ने दही तो पी ही लिया, तिस पर उस घर की बहू के मुँह पर पोत दिया। बहू को देख सास ने समझा कि इसी ने दही पी लिया और उसे पीटा।

नम्मि निदुर वोव ना पट्टि जुट्टु मा
लेग तोक तोड लील गट्टि
वीथुलंदु द्रोले वेलदि नी कोमरुंडु
राचबिड्डैन ख्व मेले !

(तुम्हारे पुत्र पर विश्वास रखकर, सो जाने पर, मेरे पुत्र के केशों को बछिए की पूँछ से बाँध दिया और बछिए को गलियों में भगा दिया। राजकुमार हो तो भी ऐसी शरारत भली नहीं।)

नाचन सोमनाथ के 'उत्तर हरिवंश' में ऊर्वशी नरकासुर संवाद में एवं हंसडिभकोपाख्यान में हास्य का सुन्दर चित्रण हुआ है।

विजयनगर के सम्राट श्रीकृष्ण देवराय की सभा के अष्टदिग्गज कवियों ने मौलिक प्रबन्ध काव्यों का निर्माण किया था। 16 वीं शती से लेकर 18 वीं शती तक के इस समय को 'प्रबन्ध युग' कहते हैं। इस युग के कवियों की दृष्टि वस्तु वर्णन, उक्ति-चमत्कार और शृंगार रस के पोषण की ओर अधिक रही। हास्य रस प्रधान प्रसंगों का, जो बहुत बिरले हैं, निर्वाह संयत और सरस ही बन पड़ा है।

नंदि तिम्मन्ना के 'पारिजातापहरण' के नायक श्रीकृष्ण हैं। इस काव्य में 'दक्षिण नायक' (सब पत्नियों को प्रसन्न रखने वाला) की आफतों का सुन्दर वर्णन है। अपने पति को दूसरों के हाथ दान कर, फिर उन्हें खरीद लेने का उपाय बतलाने वाले कलहाशन नारद का युक्ति चमत्कार, सत्यभामा की मनोवेदना का सरस चित्रण किया है।

अष्टदिग्गज कवियों में अपने उक्ति वैचित्र्य और हास्यप्रियता के लिए तेनालि रामकृष्ण कवि प्रख्यात हैं। वे 'विकटकवि' के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। कहते हैं कि बचपन में कालीमाता ने उन्हें दर्शन दिए और दोनों हाथों में दो पात्र—एक में दूध और दूसरे में दही—लेकर कहा कि अगर तुम संपत्ति चाहते हो तो दूध और कविता चाहते हो तो दही, कोई एक वस्तु ग्रहण करो। रामकृष्ण दोनों को मिलाकर पी गए। देवी ने रुष्ट होकर शाप दिया कि विकट कवि बन जाओ। रामकृष्ण के काव्यों में प्रौढ़ कवि-प्रतिभा के दर्शन होते हैं। उनके नाम पर कई हास्यरस पूर्ण मुक्तक और कहानियाँ प्रचलित हैं। कहानियाँ बीरबल की कहानियों की याद दिलाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

योगिवर वेमन्ना की रचनाओं में सामाजिक रूढ़ियों पर कटु व्यंग्य मिलता है। उनकी सूक्तियों में उपहास की भावना कहीं-कहीं तीखी और कहीं मृदु-मधुर बन पड़ी है—

पालसागरमुन पव्वलिचिनवाडु
गोल्लयिड्ल पालु कोरनेल ?
एदुटिवारि सोम्मुलेल्लवारिकि तीपु
विश्वदाभिराम विनुर वेम !

(दूध के सागर में लेटने वाले को (श्रीकृष्ण को), जिसके पास दूध की कोई कमी नहीं, गोपियों के घरों के दूध-दही पर इच्छा क्यों हो ? पराया धन सबको प्यारा होता ही है।)

तालिकोट युद्ध के बाद विजयनगर साम्राज्य का पतन हो गया। तदनन्तर आन्ध्र-सरस्वती सुदूर दक्षिण में स्थित तंजाऊर, पुदुक्कोट आदि राज्यों में चली गई। वहाँ के आन्ध्र नायक राजाओं और महाराष्ट्र नरेशों ने तेलुगु साहित्य की प्रशंसनीय सेवा की। अत: इस युग को—17 वीं से 19 वीं शती तक—'दक्षिणांन्ध्र' युग कहते हैं। इस युग में काव्य रचना में भावपक्ष की उपेक्षा-सी की गई और कलापक्ष के निखार की ओर अधिक ध्यान दिया गया। शृंगार को अधिक महत्व मिला जो धीरे-धीरे निम्नस्तर को गिरता गया। इसलिए कुछ विद्वानों ने इसे 'शृंगार काल' या "ह्रास युग" माना है। इस प्रकार के वासना प्रधान शृंगार के सहायक के रूप में कहीं-कहीं हास्यरस का निर्वाह हुआ। चेमकूर वेंकट कवि के 'विजय विलास' काव्य में जिसकी कथावस्तु सुभद्रा और अर्जुन का विवाह है, गार्हस्थ्य हास्य का सुन्दर निर्वाह हुआ है।

इस युग में अधिक्षेपक (Satrical) काव्यों की रचना अधिक हुई है। राजा के निरादर करने पर या शासन विधान से रुष्ट होकर अर्थ श्लेष का सहारा लेकर लिखे गए व्यंग्य काव्यों में 'रावणदम्मीयमु', 'चंद्ररेखा विलापमु', (जो पहले 'विलासमु' के रूप में लिखा गया था), 'दशावतार चरित्र' 'रामलिंगेश शतकमु', आन्ध्र नायक शतकमु', 'गणनाथाभ्युदयमु', 'वेणुगोपाल शतकमु', 'चन्द्रशेखर शतकमु' आदि प्रमुख हैं। 'बूताडक दोरकुनव्वुपुट्टदु' (अश्लील बातें कहे बिना राजा को हँसी नहीं आती) कहकर लिखने वाले कवि चौडप्पा के शतक में अश्लील हास्य की भरमार है। इन रचनाओं में शिष्ट हास्य का नितान्त अभाव है।

भारतीय साहित्य में 19 वीं शती के उत्तरार्द्ध से ही 'आधुनिक युग' या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'गद्यकाल' का प्रारम्भ होता है । एक नई जागृति के प्रस्फुरण से सारे देश में एक नई चेतना के दर्शन होते हैं । आधुनिक युग में पश्चिमी साहित्य के संपर्क से विकसित साहित्य की नई प्रक्रियाओं में अपूर्व उन्नति के दर्शन होते है । काव्य, महाकाव्य, शतक, गेय, नाटक, कहानी, उपन्यास आदि काव्य की विभिन्न विधाओं में तेलुगु के साहित्यकारों ने प्रशंसनीय रचनाएँ प्रस्तुत की हैं ।

प्रथम उत्थान काल में, समाज सुधार के साधन के रूप में हास्य का प्रयोग किया गया । सामाजिक रूढ़ियों की अवहेला करते हुए प्रहसन, खंड-काव्य, कहानी, उपन्यास, नाटक लिखने वालों में आधुनिक तेलुगु साहित्य के भारतेंदु श्रीकंदुकूरि वीरेशलिंगम पन्तुलु प्रधान हैं । उनके प्रहसन सामाजिक कुरीतियों के उपहासात्मक हास्य से भरे हैं । 'सरस्वती नारद संवाद' काव्य में पंडित की खिल्ली उड़ाई गई है । श्री गुरजाड़ा अप्पाराव, चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहम, पानुगंटि नरसिंहाराव आदि ने भी इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर प्रधान रचनाएँ की हैं । इन रचनाओं में समाज-सुधार के प्रधान लक्ष्य बन जाने से हास्य का रूप उतना निखरा नहीं है, हास्य की अपेक्षा व्यंग्य को अधिक महत्व मिला है ।

आधुनिक तेलुगु कविता के मूल पुरुष श्री तिरुपति वेंकट कवुल (कविद्वय) ने अपने मुक्तक पद्यों में, जीवन की वास्तविक घटनाओं में निहित हास्य का सुमधुर चित्रण किया है। नास पर कहा गया पद्य बड़ा सुन्दर बन पड़ा है । यथा—

नश्यं सभावश्यकरं, नेत्रद्वय नाशकरम् । और—
निदुर बोगोट्टु ग्रममुगा नेत्तिकेक्कु
गलुषत घटिंचु गुंडयु गर्रयु दन
चेति कोन गूर्चू नदिगान जेप्पन गुने
वेश्यकुनु नश्यमुनकु भेदमिलनु ।

निद्रा को दूर कर देता है धीरे-धीरे सिर पर चढ़ बैठता है, मलिनता पैदा कर देता है । घड़ा और लाठी हाथ में धर देता है । तब वेश्या और नास में अन्तर ही क्या है ? (नास के आदी स्वयं सिलौटा और लट्ठ लेकर नास बना लेते हैं, वेश्या हाथ में भिक्षा पात्र धर देती है ।)

विशेषता इस बात में है कि वे स्वयं नास के आदी थे और आन्ध्र देश में नास का उपयोग करना 'पंडित-लक्षण' माना जाता है ।

रामकृष्ण कवियों की प्रतिद्वन्द्वी बनाकर, कविता-युद्ध का निर्वाह करते हुए लिखा गया 'गीरतमु' ('भारतमु' के वज़न पर) तेलुगु के अधिक्षेप काव्यों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में अद्वितीय है। इस काव्य में कवियों ने पर्वों के नाम तक व्यंग्यात्मक रूप से दिये हैं; यथा गालियों का पर्व, जूतों का पर्व आदि।

इस युग में लिखे गए अन्य हास्य प्रधान काव्यों में 'कवि महाराज शतक', 'चाकि रेवु' (धोबीघाट) 'उन्माद सहस्रमु' आदि हैं।

द्वितीय उत्थान काल में 'भावपक्ष' (छायावाद) के कवियों की रचनाओं में कल्पना की उड़ान, 'हमेशा विरह विषाद दिशा' की वेदना, प्रकृति प्रेम आदि के कारण हास्य के लिए स्थान नहीं रहा। किंतु भाव कवियों का मजाक उड़ाते हुए कई पैरोडियाँ रची गई हैं। भाव कवियों (छायावादी) को 'बाव' (साला) कवि कहा गया। श्री देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री के प्रसिद्ध छायावादी काव्य 'कृष्ण पक्ष', की अवहेला के रूप में 'शुक्लपक्ष' लिखा गया।

'पंडुग कट्नम् (त्योहार का उपहार) केवल हास्य प्रधान खंड काव्य है जिसमें लोभी का मजाक उड़ाया गया है। श्री सेट्टि लक्ष्मीनृसिंह कवि का 'प्रभास शाप विमोचन', 'कृष्ण शतक' भी हास्य प्रधान काव्य हैं।

इस युग में 'टी शतक' (चाय पर सौ पद्य), 'काफी शतक' और 'सिगरेट दंडक', 'चाय दंडक', 'वकील दंडक', 'आधुनिक सन्ध्यावन्दन', 'काफी देवता स्तुति' आदि रचे गए हैं। मूल रचना से परिचित रहे बिना, इन पैरोडियों का रसास्वादन नहीं कर सकते।

तृतीय उत्थान काल में प्रगतिवादी और प्रयोगवादी कवियों ने हास्य की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया। कहीं-कहीं अपने विचित्र प्रयोगों से इन कवियों ने पाठकों को हँसा दिया है।

नाटक समाज-सुधार का उत्तम साधन माना गया है। श्री वीरेशलिंगम पन्तुलु के प्रहसन, श्री पानुगंटि नरसिंहाराव जी के नाटक, गुरजाड़ा अप्पाराव जी के 'कन्याशुल्कम', श्री कावकूरि नारायणराव का 'वरकट्नम' (दहेज) आदि में सामाजिक कुप्रथाओं का मजाक उड़ाया गया है। श्री पानुगुंटि के अन्य ऐतिहासिक एवं पौराणिक नाटकों में हास्यरस का सुन्दर निर्वाह हुआ है। 'कन्याशुल्कम' में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग के बिना बोल न सकने वाले आधुनिक युवकों के प्रतिनिधि के रूप में 'गरीशम' चिरस्मरणीय पात्र है। इस नाटक की कथावस्तु 'कन्याशुल्क' अर्थात् पिताओं को अपनी कन्याओं को बेचने एवं आधुनिक युग के कपटी समाज-सुधारकों से संबद्ध है। 'वरकट्नमु' में दहेज प्रथा की निंदा करते हुए आधुनिक शिक्षित युवकों की खिल्ली उड़ाई गई है।

'प्रतापरुद्रीयमु' में श्री वेदमु वेंकटराय शास्त्री ने भाषा प्रयोग के वैचित्र्य से हास्य का सरस निर्वाह किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्रीयुत् श्रीपाद सुब्रह्मण्यम, भमिडिपाटि कामेश्वरराव, मल्लादि विश्वनाथ कविराजु, मल्लादि वेंकट कृष्णशर्मा ने हास्य प्रधान एकांकी लिखे हैं। श्री भमिडिपाटि के 'एप्पुडू ऐते' (सदा ऐसे ही) 'बागु बागु' (खूब खूब) 'कचटतपलु', 'पेक्कि ट्रेनिंगु' (शादी का ट्रेनिंगु) और कविराजु के 'डोंकलो शराबु' (झाड़ी में सर्राफ), 'किर्रु गानुग' (चरमर कोल्हू) आदि प्रसिद्ध हैं। श्री मुनिमाणिक्यम नरसिंहाराव ने पारिवारिक जीवन की घटनाओं के हास्य का चित्रण करते हुए सुन्दर एकांकी लिखे हैं। श्री भमिडिपाटि के सुपुत्र श्री राधाकृष्ण का 'दन्तवैद्य' हास्य प्रधान एकांकी है, जो कई बार अभिनीत होकर दर्शकों की प्रशंसा प्राप्त कर चुका है।

श्री वीरेशलिंगम पन्तुलु जी ने 'गुलीवर की यात्राएँ' का अनुकरण करते हुए 'सत्यराजा की पूर्व देशयात्रा' नामक व्यंग्य प्रधान उपन्यास लिखा है जिसमें अन्यापदेश के रूप में तत्कालीन सामाजिक कुप्रथाओं की आलोचना की गई है। श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहम, भोगराजु नारायण मूर्ति, अडिवि बापिराजु, श्रीपात सुब्रह्मण्य शास्त्री जी आदि सुप्रसिद्ध उपन्यासकारों की रचनाओं में यथा प्रसंग हास्यरस का समुचित निर्वाह किया गया है। कवि सम्राट श्री विश्वनाथ सत्यनारायण जी के उपन्यासों में आधुनिक विज्ञान के वरदानों, आधुनिक सभ्यता के उपकरणों आदि पर कटु व्यंग्य मिलता है, जिसकी चोट खाकर तिलमिलाते रह जाना पड़ता है। केवल हास्य रस को प्रधानता देकर लिखे गए उपन्यासों में चिलकमर्ति का 'गणपति', मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री का 'बैरिस्टर पार्वतीशम' और जलसूत्रम रुक्मिणीनाथ शास्त्री का 'देवय्या' प्रख्यात है। बुद्धिहीन गणपति की जीवनी की प्रत्येक घटना हमें हँसा-हँसाकर छोड़ती है। देशोद्धार करने के लिए बैरिस्टर बनने के लिए घर से निकल पड़ने वाले पार्वतीशम के रेल, मद्रास, जहाज, कोलंबो, पैरिस आदि में संप्राप्त अनुभवों का वर्णन हमें लोटपोट कर देता है। तेलुगु में एक कहावत सी चल पड़ी है कि अगर उदास हो तो बैरिस्टर पार्वतीशम पढ़ो। इस उपन्यास को प्रकाशित हुए लगभग 40 वर्ष हो गए हैं, किन्तु इसकी लोकप्रियता आज भी बनी हुई है। अशिक्षित युवक के, जिसने कभी रेल भी नहीं देखी, आधुनिक सभ्यता के वातावरण में ला खड़ा कर देने से प्राप्त अनुभवों का वर्णन सरस और मनोहर बन पड़ा है। 'देवय्या' भी इसी प्रकार का उपन्यास है। श्री मुनिमाणिक्यम नरसिंहाराव के उपन्यासों में जीवन की वास्तविक घटनाओं में निहित हास्य का सुन्दर चित्रण होता है। 'अध्यापक' में नए-नए अध्यापक युवक का चित्रण हुआ है, जिसके भोलेपन पर हँसे बिना नहीं रहा जा सकता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्री श्रीपाद सुब्रह्मण्यम, भामिडिपाटि, कोडवटिटंटि, गुडियाटि वेंकट चलम्, चिन्ता दीक्षितुलु आदि को कहानियों में हास्य का निखरा रूप मिलता है। इन सभी लेखकों ने पारिवारिक जीवन की सुन्दर झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं। चिन्ता दीक्षितुलु जी की 'बटीराव की कथाएँ' नामक कहानी संग्रह में, आधुनिक सभ्यता से प्रभावित शिक्षित स्त्री समाज का मनोहर चित्रण हुआ है। कलावती का 'बटीराव' बनने से लेकर, प्राचीन आचार-विचार के प्रति उनकी (पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित आधुनिक नारीमणियों की) विचार धारा का हास्य प्रधान चित्रण हुआ है।

आधुनिक तेलुगु साहित्य में हास्य को प्रधान रस बनाकर रचना करने वालों में श्री मुनिमाणिक्यम नरसिंहाराव का विशिष्ट स्थान है। उनका कथन है कि जीवन उतना दुखपूर्ण नहीं है, जितना हम समझते हैं। जिन्हें हम दुखद व चिन्ताजनक समझते हैं, उन्हीं घटनाओं में सुख निहित है। दैनिक जीवन की सामान्य घटनाओं को ही जरा गौर से देखें तो मन बहलाने वाले अनेक विषयों के दर्शन होंगे।" नरसिंहाराव जी ने अपनी कहानियों में सामान्य से सामान्य घटनाओं का रोचक व हास्य-रसात्मक चित्रण किया है। साधारण व्यक्ति की दैनिक जीवन यात्रा को ही कथावस्तु के रूप में चुनकर, नित्य ही होने वाले पति-पत्नियों के लड़ाई-झगड़ों में स्थित हास्य व सौन्दर्य का दिग्दर्शन कराकर, अपनी वर्तमान दशा में ही सन्तुष्ट बने रहने का वे उपदेश देते हैं।

समाज सुधार को ही ध्यान में रखकर लिखे गए श्री पानुगंटि नरसिंहा राव के निबन्ध 'साक्षी' नाम से 6 भागों में प्रकाशित हैं। 'कृष्णा-पत्रिका' में प्रकाशित 'वडगंड्लु' (ओले) 'बंदरुबोतु' (बक्की) और 'आन्ध्र ज्योति' एवं 'युव' में 'पनिलेनिमंगलि' (बेकार हज्जाम) नाम से धारावाहिक रूप से, विभिन्न सामयिक विषयों पर प्रकाशित लेख, हास्य के सुन्दर चित्रण हैं जो पाठकों को गुदगुदा देते हैं।

'विनोदिनी' एक मासिक पत्रिका केवल हास्य रसात्मक रचनाओं को ही प्रधानता देती हुई, कई वर्षों तक प्रकाशित होती रही।

तेलुगु के लोकगीत साहित्य में भी हास्य रस की सुन्दर झाँकी मिलती है। 'सूक्ष्मरामायण' में शूर्पणखा का वर्णन, 'ऊर्मिलादेवी की निद्रा' में भाभी जीजी के संवाद, 'शशिरेखा परिणय' में घटोत्कच का लक्ष्मण कुमार को डराना, 'गंगा गौरी संवाद', 'लक्ष्मी पार्वती संवाद' आदि में जातीय हास्य के मनोरम रूप के दर्शन होते हैं। सामाजिक शृंगार प्रधान लोकगीतों में अश्लील हास्य के साथ शिष्ट और मधुर हास्य के भी दर्शन होते हैं। एक गीत में युवती कहती है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ओकरिकि चेतुलिच्चान्, ओकरिकि काल्लनिच्चान्,
ओकरिनि चेतबट्टि कूकुन्नानोई बावा ! कूकुन्नानोई ।

(किसी को हाथ दिए और किसी को पैर दिए । और किसी को हाथ में लिए बैठी रही ।)

इसे सुन ईर्ष्यालु बन, नायक पूछता है कि किसको हाथ दिए और किस को पैर ? ऐ छोकरी ! बोल, किसे हाथ में लिए बैठी हो ? तब वह कहती है—

गाजुलकु चेतुलिच्चान् कडियालकु काल्लनिच्चान्
डब्बुलनि चेतबट्टि कूकुन्नानोई बावा ! कूकुन्नानोई ।

(चूड़ियों को हाथ दिए और नूपुरों को पैर । हाथ में पैसे लेकर तेरी ही बाट जोहती बैठी रही ।)

इस प्रकार स्पष्ट है कि तेलुगु की सभी साहित्य विधाओं में हास्य का समचित का निर्वाह किया गया है । अधिकतर रचनाओं में केवल विशुद्ध हास्य की अपेक्षा, ध्वनि प्रधान व्यंग्य की प्रधानता स्पष्ट परिलक्षित होती है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु कविता में राष्ट्रीय चेतना

भारत का कोई भी प्रांत ऐसे वीरों से खाली नहीं है, जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित होकर, राष्ट्र[1] की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहुति न दी हो। और न ही देश में कोई ऐसा प्रांत है, जो इन वीरों की वीरगाथाओं के गीतों से गुंजित न होता हो। आंध्र जाति को अपने वीर नर-नारियों पर समुचित गर्व है, जिन्होंने जातीयता से प्रेरित होकर, अपनी वीरता तथा पौरुष के उज्ज्वलतम प्रमाण प्रस्तुत किए। आंध्र के लोकगीतों, काव्यों, नाटकों आदि में इन वीररस पूर्ण प्रसंगों की जिनमें राष्ट्रीय चेतना की झाँकी मिलती है, उद्भावना पर्याप्त मात्रा में परिलक्षित होती है।

वीररस प्रधान लोकगीतों में 'काटमराजु कथा', 'पलनारिवीर चरित्र' 'बोब्बिलि कथा' 'अल्लूरि सीतारामराजु कथा', 'चिन्नपरेड्डि पदमु', 'सर्वापि पापारयुडि कथा', आदि विख्यात तथा अत्यत लोकप्रिय हैं। इन वीर गीतों को आज भी लोग बड़े चाव से सुनते हैं और प्रभावित होते हैं। किन्तु इन वीररस प्रधान लोकगीतों में राष्ट्रीय चेतना की अपेक्षा, संकुचित प्रादेशिक चेतना के ही दर्शन होते हैं। वस्तुत: उस समय आज की तरह राष्ट्रीय चेतना की कोई परिकल्पना ही नहीं थी। अत: इन लोकगीतों में अभिव्यक्त वीर रस प्रधान भावना को ही राष्ट्रीय चेतना का मूल रूप मानना संगत होगा। उदाहरण के लिए 'बोब्बिलि कथा' की इन पंक्तियों को प्रस्तुत किया जा सकता है।

'रामा रामा अनंतकालमु राज्यमुलेलुतामा ?
युगमु जगमुलुन्नंत वरकु उंडंग पोतामा ?'

(राम ! राम ! अनंतकाल तक राज्य करते रह सकेंगे क्या ? युग और जग जब तक रहे तब तक जीवित रह पाएँगे क्या ? अर्थात् यह शरीर नश्वर है अत: संकुचित स्वार्थ को तज देश की रक्षा के लिए आत्म बलिदान करना चाहिए) वीर सैनिकों को प्रोत्साहित करते हुए बौबिलि नगर की वैश्या स्त्रियों के कहे ये वचन एक प्रकार से राष्ट्रीय चेतना को जगाने-वाले ही हैं।

आंध्र के प्राचीन तथा मध्य युगीन साहित्य में, कथा प्रसंग के अनुसार, कहीं-कहीं वीर रस पूर्ण घटनाओं का वर्णन अवश्य मिलता है, किंतु उनमें देश अथवा राष्ट्र के बारे में कहीं कोई चर्चा नहीं मिलती। केवल तेलुगु साहित्य में ही नहीं, अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्यों में भी राष्ट्रीय चेतना

---

1. तेलुगु भाषा में 'राष्ट्र' का अर्थ प्रदेश और जाति का अर्थ 'नेशन' है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का अभाव परिलक्षित होता है। वास्तविकता यह है कि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व, राष्ट्रीय चेतना की भावना ही जागृत नहीं हुई थी। सन् 1857 के समय में भी कुछेक दूरदर्शी देशभक्त नेताओं को छोड़कर अधिकतर लोग प्रादेशिकता के संकुचित दायरे में ही बँधे रहे।

नेशनल कांग्रेस (सन् 1885) की स्थापना[1] के बाद और सच्चे अर्थों में महात्मा गांधी के भारतीय राजनीति के क्षेत्र में पदार्पण के बाद ही हमारे देश में राष्ट्रीय चेतना की लहर उभरकर सामने आई। अंग्रेजों की गुलामी से अपने आपको मुक्त करने के लिए समस्त भारतीय जनता ने एकसूत्रता में निबद्ध होकर एक स्वर से अपनी भावनाओं को प्रकट किया। प्रबुद्ध मनीषियों ने अपनी-अपनी प्रादेशिक भाषाओं में राष्ट्रीय चेतना को जागृत किया। उस समय 'वंदेमातरम्' गीत गाना, खद्दर के कपड़े पहनना और राष्ट्र भाषा हिंदी सीखना-सिखाना देशभक्ति के लक्षण समझे जाते थे। इन तीनों ने राष्ट्रीय चेतना के प्रचार-प्रसार में पर्याप्त सहयोग दिया। स्वतंत्रता आंदोलन ने (कांग्रेस के द्वारा संचालित) भारत की एकता को बल पहुँचाया और समस्त देश में राष्ट्रीय चेतना की लहर दौड़ाई। तेलुगु के कवियों ने भी स्वर में स्वर मिलाकर, गीत, कविताएँ, काव्य आदि की रचना की।

सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के विफल हो जाने के बाद भी स्वतंत्रता प्राप्ति की आग देश के चप्पे-चप्पे पर किसी न किसी रूप में बलती ही रही। 1875 तक राष्ट्रीय चेतना की नई धारा देश भर में फैल गई। देशवासियों को गुलामी की दुर्दशा से बचाने के लिए तथा अंग्रेजी शासन के अत्याचारों के प्रति जनता में चेतना जागृग करने के लिए कई व्यक्तियों और संस्थाओं ने कमर कस ली। उस समय आन्ध्र प्रान्त के अविभक्त मद्रास प्रदेश (यूनाइटेड मद्रास प्रेसीडेंसी) के भाग होने के कारण, मद्रास में रहने वाले प्रमुख और प्रबुद्ध आन्ध्रों ने इस कार्य का श्रीगणेश किया। इनमें सर सी. पी. माधवराव, आर. रघुनाथ राव, तल्लाप्रगड सुब्बाराव, पनप्पाकं अनंताचार्य, गाजुल लक्ष्मी नरसु चेट्टि के नाम उल्लेखनीय हैं। 1852 में चेट्टि और उनके मित्रों ने 'मद्रास नेटिव एसोसिएशन' की स्थापना की थी। 1884 में 'मद्रास

---

1. तेलुगु भाषी हिन्दी नाटककार पं. पुरुषोत्तम कवि (1862-1938) ने सन् 1884 में स्थापित अपनी नाटक कंपनी का नाम 'नेशनल थिएट्रिकल कंपनी' रखा था। संभवतः देश भर में 'नेशनल' शब्द का प्रयोग पं. पुरुषोत्तम कवि ने ही सर्वप्रथम किया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महाजन सभा' की स्थापना की गई थी जिसके अध्यक्ष थे श्री पी. रंगय्य नायुडू, मंत्री थे पनप्पाकं अनंताचार्य। आन्ध्र के काकिनाडा नगर में 'काकिनाडा लिटररी एसोसिएशन' की स्थापना भी शिक्षित जनता में राष्ट्रीय चेतना के प्रसार के ध्येय से की गई थी।

उपर्युक्त व्यक्तियों और संस्थाओं ने भाषण, लेख, सभा, अधिवेशन आदि के माध्यम से जनता में नवजागरण लाने का सफल प्रयास किया। यह सब गाँधी जी के आगमान की पूर्वदशा थी। दक्षिण अफ्रीका से लौटकर, गाँधीजी के आंदोलन का विगुल बजाने के बाद राष्ट्रीय चेतना को अतीव स्फूर्ति मिली।

1907 में बंगाल से आकर श्री बिपिनचंद्र पाल ने राजमहेंद्रवरम् में 19 से 24 अप्रैल तक भाषण दिया। इन भाषणों का तेलुगु में अनुवाद सुप्रसिद्ध लेखक श्री चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिहम् जी ने किया था। भाषणों की समाप्ति पर चिलकमर्ति जी ने आशु रूप से निम्न पद्य सुनाया था।

'भरत खंडंबु चक्कनि पाडियानु
हिन्दुवुलु लेगदूडल येड्चुचुंड
तेल्लवारनु गडुसरि गोल्लवारु
पितुकुमुतुन्नारु मूतुल बिगिय गट्टि

(भारत देश सुन्दर दुधारू गाय के समान है तो यहाँ के निवासी निरीह बछड़ों के समान रो रहे हैं। रोते हुए बछड़ों के मुंह बांध कर, गोरे रूप ग्वाले दूध दुह कर ले जा रहे हैं।)

यह पद्य उन दिनों अत्यंत लोकप्रिय हो गया था। तेलुगु के सुप्रसिद्ध कवि एवं समालोचक डा. सी. नारायण रेड्डी इस पद्य को तेलुगु भाषा में राष्ट्रीय चेतना से युक्त प्रथम रचना मानते हैं।[1] इस पद्य के अतिरिक्त श्री चिलकमर्ति के 'गोदावरी मंडल सभा' में पठित पद्य 'चिन्तामणि' नामक पत्रिला में (1895 में) प्रकाशित हुए थे। इन पद्यों में व्याजस्तुति से अंग्रेज सरकार की दमन नीति और अत्याचारों की पोल खोली गई थी। इस प्रकार तेलुगु कविता में राष्ट्रीय चेतना का श्री गणेश करने का श्रेय वास्तव में चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंहम् पंतुलु को ही जाता है।

तेलुगु काव्य क्षेत्र में छायावादी कविता के अग्रदूत रायप्रोलु सुब्बाराव जी का निम्न गीत भी अत्यंन लोकप्रिय रहा है।

---

1. आधुनिकांध्र कविस्वमु पृष्ठ 328

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'ए देशमेगिना, एंदु कालिडिना
ए पीठमेक्किना, एव्वरेमनिना
पोगडरा नी तल्लि भूमि भारतिनि
निलुपरा नी जाति निडु गौरवमु...................'

(कहीं भी जा, किसी भी देश की माटी पर कदम रख,
किसी भी स्थान पर आसन जमा, कोई भी चाहे कुछ भी कहे
गाए जा अपनी भूमि भारती की गाथा
किए जा अपने राष्ट्रीय गौरव की रक्षा।

किस पूर्व पुण्य बल से, किस पूर्व-योग-बल से
जन्मे हो इस स्वर्ग लोक भारत में
किन अच्छे फूलों से नाता जोड़ा
(जो) गर्भवास प्राप्त हुआ इस मही का।
आलोकित रहा यह दिव्य विश्व
प्रदीप्त किया इस पुण्य देश ने
खेतों में उपजे रत्न यहाँ
उदधि में रही खेती मोतियों की।
दिव्य ओषधियों से फूली पृथ्वी
काननों में रही कस्तूरी की फसल;
अपमान काहे का ? संकोच किस बात का !
गाए जा भक्तिभाव से 'मैं हूँ भारतीय।'[1]

चिलकमर्ति के प्रभाव से अन्य कवियों ने प्रबोधात्मक पद्य लिखे थे। इनमें 1897 की 'चितामणि' पत्रिका में प्रकाशित पी. रामशास्त्री के पद्य हैं जिनमें देश-भक्ति के सार तत्व का निरूपण किया गया है। 19 वीं. सदी के अन्य ऐसे कवियों में ईश्वर जगन्नाथ मार्तंड शास्त्री, मंतिन आदिनारायण मूर्ति के नाम उल्लेखनीय हैं।

1909 के अक्तूबर के 'आंध्र भारती' के अंक में 'जागरण गीत' नाम से प्रकाशित प्रबोधात्मक गीत भी उल्लेखनीय है।

1. 'मैं हूँ भारतीय' शीर्षक से स्व. रायप्रोलु सुब्बाराव जी की पूरी कविता का अनुवाद इन पंक्तियों के लेखक का 'निर्मला' (मद्रास) के जून, 1960 के अंक में प्रकाशित हुआ था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

1902 में स्थापित 'कृष्णा पत्रिका' (सं. मुट्नूरि कृष्णाराव) ने प्रथम अंक से ही राष्ट्रीय चेतना के प्रचार-प्रसार में स्पृहणीय योग दिया है।

इस प्रथम उत्थान में अन्य अनेक कवियों ने फुटकर कविताओं की रचना की थी जो राष्ट्रीय चेतना का उद्बोधन करने वाली हैं। कुछ कविताओं के कवियों के नाम भी नहीं मिलते हैं। संभवत: कवि अपने आपको-परिस्थितियों के प्रभाव से-अज्ञात ही रखना चाहते हों। 'वंदेमातरम्', 'भारत धर्म दर्शनम्', 'भरतखड विमुक्ति', 'भरतमातृशतकम्', 'अस्पृश्यों का गीत' आदि देशभक्ति का तथा भारतवासियों के लिए कर्तव्य का प्रबोध कराने वाली कविताएँ हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि 20 वीं सदी के प्रथम दशक में ही तेलुगु भाषा में राष्ट्रीय चेतना से युक्त कविताओं की रचना हुई है।

20 वीं सदी के दूसरे दशक से लेकर प्रकाशित काव्य-रचनाओं को, अध्ययन की सुविधा के लिए चार वर्गों में बाँटा जा सकता है।

1. नेताओं की प्रशस्ति में लिखे गए काव्य
2 नेताओं की स्मृति में लिखे गए काव्य
3. उद्बोधन प्रधान काव्य
4. अस्पृश्यता का निवारण करने वाले काव्य

आध्यात्मिक जीवन की साधना के द्वारा भारत के ही नहीं समग्र विश्व के उत्थान के लिए जीवन भर पुनीत प्रयास करने वाले महात्मा गाँधी का प्रभाव देश की प्रत्येक भाषा के साहित्य पर परिलक्षित हो सकता है। गाँधी जी की विचारधारा से प्रभावित उत्कृष्ट रचनाओं से भारतीय साहित्य भरा पड़ा है। तेलुगु भाषा में इस प्रकार के साहित्य को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। प्रथमत: गाँधी जी के जीवन को केंद्र में रखकर लिखी गई रचनाएँ ली जा सकती हैं तो दूसरे वर्ग में गाँधी जी की विचारधारा से प्रभावित या गाँधी जी के सिद्धांतों को प्रतिपादित करनेवाली रचनाएँ हैं।

गाँधी जी की जीवनी को कथावस्तु के रूप में ग्रहण कर लिखे गए काव्यों में 'अभिनव तिक्कना' के विरुद से प्रसिद्ध तुम्मल सीतारामपूर्ति चौधरी के 'आत्म-कथा' तथा 'महात्मा कथा' का प्रधान रूप से उल्लेख किया जा सकता है। 'आत्मकथा' वैसे गाँधी जी की आत्मकथा का ही तेलुगु में काव्यानुवाद है किन्तु कवि के हृदय में गाँधी के प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति ने उसे विशिष्ट रमणीय काव्य रूप दिया है। काव्य के प्रारभ में चौधरी जी ने लिखा है :

'कासुलकु दासंडगुचु मुक्किडिनि बोगडि
कल्ल कैतल नल्लुटकंटे निट्टि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुणगरिष्ठुल, देश भक्तुल चरित्र
चेप्पुट जगद्धितंबेन चेत गादे !'

(मुहरों (पैसों) के लिए दास बनते हुए, नीचों की प्रशंसा कर, झूठी कविताएँ कहने की अपेक्षा ऐसे (गाँधी जी के समान) गुण युक्त और देश भक्त जनों के चरित्र (कथा) को काव्यबद्ध करना जगत् के लिए हितकारी कार्य है न ?) जगत्-हित की भावना को लेकर चौधरी जी ने आत्मकथा का काव्यानुवाद 20 वर्षों की लंबी कालावधि में (2-10-32 से 26-1-51 तक) संपन्न किया।

'महात्मा कथा' में सन् 1927 (गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा को 1925 में शुरू करके 1927 में पूरा किया था) के बाद के गाँधी जी के जीवन की कथा को काव्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह गाँधी जी के जीवन के उत्तरार्ध की प्रमुख घटनाओं का काव्योचित वर्णन करते हुए, राष्ट्रीय चेतना को प्रेरित करने वाले रूप में लिखा गया है। 'आत्मकथा' केवल अनुवाद है तो 'महात्मा कथा' मौलिक काव्य है जो यथार्थ पर आधारित कल्पना प्रधान है। स्वयं चौधरी जी के शब्दों में 'आत्म शोध में दृष्टि को एकाग्र कर, पग-पग पर संघर्षरत व्यक्ति की अभिव्यक्ति है आत्मकथा। मात्र भक्ति और विश्वास के कारण, कृतज्ञता भाव से परिपूर्ण हृदय से, उस व्यक्ति के जीवन का वर्णन करने वाला काव्य है, 'महात्मा कथा'। वह तत्व की समीक्षा है तो यह कथा काव्य।' उनकी ये भावपूर्ण पंक्तियाँ देखिए :—

'पलिकिंचेडिदि गाँधि कथ मट
पलिकिंचेडिवारु तेनुगुप्रजलट दीनिं
बलिकिन नूरट यौनट
पलिकेदनिक नोंडु मरचि बापुचरित्रमु।'

(बयान कर रहा हूँ गाँधी की कथा, कहलाते हैं मुझसे तेलुगु जन, कहूँ तो मन को शांति मिले, अतः और सब कुछ भूलकर बापू की कथा का वर्णन करूँगा।)

यह पद्य भक्तप्रवर पोतना कृत भागवतम् के पद्य की स्पष्ट याद दिलाता है। इस प्रकार चौधरी जी ने गाँधी जी को भगवान ही मान लिया है और निवेदन में लिखा है कि 'मेरी रचना-सामर्थ्य बापू के आशयों को समर्पित है।'

उपर्युक्त दोनों काव्यों में गाँधी जी द्वारा चलाए गए स्वतंत्रता-आंदोलन और रचनात्मक कार्यक्रम का भारतीय जनमानस पर पड़े प्रभाव का वर्णन करते हुए, राष्ट्रीय चेतना के विराट रूप को शब्द रूप दिया गया है। ये दोनों काव्य आधुनिक आंध्र साहित्य की श्रेष्ठ रचनाएँ मानी जाती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'युग पुरुषों के उत्तम आदर्श जीवन की पद्धतियों को उत्तम रीति से जन साधारण के समक्ष रखने के उत्तम धर्म को पहचानकर मरिंगंटि शेषाचार्य ने 'श्री गांधी भारतमु' की रचना की है। गांधी जी को श्री कृष्ण और राष्ट्रीय आंदोलन को महाभारत युद्ध मानते हुए, श्री शेषाचार्य ने अठारह पर्वों में गांधी जी की कथा को काव्य रूप देने का निश्चय किया था। धर्म संस्थापन के लिए अवतरित भगवान के रूप में कवि ने गांधी जी के दर्शन किए हैं। किंतु दुर्भाग्य से इस महाकाव्य के दो ही पर्व, निर्माण-पर्व (1949 में) और बाल्य पर्व (1951) में प्रकाशित हुए हैं। निर्माण पर्व में गांधी जी की अंतिम दशा और हत्या का हृदयंगम वर्णन किया गया है तो 'बाल्य पर्व' बाल्यावस्था की घटनाओं का। इस काव्य की रचना पुरानी शैली में होने पर भी सरल एवं सरस है।

31-3-1921 में विजयवाड़ा में अखिल भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन संपन्न हुआ था। अपने प्रियतम नेता के दर्शन के लिए आंध्र की जनता उमड़ पड़ी थी। उस समय मल्लादि अच्युतराम शास्त्री ने 'महात्मा गांधी स्वागतम्' नामक काव्य की रचना की थी। इस काव्य का निम्न पद्य उल्लेखनीय है।

'गांधिटोपिनि बेट्टि घनत चेंदगरादु
गांधिधैर्यमु मीकु गलुगवलयु,
मुतक चोक्का दीड्गि मुरिय लाभमु लेदु
गांधि शातिनि मीरु गांचवलयु,
सभ नुपन्यासंकुसल्पि मोदमु गादु
गांधि क्षमाबुद्धि गांचवलयु
गांधि फोटो मिट गट्टुकोंटये गादु
गांधि योजकु भीरु गडगवलयु
गांधि संकल्पमंतयु ग्रहण सेति
गांधि निजमैन भक्तितो गलिय जेरि
गांधिवृत्तिनि देश जुल्गनिरयेनि
मातृदेशपु कष्टमुल्मानि पोवे !'

(गांधी टोपी को पहकर बड़प्पन प्राप्त नहीं करना चाहिए, गाँधी जी के जैसा धैर्य (साहस) आप में उद्बुद्ध होना चाहिए। मोटे खद्दर का रता पहनने से कोई लाभ नहीं होता, गांधी जी के शांत स्वभाव को प्राप्त करना चाहिए। सभा में भाषण देकर खुश नहीं होना है, गांधी जी की क्षमा बुद्धि को सीखना जरूरी है। गांधी के फोटो से ही घर शोभायमान नहीं करना है, जैसे स्वभाव को भी प्राप्त करना चाहिए। गाँधी के पूर्ण संकल्प को ग्रहण कर, सच्ची

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भक्ति के साथ गांधी जी से मिलकर (आंदोलन में भाग लेकर), गांधी जी की प्रवृत्ति को देशवासी प्राप्त कर सकें तो मातृभूमि के कष्ट दूर नहीं हो जाएँगे क्या ? (अवश्य दूर हो जाएँगे ।)

मुनगपाटि विश्वनाथ शास्त्री कृत 'गांधी देवुडु' (1946) कविता की दृष्टि से उत्कृष्ट काव्य है । 'नूलपोगुतो नवलीलन् जगमेल्ल गट्टिटितिवि' (सूत के धागे से, सरलता से सारे जग को बाँध लिया) आदि व्यंजना प्रधान उक्तियों से यह काव्य पठनीय बन पड़ा है ।

राष्ट्रीय आन्दोलन और राष्ट्रीय चेतना के तत्व को भली भांति अवगाहन कर सकने वाले मंगिपूडि वेंकट शर्मा जी का दविपुडु काव्य 'श्री गांधी चरितामृतमु' उल्लेखनीय है ।

दोमा वेंकट स्वामी गुप्त का लघु काव्य 'परंज्योति' (1945) गांधी जी के प्रति कवि की भक्ति भावना को व्यक्त करने वाला है ।

गाँधी जी को साक्षात् भगवान मानकर मधुर कवि नालमु कृष्णाराव ने 'गांधी महात्मा की दशावतार लीलाएँ' (1942-44 के मध्य जाकर लिखा और 1948 में प्रकाशित) नामक काव्य की रचना की ।

गांधी जी के अतिरिक्त स्वतंत्रता आंदोलन के अन्य महारथियों की, जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद किया था, जीवनियों को भी काव्यमय रूप दिया गाया है ! चेरकुवाडा वेंकटामय्या और गादे जगन्नाथ स्वामी ने मिलकर 'लाला लाजपतराय' (1907) नामक काव्य की रचना की थी । कालक्रम से देखा जाए तो राष्ट्रीय चेतना से युक्त यह प्रथम काव्य है । अपने काव्य-प्रयोजन का उल्लेख करते हुए इन कवियों ने कहा था:—

'देश बंधुवनुचु देश देशंवुन
बेरुगांचिनट्टि भारतीयु
बूज्यचरित विन्न वुण्यंबु गावुन
लजपतीद्रुं विनुडु प्रजलोकित ।'

(देश-विदेशों में 'देशबधु' के नाम से प्रसिद्ध भारतीय के पूज्य चरित्र को सुनने से पुण्य प्राप्त होगा । इसलिए प्रजा लजपतीन्द्र की कथा को तनिक सुन ले ।)

मंत्रिप्रगड भुजंगराव ने 1917 में 'गोपाल कृष्ण गोखले चरित्र' नामक काव्य की रचना की थी । इन्होंने अपने काव्य की भूमिका में रचना के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए 'इंट्रोडक्शन' लिखा था, 'हीरोवर्शिप इज नोट ए थिंग अननॉन अमोंग अस एंड श्री गोखले इज वन आप द प्रेजेंट डे हीरोज हूज

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लाइफ वर्क शुड बी टाक्ड आफ बाई आल हिज कंट्रीमेन ऐज़ दैट आफ राम एंड कृष्ण ओल्ड'

भुजंगराव जी ने '**दादाभाई नॉरोजि चरित्र**' की भी रचना की थी, जिसमें 'देशसेवा में उत्कंठा वाले, उदार चरित वाले, भारत पितामह की कीर्ति युक्त' दादा भाई की जीवनी को काव्य रूप दिया गया है। भुजंगराव जी आंध्र की एक रियासत के राजा थे। देशी राजाओं का राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित होकर काव्य रचना करना अद्भुत कार्य-सा लगता है।

देशभक्त कोंडा वेंकटप्पय्य जी की जीवनी को जंध्याल अय्यवारु शास्त्री ने 'देशभक्तुडु' शीर्षक से 1921 में काव्य का रूप दिया था। चेल्लपिल्ल वेंकटेश्वर कवि ने 1941 में 'लोकमान्य तिलक' नाम से तिलक की जीवन-गाथा को काव्यबद्ध किया।

'नेताजी' नाम से तेलुगु के सुप्रसिद्ध कवि गुर्रम् जाषुवा ने और उंडेल मालकोंडा रेड्डी ने काव्यों की रचना की हैं। जाषुवा ने अपने काव्य में नेताजी के मुख से कहलाया था कि 'त्यागवीरुल रक्तदानंबुन गानि दर्शनविडदु, स्वातंत्र्य संध्य' (त्यागवीरों के रक्तदान के बगैर स्वातंत्र्य रूपी संध्या दर्शन नहीं देती)। यह पंक्ति लोगों की जबान पर काफी समय तक नाचती रही। कोंडवीटि वेंकट कवि ने नेहरू जी की आत्मकथा का काव्यानुवाद 'नेहरू चरित्र' (1957) के नाम से किया। यहाँ चिवुकुल पेद वेंकटा चलपति के काव्य 'बंधाविमुक्ति' की चर्चा आवश्यक है। वेंकटाचलपति ने एक ही काव्य में भारतीय कांग्रेस के मूर्धन्य नेताओं—दादा भाई नौरोजी, तिलक, भगत सिंह, अली बंधु, के जीवन के ऐसे प्रसंगों का वर्णन किया जिन्हें पढ़कर पाठक का मन राष्ट्रीय चेतना की भावना से भर जाता है।

इस धारा में ऊरुबंडिवेंकट सुब्रह्मण्यम् का 'शांतिविक्रमुडु', ए. काशी वरप्रसादराव का 'सुभास बोस चरित्रमु', आंध्ररत्न दुग्गिराल बलरामकृष्णय्या की 'गांधी गीता' उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

राष्ट्र के महान् नेताओं के निधन के अवसर पर तेलुगु के कवियों ने जो शोकगीत लिखे हैं,[1] उनमें महान् नेताओं के देशप्रेम, देशसेवा, आत्म बलिदान आदि का वर्णन करते हुए, जनता में राष्ट्रीय चेतना के भाव फूंकने का सफल प्रयास किया गया है। इस प्रकार की रचनाओं में, गोपाल कृष्ण

1. डॉ. एम. सुब्बारेड्डी जी ने इन्हें 'शोक गीत' न कहकर 'स्मृति काव्य' कहना अधिक संगत माना है'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोखले के निधन के समाचार को सुनकर, रायप्रोलू सुब्बाराव जी की लिखी हुई स्मृति खंडिका अपने ढंग की पहली और श्रेष्ठ रचना है।

इस प्रकार की रचनाओं में कर्ण वीर नागेश्वर राव (हिन्दी प्रचारक, हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि और आंध्र विश्वविद्यालय के हिन्दी प्रोफेसर **डा. कर्ण** राजशेषगिरिराव के पिता) ने मोतीलाल जी के स्वर्गवास के समय **'मोतीलाल जी निर्याणमु'** नामक काव्य लिखा था। कर्लपालेम् कृष्णाराव जी ने आन्ध्ररत्न दुग्गिराला गोपाल कृष्णय्य के निधन के अवसर पर **'आंन्ध्ररत्न स्मृति'**, गुर्रम जाषुवा कृत **'बापूजी'**, पुह्‌टपर्ति नारायणाचार्य और उनकी पत्नी द्वारा लिखित **'गांधी महाप्रस्थानमु'**, पल्ले पूर्णप्रज्ञाचार्य कृत **'आत्मसमर्पण'** (गांधी जी की कथा), ज्ञानांद कवि कृत **'गांधी-अमरगीता'**, अल्लंराजु रंगानायकुल का लिखा 'शांति यात्रा', कोट कवि बंधुओं का 'गांधी ताता' (दादा गांधी), रेवूरि सुब्बाराव कृत **'भारत ज्योति'** मानेपल्लि संगमेश्वर कवि द्वारा लिखित **'परंज्योति'** आदि काव्य प्रधान रूप से गांधी जी के निधन के अवसर पर लिखे गए काव्य हैं। इनमें गाँधी जी आदि नेताओं के स्वर्गवास के शोक का वर्णन करते हुए, देश की राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया गया है। इन काव्यों में जाषुवा के **'बापूजी'** नामक काव्य में से एक पद्य यहाँ द्रष्टव्य है—

जगम्मोक्कुमडि रोम्मु ग्रहुकोनि मूर्धनदेलि तबिबव्वु जें
दग, चेजिक्किन मोन्‌न मोन्नटि स्वतंत्र स्वर्ग सीधंबुलो
पोग रेगेन् बगवाडु लेनि भुवनंबुन गन्न बावुन्, भवत्
भगवंतुन्, दयमालि चंपुकोनिनावा ! भारतांबामणी !

(हे भारतांबामणी ! सारा जग एकदम छाती पीटकर, मूर्छित होकर, व्यथित हो जाए, ऐसा कल-परसों हस्तगत हुए स्वतंत्रता रूपी स्वर्ग-शोध में धुंआ छा गया। अजातशत्रु बने बापू का, अपने भगवान का निर्दय होकर अपने महात्मा का वध कर दिया है न !)

राष्ट्रीय चेतना को उद्‌बोधित करनेवाले काव्य भी पर्याप्त मात्रा में लिखे गए हैं। प्राचीन वीर नर-नारियों की कथाओं के वर्णन द्वारा राष्ट्रीय चेतना जागृत की गई है। ऐसे काव्यों में कवि-सम्राट विश्वनाथ कृत 'झांसी की रानी' प्रथम श्लाघनीय रचना है। इस काव्य में कवि के काव्य-कौशल के साथ, देशभक्ति और देश के लिए आत्मबलिदान का प्रभावशाली चित्रण हुआ है। पंगनाममुल रामचंद्रराव ने 1921 में 'भारतोद्‌बोधमु' नामक काव्य की रचना की थी। इसमें 'परदेश के यंत्रों, वस्त्रों आदि के बहिष्कार को देशमुक्तिदायक' मानकर उन्हें न छोड़नेवालों को देशद्रोही मानकर, भारत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के अभ्युदय के लिए उद्बोधन है। पंडित सीताराम शास्त्री का 'प्रबोध' काव्य (1924) भी उत्तम श्रेणी का है। शास्त्री जी ने ऐतिहासिक वीरों की देश सेवा और धर्मरक्षा का प्रयास करने वाले महापुरुषों का स्मरण करते हुए, गांधी जी के बारे में लिखा है—

धर्मसंस्थापनमु जेसि धरणि भार
तीयुलनु गाव कृष्णडुं दिव्यमतिनि
गांधी यय्येन्...................... ।

(धर्म का संस्थापन कर, भारतीयों की रक्षा करने के लिए श्रीकृष्ण ही गांधी जी के रूप में अवतरित हुए हैं।)

इस प्रकार के उद्बोधन-प्रधान काव्यों में मुन्नगि शर्मा कृत 'गांधी रायबारमु (—द्योत्य)[1], मुलुकुट्ल पुन्नय्य शास्त्री का 'भारतीय बोधामृत', गेरुजाडा राघवशर्मा का 'नवकाली (नोखाली) यात्रा', महावादि वेंकटरत्नम् कृत 'विश्वभारती', पिल्ला वेंकटरत्न कवि का 'अगस्त विप्लव में आनंद राय' (भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने वाले एक युवक के बारे में), मुदिगोंड वीर भद्रमूर्ति का 'भारत स्वातंत्र्य संग्राममु', कलगा सत्यनारायण कृत 'स्वराज्य झंडा', दंतुर्ति सुब्बारायुडु कृत 'देशोपदेशमु', मताल जयरामय्य कृत 'महात्मा विजय यात्रा', एस. सत्यनारायण का 'स्वराज्य के साधन', नंदिवाडा वेंकटरत्नम् कृत 'आंदोलन' उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के हरिजनोद्धार से प्रेरणा प्राप्त कर कुछ कवियों ने अस्पृश्यता संबंधी कथावस्तु को आधार बनाकर कतिपय काव्यों की रचना की है। इनमें जाषुवा कवि कृत 'गब्बिलमु'[2] नामक काव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह मेघदूत के समान रोचक एवं भाव-प्रवण काव्य है। इस काव्य में किसी जीर्ण देवालय में पड़ा हुआ कोई अस्पृश्य व्यक्ति अपनी दीन हीन गाथा का संदेश कैलासपति शंकर भगवान के पास एक चनगादड़ के द्वारा भेजता है। इस काव्य में समकालीन सामाजिक स्थिति-गतियों के बारे में तथा स्वराज्य के आंदोलन के प्रभाव के बारे में अत्यंत प्रभावशाली रूप से चित्रण किया गया है—

---

1. गोल मेज अधिवेशन में भारत की ओर से दूत कार्य।
2. इस काव्य का डा. वाराणसि राममूर्ति रेणु ने चमगादड़ नाम से हिंदी में पद्यानुवाद किया था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निम्नजातुल कन्नीटि नीरंदमुल
पिड्गुलै देशमुनु गाल्चिवेयुननुचु
राट्मुनु दुड्डुगर्र करान बूनि
देसल दोतेंचे गुजराति मुसलि सेट्टि

(निम्न जाति वालों के अश्रु-मेघ कहीं गाज बनकर देश को जला न दें, गुजरात के बूढ़े सेठ चरखे और हाथ में छड़ी लेकर चारों दिशाओं में दिखाई पड़े ।)

बुर्रगल गांधि युगमिदि
कर्रलु खड्गंबुलेलगा लेवु प्रजलन् ।

(यह सूझ वाले गांधी का युग है । अब तो लाठियाँ और तलवार प्रजा पर शासन नहीं कर सकती ।) आदि पद्य उस समय की राष्ट्रीय चेतना को प्रकट करते हैं ।

राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित होकर, किसी ऐतिहासिक कथा का आलंबन ग्रहण कर देशवासियों को राष्ट्रीय भावों से उद्बोधित करने के उद्देश्य से लिखे गए काव्यों में 'राणा प्रताप सिंह चरित्र', 'शिवभारतमु', 'अमरसिंह', 'दुर्गाविति', 'शाजी' आदि उल्लेखनीय हैं । इनमें देश की स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए उन महान् व्यक्तियों के बलिदान का वर्णन कर, देशवासियों का स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए उद्बोधन किया गया । अतीत गौरव का स्मरण दिलाकर, स्वतंत्रता हेतु आत्म बलिदान के लिए प्रेरित किया । उपर्युक्त सभी कवियों ने स्वर्णिम अतीत के अनुरूप देश को रूपायित करने तथा दासता के बंधनों को तोड़ देने की प्रेरणा दी ।

'राणा प्रतापसिंह चरित्रमु' में महाराणा के स्वतंत्रता के लिए धर्म-युद्ध का विशद वर्णन किया गया है । देश ही धर्म है, देश ही दैव है अतः स्वदेश की स्वतंत्रता के लिए लड़ना प्रत्येक देशवासी का परम कर्तव्य है । इस महाकाव्य के बारे में एक समालोचक ने लिखा है कि पराधीन राष्ट्र के लिए मानों यह स्मृति ग्रंथ (धर्मशास्त्र) है ।

राजा मानसिंह को उत्तर देते हुए राणा प्रताप के ये वाक्य उस महापुरुष के चरित्र की उदात्तता को व्यक्त करते हैं । उस युग में निम्न पद्य जनता की जुबान पर था ।

'स्वातंत्र्य लक्ष्मि विशाल सेवालकु
जीवितमुनु ने दीसि पेट्टिनाड,
ब्रह्मांडमंत विपत्तु वच्चिन नोर्तु
निंचुकयेनि चिंतिपबोनु,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मरिनंदु गानि निर्माणमुनकु
मंदु विध्वंसनमु मुख्य विधिगनुंडु,
बरतंत्र गतिनोंदु वैभवंबुन कन्न
स्वातंत्र्यमुन वच्चु चावु मेलु,
मा शिशोदिया वंउ-संभवुलु ब्रतिकि
स्वेच्छमै नुंडवले : लेनियेडल जच्चि
स्वर्गमुननैन नुंडगवलयु गानि
मध्य वेरोंडु भार्गवु माकु लेदु।'

(स्वतंत्रता-लक्ष्मी की विशाल सेवाओं के लिए मैं अपने जीवन को समर्पित कर चुका हूँ। इस कार्य की पूर्ति में महान् विपत्ति का सामना करना पड़े तो भी सह लूगा, किंचित् भी चिंतित न होऊँगा। निर्माण से पहले, इस संसार में, विध्वंस होता है। अर्थात् देश के भविष्य के निर्माण के लिए मुझ जैसे व्यक्तियों की आत्माहुति आवश्यक है। परतंत्रता में वैभव की अपेक्षा स्वतंत्रता की मौत अच्छी है। हम सिसोदिया वंश में संभूत व्यक्तियों को चाहिए कि स्वतंत्र होकर जीवित रहें या मर कर स्वर्ग प्राप्त करें। इन दोनों को छोड़कर हमारे लिए दूसरा मार्ग नहीं है।)

आगे वे कहते हैं—

'विमतुल खड्गमु हृदयाब्जमु
जोच्चुनु गाक यचटि स्वातंत्र्यपु बी
जमु जंपुट मात्रमसाध्यमु,
नेरवेरदु जगंबु तलक्रिंदैनन्।

(दुष्ट बुद्धियों पर पदधर्मावलंबियों का खड्ग हमारे हृदय कमल में प्रवेश कर सकता है किंतु सारी दुनिया उलट जाए फिर भी वहाँ स्थित स्वतंत्रता रूपी बीज को नष्ट नहीं कर सकता।)

इसीलिए कवि ने राणा प्रताप की प्रशंसा करते हुए कहा है :—

घनदुर्गंबुलु वाहिनीपतुलु
भाग्य श्रेणुलन् बट्टिये
प्पुडुनु देशोन्नति नेन्नारादु
गुणसंपूर्णत्वमुन् निग्रहं
बुन् धर्माचरणंबु सत्यमु
यशबुन् त्यागमुन् गल्गु न
यूयनघस्वातुल संख्य बट्टि
येपुडा यौन्नत्य मेपारेडुन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(किसी देश की उन्नति को बड़े-बड़े दुर्ग, बड़ी-बड़ी सेनाएँ अथवा भौतिक संपत्ति के बल पर आंका नहीं जा सकता। समस्त सद्गुण, निग्रह (संयम), धर्माचरण, सत्य, यश व त्याग आदि से युक्त अनघ (पुण्यवान) महापुरुषों की संख्या के आधार पर ही देश की उन्नति और महत्ता को आंका जा सकता है।)

इस काव्य में गांधी जी के अहिंसावाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। राणा प्रताप युद्ध के प्रारंभ होने से पहले कहते हैं—

ओक चीमकैन निचुक हानि गलिगिन गनलेनु
भारतावनिनि गलुगु तरुलता गुल्म भूधर गह्व
रमुल, ब्रेमितु ब्राणमुनु ब्रेमिचिनट्लु
नादु हृदबंधुविदर मिम्मु गोनिपोयि रणरंग
मुननु शात्रुवुल कत्त पोदरल कप्पगिपगा
वलयुननिन मेरुबंतटि वाध जन्मिचुनाकु।

(एक चींटी को भी थोड़ी-सी हानि हो मैं सहन नहीं कर सकता। भारत भूमि पर स्थित तरुलता गुल्म-भूधर-गह्वर आदि से प्राण समान प्रेम करता हूँ। मेरे इतने हृदय बंधुओं को ले जाकर, रणभूमि में शत्रुओं के करवाल की धाराओं को सौंप देने की बात सोचकर, मेरे मन में मेरु के समान पीड़ा हो रही है।)

यह भाव यद्यपि राणा प्रताप के वीर और साहसी चरित्र के अनुकुल नहीं है, फिर भी तत्कालीन अहिंसावाद का इसपर स्पष्ट प्रभाव लक्षित होता है।

पं. दुर्भाक राजशेखर शतावधानी जी का दूसरा महाकाव्य 'अमरसिंह चरित्र' भी राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित है। कवि का विश्वास है कि 'देशभक्त वीरों की जीवनियों को काव्य रूप देकर, देशवासियों को कर्तव्योन्मुख बनाया जा सकता है। सनातन धर्म के पुनरुद्धार के लिए सफल प्रयत्न करने वाले छत्रपति शिवाजी को नायक बनाकर धडियारम् वेंकटशेष शास्त्री ने 'शिवभारतमु' (1942—46) की रचना की। शास्त्री जी ने अपनी कलम की पैनी धार से समस्त राष्ट्र को जागृत करने का स्पृहणीय प्रयास किया है। शिवाजी मानो आधुनिक भारत के 'गांडीवी' (अर्जुन) हैं। इस काव्य में समर्थ गुरु रामदास के उपदेश प्रधान वचन अत्यंत मार्मिक तथा विचारोत्तेजक बन पड़े हैं। यह काव्य आज के युवकों के लिए भी प्रेरणाप्रद है। शिवाजी के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कवि स्पष्ट रूप से कहता है—

उदधि यूर्मुल देलु वायुवुल बोले
जनुल पलुकुल हृदयकोशम्मु बलिय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दिटवु वेंचि स्वतंत्र जातीय राष्ट्र
निर्मिति बुनादि वेय यत्निंचे शिवुडु ।

(समुद्र की ऊर्मियों पर बहने वाली वायु के समान, जनता के वाक् और हृदय कोशों को बलिष्ठ कर, धैर्य को बढ़ावा देकर, स्वतंत्र जातीय राष्ट्र के निर्माण के लिए शिवाजी ने नींव डालने का प्रयत्न किया ।)

देश में राष्ट्रीय चेतना का उद्बोधन करने के लिए काव्य के अंत में कवि कहता है :—

देश भक्तुल कीर्ति वर्धिल्लुगाक
देश चरितलु रवित संधिचु गाक ।

(देश भक्तों की कीर्ति बढ़े, देश के इतिहास के प्रति (जनता में) अनुराग पैदा हो ।)

मंगिपूडि वेंकट शर्मा कृत 'दुर्गावती' (1934) गोंड राज्य की महारानी दुर्गावती के चरित्र के औदात्य को चित्रित करनेवाला काव्य है । श्री पुट्टपर्ति नारायणाचार्य कृत 'शाजी' शाहजी महाराज के वीर चरित का वर्णन करनेवाला काव्य है ।

'सौदरनंदमु' (सुन्दरी और नंद की कथा)[1], **'विजय श्री'** (श्रीकृष्ण के दूत कार्य से लेकर, महाभारत की विजय की कथा),[2] 'करुणश्री' (महात्मा बुद्ध की कथा),[2] **'धर्मज्योति'** (अहिंसा का संदेश),[3] **'आत्मार्पण'** (महाभारत के लुब्धकपोतोपाख्यान पर आधारित),[3] **'स्वातंत्र्य दीक्ष'** (रामनरेश त्रिपाठी कृत 'मिलन' नामक काव्य पर आधारित), **'बुद्धदयामाता'** (बुद्ध के संदेशों पर आधारित)[4] आदि काव्य परोक्ष रूप से राष्ट्रीय चेतना को प्रेरित करनेवाले काव्य हैं ।

इसी प्रकार के अन्य काव्यों में श्रीमती नंडूरि चंद्रमती देवीकृत **'शांति विजयमु'**, दुर्भा राममूर्ति कृत **'त्यागमु'**, राजकवि दाशरथि कृत **'महाबोधी'** उल्लेखनीय हैं ।

राष्ट्रीय भावों के प्रचार के लिए कतिपय खंड काव्य भी लिखे गए हैं । इनमें चेन्नाप्रगड भानुमूर्ति का **'भारत दर्शनमु'** (1907) प्रथमगण्य है । इसके

1. काटूरि वेंकटेश्वरराव और पिंगलि
2. जंध्याला पापय्य शास्त्री 'करुणश्री' (उपनाम)
3. तुम्मल सीतारामभूर्ति चौधरी
4. चर्ल गणपति शास्त्री

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पद्य 1905—1907 के बीच अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे। इस खंड काव्य के चार शीर्षकों में (भारत माता, हिंदू देश दैन्य विचारमु, भविष्यत् भारतवर्ष दर्शनमु, भारतीय धर्माधर्म नक्षत्रमाला) देशभक्ति और सेवा का संदेश दिया गया है। इस काव्य की तुलना राष्ट्रकवि बाबू मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत भारती' से की जा सकती है।

स्वदेशी भावना को प्रोत्साहित करनेवाला एक पद्य लीजिए :

'देश जननि योसंगेडि दिव्यमैन
मुदुकबट्टलु धरियिंचि हृदयमुनन‍ु
विमल देशाभिमानंबु विस्तरिल्लं
मेरुगु लेकुन्न बोवुने गरिम मनकु

'देशमाता के द्वारा प्रदत्त दिव्य पर मोटे खद्दर के कपड़े पहनकर, हृदय में विमल देशाभिमान के बढ़ने पर, चमकीले कपड़े न पहनने से कहीं हमारी गरिमा कम हो जाएगी ? (नहीं)

'भारत माता' (1911) नामक कविता में मंगिपूडि वेंकट शर्मा ने यह स्पष्ट किया है कि 'जन्मभूमि ही, स्वदेश ही आज का देवता-भगवान है। देशभक्ति ही देवभक्ति और देशसेवा ही उपासक की साधना के रूप में परिवर्तित हो गई हैं। **'मानवसेवा'** नामक कविता में कवि लिखता है :—

'मानुवुल सेवये देशमातृसेव
देशसेवये सकल लोकेश सेव
कावुनतु देश भक्तुलु दैवभक्तु
लखिल मानवसेव सेयंगवलयु।'

(मानवों की (स्वदेश वासियों की) सेवा ही देश माता की सेवा है। देश सेवा ही सकल-लोकेश (सर्वेश्वर) की सेवा है। अतः देशभक्त ही दैवभक्त हैं। (हमें) अखिल मानव-सेवा करनी चाहिए।)

एक और कविता में देश के प्रति अपनी अटूट भक्ति का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने लिखा है :—

'निर्मलवैनट्टि नी भूमि यंदे
ना श्शानंनु चेन्नारेडु गाक
पावन नदुलचे भाग्यदंबगुचु
बालुपारु नी पुण्य-भूमिने माम
कास्थिकल् विश्रांति नंदेडु गाक।'

(निर्मल इस भूमि में ही मेरे लिए श्मशान शोभायमान हो। सुन्दर इस पुण्यभूमि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में ही मेरी हड्डियों को विश्राम मिले । अर्थात् कवि मरने के बाद भी इसी मिट्टी में मिल जाना चाहता है ।)

स्वतंत्रता आंदोलन और गांधी जी के सिद्धांतों से प्रभावित होकर, बलिजेपल्लि लक्ष्मीकांत कवि ने **"स्वराज रथमु"** और **"स्वराज्य समस्य"** नामक काव्य संकलनों की रचना की है । इन काव्यों में स्वराज्य आंदोलन, उसका तत्व, उसका प्रचार, उसका विवरण, तिलक की सेवाएँ, गांधी जी का नेतृत्व आदि विषयों पर प्रभावशाली कविताओं का सर्जन किया है । महात्मा गांधी जी को तो उन्होंने साक्षात् भगवान ही माना है ।[1] उन्हीं के शब्दों में

साक्षात् नारायण मूर्तिये मरल गांधी स्वरूपं
बु गैंकोन्नाडी जगदेक नायकुनि वावकुलु वेदमुल् ।

(साक्षात् नारायण मूर्ति ने ही पुनः गाँधी जी के स्वरूप को धारण किया है । उस जगदेक नायक के वचन साक्षात् वेद वाक्य ही हैं ।

काशी नाभुनि वीर मल्लय्य कृत **'स्वराज प्रबोध'**, में स्वराज्य प्रबोध, तिलक निर्याण, भरतमाता का दुःखोपशमन, गांधी अवतार घटना आदि शीर्षकों से कविताएँ हैं । भारत माता के दुःख का उपशमन करते हुए वे कहते हैं कि **'घनुंडु गांधि निनु संबालिपगानुन्न गासंतैनन् भयमेमि नीकु गलदम्मा ।'** (महान गांधी जी द्वारा तुम्हें संभाल लिए जाने पर तुम्हें किंचित भय नहीं होगा ।)

1908 से 1941 तक उमर अलीशाह कवि की लिखी कविताओं का संकलन **'उमर अलीशाह के खंड काव्य'** नाम से प्रकाशित हुआ हैं । हिंदू-मुस्लिम एकता तथा स्वदेशी व्रत आदि को देश के उद्धार के साधन मानते हुए उनके मूलकारण गांधी जी के प्रति उन्होंने अपनी भावनाएँ, इस प्रकार व्यक्त की हैं :

राटमु सांख्यरूपमु विराटपुरुषाकृति चूचिनन् जग
न्नाटक सूत्रधारि, यिदि नाडुनु नेडुनु कल्पवृक्षमै
काटकमने पिशाचमुनु गालचु फिरंगि; परंगि पालिकिन्
चेटुल मूट, मा प्रजलु चेसिन पुण्यमु गण्यमन्निटन्

(चरखा सांख्य रूप वाले विराट पुरुष की आकृति वाला है । देखने (सोचने) पर वह जगन्नाटक का सूत्रधार है । वह अतीत और वर्तमान में भी अकाल नामक पिशाच का मारण करनेवाली तोप है । फिरंगियों के (अंग्रेजी के) लिए

1. गांधी जी के जीवित रहते समय कम और मृत्यु के वाद अधिक संख्या में आन्ध्र में गांधी जी के विग्रह की स्थापना कर, मंदिरों का निर्माण किया गया है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हानियों का मूल है । हमारी प्रजा के द्वारा किया गया पुण्य सब तरह से गण्य (मान्य) है ।)

इस प्रकार स्वतंत्रता आंदोलन और गांधी जी से प्रभावित होकर कविताएँ लिखने वालों में दुव्वुरि रामिरेड्डी, मंगिपूडि पुरुषोत्तम शर्मा, वड्डादि सीतारामांजनेयुलु, पुडिपेद्दि काशी विश्वनाथ शास्त्री, पिशुपाटि नारायण शास्त्री, तुम्मल सीताराम मूर्ति, सापं वरदा दासु, गरिमेल्ल सत्यनारायण, आदिपूडि सोमनाथ राव, वेल्लूरि शिवराम शास्त्री, जाषुवा, सुब्रह्मण्य भागवतुलु, बद्दिरेड्डी कोटेश्वरराव, बंडारु आंजनेयुलु, कर्लपालेम् कृष्णाराव, वेदुल सत्य-नारायण शास्त्री, चदलुवाडा कोटिनरसिंहम, जास्ति वकट नरसय्य, अय्यगारि विश्वेश्वरराव, अक्किराजु राघवराव, काटूरि वेंकटेश्वरराव, जंध्याल पापय्य शास्त्री, देवुलपल्लि रामानुजराव आदि ने पत्र-पत्रिकाओं में राष्ट्रीय चेतना का उद्बोधन करनेवाली प्रभावपूर्ण कविताएँ लिखी हैं ।

दुव्वूरि रामिरेड्डी की जातीयता (राष्ट्रीयता) नामक कविता का यह अंश राष्ट्रीय चेतना के महत्व को उजागर करने वाला है—

ओसी जातीयत, नी बलोज्ज्वलत्व
मेंत ! नी शक्ति सामर्थ्यमेंत ! नीदु
शंखरवमुनगल यिंद्रजालमेंत !
अस्थिपंजरमुलु सैतमाडुनेर ।

(अरी राष्ट्रीयता ! तुम्हारे बल की उज्ज्वलता, तुम्हारी शक्ति सामर्थ्य, तुम्हारे शंखरव में इंद्रजाल इनका क्या वर्णन करें ? तुम्हारी इस शक्ति सामर्थ्य के कारण अस्थि पंजर (कंकाल) भी उठ खड़े हो जाते हैं । अर्थात् राष्ट्रीयता की पुकार सुनकर दुर्बल से दुर्बल आदमी भी सचेतन हो जाता है ।)

तुम्मलं सीताराममूर्ति के इस कविता-खंड में स्वतंत्रता आंदोलन में सब प्रकार के रिश्ते-नातों को छोड़ देने की चेतावनी दी गई है ।

'पुत्रुडनि मित्रडनियु गलत्रमनियु
भर्तयनि सोदकंडनि बांधवुडनि
बालुडनि वृद्धनि तलंचु वेलगादु
तल्लिरो ! सानुचुंडे स्वातंत्र्य रणमु'

(हे माता ! स्वतंत्रता का रण चल रहा है । अब पुत्र, मित्र, कलत्र, पति, सहोदर, रिश्तेदार, आबाल वृद्ध आदि के बारे में सोचने के लिए समय नहीं है । अर्थात् सब रिश्ते-नाते छोड़ स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेना चाहिए ।)

महात्मा गांधी को संबोधित करते हुए श्री देवुलपल्लि रामानुजराव का यह पद्य भी उल्लेखनीय है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'तेल्लवारल राज्यंबु तेल्लवारु
दनुक आकलिदप्पुल दलपलेमु
एव्वरे मॅन नंद्रु नीकेमि कोरत
मंदुनिलबडि नडिपिपुमो महात्म !'

(हे महात्मा ! गोरों के राज्य से समाप्त होने तक भूख-प्यास के बारे में सोचेंगे ही नहीं। कोई भी कुछ कहे, तुम्हें क्या कमी है ? हे महात्मा ! अग्रेसर होकर हमें चलाओ।)

इनके अतिरिक्त मातृदेश की महिमा का वर्णन करनेवाली, देशसेवा का उद्‌बोधन करने वाली, किसी घटना का वीर रस पूर्ण वर्णन करने वाली, गांधी जी के सिद्धांतों का प्रचार करने वाली असंख्य कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। इन कविताओं में जाषुवा कवि का लिखा यह पद्य अत्यंत प्रसिद्ध हुआ है जो मातृ-पूजा के नाम से प्रकाशित हुआ था।

'सगर माधात्रादि षट्‌चक्रवर्तुल
यंक सीमल निल्चिनट्टि साध्वि,
कमल नाथुनि वेणुगान सुधांबुधि
मुनिगि तेलिन परिपूतगेह,
कालिदासादि सत्कवि कुमारुल गांचि
कीर्ति नंदिन पेद्द गेस्तुरालु,
बुद्धादि मुनिजनंबुल तपंबुन मोद
बाष्पमुल् विडिचिन भक्तरालु,
सिंधु गंगानदी जलक्षीरमेपुडु
गुरिसि बिड्डल पोषिंचुकोनुचुनुन्न
पच्चि बालेंतरालु मा भरतमाता
मातलकु मात, सकल संपत्समेत।'

(हमारी भरतमाता सगर, मांधाता आदि षट्‌चक्रवर्तियों की अंकसीमा (गोद) में विराजित पतिव्रता, कमलनाभ (विष्णु, श्रीकृष्ण) के वेणुगान की सुधांबुधि में ऊभचूभ हुई परिपूत देहवाली, कालिदास आदि सत्कविकुमारों को जन्म देकर, कीर्ति प्राप्त करनेवाली बड़ी गृहिणी, बुद्ध आदि मुनिजनों के तप के कारण आनंदाश्रु छोड़नेवाली भक्तिन, सिंधु-गंगा नदियों के जल रूपी क्षीर (दूध) से अपनी संतान का पोषण करने वाली सद्य प्रसूता है। यह माताओं की माता और सकल संपत्समेता है।)

गुल्लपल्लि नारायणमूर्ति का खादी के बारे में पद्य भी उल्लेखनीय है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

खादि य नगनेमि ? कद्दरा ? कादु
संकर प्रभुत्व विधान खादि गानि,
खादि यनगनेमि ? कद्दरा ? कादु
संकर प्रभुत्व वाणिज्य खादि गानि
खादि यनगनेमि ? कद्दरा ? कादु
निष्कारण परदास्य खादि गानि

(खादी का अर्थ क्या है ? खद्दर ? नहीं । वह तो संकर (अंग्रेजों) प्रभुत्व (सरकार) के विधानों को खा जानेवाली है । खादी का अर्थ क्या है ? खद्दर ? नहीं । वह तो संकर प्रभुत्व के वाणिज्य को खा जाने वाली है । खादी का अर्थ क्या है ? खद्दर ? नहीं । निष्कारण ही प्राप्त परदास्य (गुलामी) को खा जाने वाली है ।) इस प्रकार इस लंबी कविता में अपह्नुति अलंकार द्वारा खादी के महत्व का वर्णन किया गया है ।

इस प्रकार की कविताएँ लिखनेवालों में श्रीमती कांचनपल्ली कनकांबा, कनुर्पति वरलक्षमम्म, बसवराजु राज्यलक्ष्मी ('सौदामिनी'), तल्लप्रगड विश्व-सुंदरम्म आदि के नाम सादर लिए जा सकते हैं ।

राष्ट्रीय चेतना का उद्‌बोधन करनेवाले असंख्य गीत भी लिखे गए हैं । इन गीतों को सभा-अधिवेशनों में गाया जाता था । तेलुगु में आधुनिक युग के निर्माता श्री गुरजाडा अप्पाराव के निम्न गीत देशभक्ति का उद्‌बोधन करने वाले हैं ।

देशमंटे मट्टिकादोयि
देशमंटे मनुषुलोयि
× × ×
देशमुनु प्रेमिंचुमन्न
मंचि अन्नदि पेंचुमन्न आदि

(देश का अर्थ मिट्टी नहीं है । देश का तात्पर्य वहाँ के निवासी हैं । × × × देश से प्रेम करो और भले की वृद्धि करो) आदि गीतों द्वारा गुरजाडा ने देशभक्ति और विश्व मानवतावाद का प्रचार किया ।

रायप्रोलु सुब्बाराव जी के गीत (एक गीत पहले उद्‌धृत किया गया है) पर्याप्त लोकप्रिय हुए हैं । गरिमेल्ल सत्यनारायण का निम्न गीत समादृत रहा है और स्वतंत्रता आंदोलन के समय सभी लोगों की ज़बान पर था ।

'मा कोट्टी तेल्लदोरतनमु
देव ! माकोट्टी तेल्लदोरतनमु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मा प्राणालपैं पोंचि मानालु हरिंपिचे,
पन्नेंडु देशालु पंडुचुन्नवि गानि
पट्टेडन्नमु लोपमंडी
नोट मट्टि गोट्टि पोताडंडी
आडि कुक्कलतो पोराडि
कूडु तिनमंटाडु ।'

(हमें गोरों का यह शासन नहीं चाहिए। हे देव ! हमें गोरों का यह शासन नहीं चाहिए। हमारे प्राणों की ताक लगाकर हमारे मान का अपहरण किया। बारहों देश (उस समय बारह प्रदेश थे) खूब फल-फूल रहे हैं। लेकिन हमें मुट्ठी भर भोजन नहीं मिलता। हमारे मुँह में धूल झोंक कर सब कुछ ले जाता है। उसके कुत्तों के साथ छीना-झपटी करके, खाने को कहता है।) इस सुदीर्घगीत ने सत्यनारायणजी को अत्यंत लोकप्रिय और अमर बना दिया है। गांधी जी की प्रशंसा में लिखा गया बसवराजु अप्पाराव का यह गीत भी पर्याप्त लोकप्रिय हुआ है।

कोल्लायि गट्टितेनेमि-मागांधि
कोमरै बुट्टितेनेमि-मागांधि
वेन्नपूसा मनसु
कन्नतल्लि प्रेम
पंडंटि मोमुपैं
ब्रह्म तेजस्सु

(हमारे गांधी जी अंगोछा पहनें तो क्या हुआ ? वैश्य कुल में जन्म लें तो क्या हुआ ? (कोई कमी नहीं।) मन हैं मक्खन जैसा, प्रेम है माता जैसा। फल जैसे आकर्षक मुख पर ब्रह्मतेज व्याप्त हो रहा है।)

उपर्युक्त दोनों गीत गली-गली गाए जाते थे। टेकुमल्ल कामेश्वरराव ने निम्न गीत में मातृदेश तथा देशभक्त के महत्व का गौरवगान किया है :

'मातृदेशमु कंटे
मरि दैवतमु लेदु
देशभक्तुनिकंटे
दिव्यमक्तुडु लेडु ।'

(मातृ देश से बढ़कर अन्य कोई भगवान नहीं है। देशभक्त से बढ़कर अन्य कोई दिव्य भक्ति नहीं है।)

उन दिनों इस प्रकार के हजारों गीत लिख गए जो जनसामान्य की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बोलचाल की भाषा में हैं। आबाल-वृद्ध सभी इन गीतों को अत्यंत उत्साहपूर्वक गाते थे और लाठियाँ खाकर, जेल में जाकर भी इन्हीं गीतों को ऊँचे स्वर में गाते रहते थे।

शतक तेलुगु साहित्य की विशिष्ट प्रक्रिया है। 108 पद्यों में एक ही मुकुट (पद्य की अंतिम पंक्ति या वाक्यांश) होता है। गांधी जी की स्तुति और उनके सिद्धांतों का वर्णन करते हुए लगभग एक सौ शतक लिखे गए हैं। इन सभी शतकों में राष्ट्रीय चेतना कूटकूट कर भरी हुई है। राष्ट्रीय चेतना से भरे हुए कतिपय दंडक भी लिखे गए हैं। इनमें अमर अलीशाह का 'देशमाता दंडकमु' उल्लेखनीय है। शतक, दंडक के अतिरिक्त लोक साहित्य की शैलियों में राष्ट्रीय चेतना से युक्त कई रचनाएँ लिखी गई हैं। कीर्तन (पद), भजन गीत, बुर्रकथाएँ, हरिकथाएँ आदि विभिन्न शैलियों का आधार लेकर कवियों ने अनपढ़ और ग्रामीण जनता में भी राष्ट्रीय चेतना को भरने का सफल प्रयत्न किया है। इनमें अधिकतर रचनाएँ तो ग्रामीण बोलचाल की भाषा में लिखी गई हैं जिसके कारण ग्रामीण जनता को इन रचनाओं ने विशेष रूप से प्रभावित किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बीसवीं शती के प्रारंभ से लेकर तेलुगु काव्य साहित्य में राष्ट्रीय चेतना से युक्त रचनाओं की भरमार रही है। आन्ध्र का कवि हृदय स्वतंत्रता आंदोलन से अत्यंत प्रभावित रहा है और उसने अपनी रचनाओं द्वारा जनता को उत्साहित करने का सफल प्रयास किया है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस प्रकार की रचना प्रक्रिया राष्ट्रीय चेतना की प्रेरणा प्रदान करना—एक प्रकार से मंद पड़ गई है जो स्वाभाविक ही है। किन्तु सन् 1962 के चीन के आक्रमण के समय पुनः राष्ट्रीय चेतना के भाव उद्दीप्त हो गए, **'कलम और कूंचि चल पड़ी'**[1] और देश की रक्षा की भावना की लहर उमड़ पड़ी। देश की शांति-प्रगति तथा स्वाधीनता को विपत्ति में फँसा देखकर कवियों ने अपनी लेखनी उठाई, स्वर साधा और जनता को राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य-पालन के लिए प्रेरित किया। चीन के आक्रमण के अवसर पर तेलुगु की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वीर रस पूर्ण उत्तेजक तथा उद्बोधन प्रधान कविताओं की बाढ़ सी आ गई थी। जिन काव्य-संकलनों का प्रकाशन हुआ, उनमें **"रणभेरी"** (सं. दाशरथी रंगाचार्य), **"अन्तिम विजय हमारी"** (कालोजि नारायण राव की कविताएँ), **"शंखनाद"**, **"समर भारती"** आदि विशेष रूप से

1. श्री कालोजि नारायणराव की कविता की एक पंक्ति।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उल्लेखनीय हैं। "रणभेरी" में लगभग 70 कवियों की कविताओं को संकलित किया गया है। डा. के. रामकोटि शास्त्री (संप्रति प्रो. एवं अध्यक्ष, तेलुगु विभाग, काकतीय विश्वविद्यालय, वरंगल) की विद्वत्तापूर्ण तथा प्रेरणाप्रद भूमिका पठनीय है। कवि 'अजंता' की निम्न पंक्तियाँ ध्यातव्य हैं :

'हत्यारे की हथेलियाँ हैं लाल
धोखे की टट्टी की आड़
फन फैलाए विष-सर्प हैं लाल,
अधमुंदी आँखों की
विद्रोही ज्योत्स्ना की किरणें हैं लाल,
× × ×
लाल रंग है राजनैतिक विद्रोही की निशानी,
लाल झंडा है मित्र भेद की सच्ची निशानी।'

देवर कोंडा बाल गंगाधर तिलक तेलुगु के सशक्त कवि थे। तिलक की एक प्रभावपूर्ण कविता इस संकलन में है, जिसकी प्रारंभिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

'भरोसा मत कर हँस न सकने वाले का,
फूल नोचने वाले का,
सीमा से छूटे साँप का,
और एक चीनी का।'

कालोजि नारायणराव जी ने अपनी कविताओं में सैनिकों को देश की रक्षा के लिए मर मिटने को प्रोत्साहित किया है, साथ ही आत्मबलिदान की इस बेला में विलास की मदिरा में डूबे रहने वालों की खूब खबर भी ली है। कालोजि ने अपनी कविताओं में कन्याकुमारी से कश्मीर तक एकसूत्र में पिरोने के लिए जागृत भारतभूमि की भारतीय जनता का चित्र खींचा है। चीनी आक्रमण के समय लिखी गई कविताओं में "**कलम और कूंची चल पड़ी**" (कालोजि कृत) को सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई है। कुछ पंक्तियाँ लीजिए :—

'बटमारों और लुटेरों की
सुर में सुर मिलाया गीत ने।'

डा. के. रामकोटि शास्त्री ने "शत्रुंजयमु" में शत्रु-नाश के लिए शिवतांडव का आह्वान किया है। स्व. के. नरसिंहारेड्डी ने तेलुगु के युवा-कवियों की कविताओं का संकलन "समर भारती" और "समर गीति" के नाम से प्रकाशित किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चीन और पाकिस्तान के आक्रमण के समय और बांगलादेश के स्वतंत्रता संग्राम के समय उत्तेजनापूर्ण राष्ट्रीय चेतना युक्त असंख्य कविताएँ लिखी गई हैं। पाकिस्तान के भारत पर आक्रमण के अवसर पर, समग्र देश का खून खौल उठा था और आवेश तथा प्रतिकार की भावना से उद्बोधित होकर, कवियों ने शत्रुओं को ललकारा और वीर भारतीय सैनिकों को स्वदेश की रक्षा के लिए मर मिटने की प्रेरणा दी। राष्ट्रीय चेतना संबंधी अनेकानेक कविताएँ समय-समय पर प्रकाशित होती आ रही हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आंध्र के कवियों ने अपनी-अपनी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना को उभाड़ने वाली भावनाओं को अभिव्यक्त कर, समग्र देश की एकात्मकता को बल पहुँचाने का सराहनीय प्रयास किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कृति-खंड

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नवनाथचरित्र : एक परिचय

आन्ध्र साहित्य के प्रारम्भिक काल से ही काव्य-रचना के दो रूप (मार्ग और देशी) पाये जाते हैं। 'मार्ग' कविता संस्कृत-लक्षण ग्रन्थों के नियमों के अनुरूप होती थी और 'देशी' कविता देशी छन्दों में। देशी कविता प्रायः संस्कृत-काव्यों या पुराणों का अनुवाद न होकर मौलिक होती थी। इस तरह की कविता को अधिक महत्व देनेवाले और उसे अधिक प्रचार में लानेवाले शैव कवि हैं। इस काव्य-प्रक्रिया में अधिक प्रचार प्राप्त छन्द 'द्विपद' है, जो हिन्दी के दोहे के समान हुआ करता है। उसका लक्षण इस प्रकार है—**इन्द्रुलु मुव्वुरु, इनुडोक्करुंडु**। अर्थात् प्रत्येक पंक्ति के तीन इन्द्रगण और एक सूर्यगण होता है। पंक्तियों के अक्षरों की संख्या समान नहीं होती।[1]

इस प्रकार के काव्य रचना-विधान में 'गौरन' नामक कवि ने 'हरिश्चन्द्रोपाख्यान' और 'नवनाथचरित्र' की रचना की थी। ईसा की 15 वीं शती के मध्य भाग में 'राचकोंडा' के शासक 'सिगयमाधवक्षितिपाल' थे। उनके मन्त्री 'पोतराजु' के भाई के पुत्र थे—गौरन। गौरन गौतम-गोत्रज थे और ऐयल मन्त्री तथा पोचाम्बा के पुत्र थे। उन्होंने नवनाथचरित्र के भूमिका-भाग में अपने को **भ्रमराम्बिकावरप्राप्तविचित्रविगलसाहित्यप्रवीण** बताया है। 'हरिश्चन्द्रोपाख्यान' और 'नवनाथचरित्र' के अतिरिक्त गौरन ने संस्कृत ने 'लक्षणदीपिका' की रचना की थी।

मध्ययुग में 'श्रीपर्वत' सिद्धों का महान् केन्द्र था। अनेक तन्त्रों और मन्त्रों के विधान का निर्धारण करने वाले 'मंजुश्रीमूलकल्प' की रचना यहीं हुई थी। श्रीपर्वत अथवा श्रीशैल पर स्थित जंगममठ के अधीश्वर **शान्तभिक्षावृत्ति राय** की प्ररणा से गौरन ने 'नवनाथचरित्र' की रचना की थी। श्रीगिरि कवि द्वारा पद्य काव्य (यह ग्रन्थ अनुपलब्ध है), अर्थात् 'मार्ग' कविता में रचित 'नवनाथचरित्र' को 'अविरलयोग विद्याधिक नवनाथों' के 'पुण्यचरित्रों' को द्विपद के रूप में, सामान्य जनता के लिए सुबोध रूप में प्रस्तुत करने की इच्छा से उन्होंने गौरन को बुलाकर कहा—

---

1. तेलुगु-छन्दःशास्त्र में नगण और हगण (गुरु और लघु) मूर्यगण तथा नगण+लघु, नगण+गुरु, सगण+लघु, भगण, रगण, और तगण इन्द्रगण माने गए हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

……………मधुर मैं वेलयु
सन्नु नवनाथ चरितंबु द्विपद
काव्यंबुगा जेप्पि कमलज विष्णु
सेव्य मानुनकु श्रीशैलपतिकि
शंकरुनुकु बालशशिशेखरुनुकु
नंकितंबोनरिपुमनुचु……… ।

अर्थात्, सुमधुर रूप में विराजमान नवनाथचरित्र को द्विपद काव्य में रचकर, ब्रह्मा तथा विष्णु के द्वारा सेव्यमान श्रीशैलपति, शंकर और बालशशिशेखर को समर्पित करो ।

श्रीगिरि कवि ने इस प्रकार कहकर, कर्पूर-ताम्बूल देकर गौरन को सम्मानित किया । तब **मल्लिकार्जुनश्रीमहालिंगसर्वलोकोत्तमसाम्राज्यभारनिर्वाहक प्रौढिनीतिकोविद श्रीशान्तभिक्षावृत्ति राय** की आज्ञा से गौरन ने पाँच सर्गों में नवनाथों की कथाओं को सुबोध और सुन्दर शैली में निबद्ध किया ।

मराठी-भाषा में नरहरि मालू पण्डित-रचित 'नवनाथचरित्र' नामक एक काव्य ग्रन्थ है! किन्तु इस काव्य में वैष्णव सिद्धों की कथाएँ निबद्ध हैं और गौरन का 'नवनाथचरित्र' अपेक्षाकृत प्राचीन है । अतः हिन्दी साहित्य के आदिकाल में अति महत्व को प्राप्त नाथ-साहित्य के अध्ययन की दिशा में, तेलुगु-भाषा में, सुदुर दक्षिण में रचे गये इस काव्य का अनुवाद एवं अध्ययन अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगा ।

'नवनाथचरित्र' पाँच सर्गों का काव्य है । प्रथम सर्ग में पूर्व कवि-वन्दना, कृति प्रशंसा, कृति-कर्त्तृत्व समर्पण आदि के बाद कथा का प्रारम्भ किया गया है । कथा प्रारम्भ में कैलास-वर्णन, शिवजी का दरबार, वसन्त-वर्णन और पार्वती-परमेश्वर की जलक्रीड़ा का वर्णन है । जलक्रीड़ा के अवसर का एक वर्णन—

.... जलमुललोन
दोरगि तेलुचुन्न तुहिनांशुधरुनि
रेतमामिषबुद्धि म्रिगे नालोन
म्रीति जरिचेडि पेंटि मीनोकटि
या मत्स्यगर्भबु नंदोक्क पुरुषु
डा महादेवु वीर्यबुन गलिगि
प्रविमल ज्ञान संपन्नुडैयुन्न । (नव. च., पृष्ठ 16)

अर्थात् शिवजी के जल पर तैरते हुए वीर्य को मांस खण्ड के भ्रम से एक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मछली ने खा लिया। उस समय उस मछली के गर्भ से महादेव के वीर्य के प्रभाव से एक पुरुष उत्पन्न हुआ, जो प्रविमल ज्ञान से सम्पन्न था।

जलक्रीडा के बाद विश्राम करते समय पार्वती के पूछने पर शिवजी उन्हें अध्यात्मविद्या का उपदेश करते हैं। क्लान्त रहने के कारण माता पार्वती सो जाती है और मीन के गर्भ में स्थित वह महापुरुष, जिसका जन्म शिवजी के वीर्य से हुआ था, शिवजी का उपदेश सुनते हैं। शिवजी इस बात को जानकर, उस पुरुष को बाहर निकल आने का आदेश देते हैं। तब वह पुरुष जल से बाहर निकलकर इस प्रकार निवेदन करता है—

मीननंदनुडँ मीनंबु कडुपु
लोनुंडि वेडलिति लोलत मीर
विनिपिंचु ना योगविद्याविधंबु
विनुचुंडियंतयु विनिविनि गिरिज
यूकोन मरचिन नूकोनुचुंट
नो काल कंठ ....। (नव. च., पृष्ठ 19)

अर्थात्, मीननन्दन होकर मैं मत्स्य के गर्भ से निकल पड़ा। हे कालकंठ! आपके द्वारा (पार्वती जी को) सुनाई जानेवाली योगविद्या की पद्धति को सुनकर, गिरिजा के चुप रह जाने पर, मैं ही जवाब देता रहा।

तब उस पुरुष के जन्म प्रकार को जानकर शिवजी उसे 'मीननाथ' के नाम से अभिहित कर अनेक वर प्रदान करते हैं और पार्वतीजी के साथ कैलास चले जाते हैं। इस तरह रहते-रहते कलियुग सम्प्राप्त होता है। तब मीननाथ—

कालिंग बंगाल करहाट लाट
गौल केरल चोल कर्णाट घोट
कुकुरु कोंकण पौंड्र कुरु कोसलादि
सकलदेशंबुलु सागरंबुलुनु
दीवुलु, बुरमुलु, दीर्थमुल्, गिरुलु
देवालयंबुलु दिरिगि कन्गोनुचु....
....
मालव देशंबुन गल मांधातपुरंबु।' (नव. च., पृष्ठ 24)

अर्थात्, कलिंग, बंगाल, करहाट, लाट, गौड़, केरल, चोल, कर्णाट, घोट, कुकुरु, कोंकण, पौंड्र, कुरु, कोसल आदि सकल देशों को, सकल सागरों को तथा द्वीप, नगर, तीर्थस्थान, पर्वत, देवालय आदि को देखते हुए....मालवदेश के मान्धातापुर में गये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उस नगरी के पास के वनप्रान्त में निवास करते समय एक चारवाहा मीननाथ की कृपा की अभिलाषा लेकर अनवरत उनकी सेवा करता रहता है।

प्रथम सर्ग में मान्धातानगरी के राजा के पुत्र सारंगधर की कथा का लम्बा वर्णन किया गया है, जो द्वितीय सर्ग में भी चलता है। सारंगधर की कथा पंजाबी के 'पूरन भगत' की कथा से समानता रखती है। वार्द्धक्य में युवती स्त्री से विवाह कर, उस कामिनी के अपने पुत्र पर मुग्ध हो, उससे तिरस्कृत होने पर, उसकी कल्पित कथा में विश्वास कर, अपने ही पुत्र के हाथ-पैर काटनेवाले राजा की कथाएँ हमारे देश के प्रत्येक प्रान्तीय साहित्य में पाई जाती हैं। बंगाल के महाकवि गिरीशचन्द्र के 'पूर्णचन्द्र' नामक नाटक इसी प्रकार के लोककथात्मक इतिवृत्त पर आधृत है। कन्नड़-भाषा में 'कुमार राम की कथा' के नाम से यह कथा प्रचलित है। पिता के आदेश से हाथ-पैर कटवाये जाने पर कानन-प्रान्त में छटपटानेवाले राजकुमार का उद्धार करते हैं मीननाथ। पुनः उस राजकुमार के कटे चार अंगों को जोड़कर उसे दीक्षा देते हैं और चौरंगी नाम प्रदान करते हैं। माल्यवन्त पर्वत को तपस्या के लिए जाते हुए मीननाथ चौरंगीनाथ को आदेश देते हैं कि गुरुभक्ति-निरत हो गोपालक को दीक्षा दे दो। किन्तु, चौरंगी गुरु के आदेश का पालन किये बिना ही, गुरु की खोज में माल्यवन्त चल देते हैं। उस समय जब गोपबालक निराश होकर, आत्मघात करने के लिए उद्यत होता है, तब स्वयं मीननाथ आकर उसकी रक्षा करते हैं और—

निनु सिद्ध गाविप नेने वच्चितिनि....(पृष्ठ 111)

'तुम्हें सिद्धि प्रदान करने के लिए मैं स्वयं आ गया हूँ'—कहकर उसे दीक्षा प्रदान करते हैं और कहते हैं—

....गोवुल निंद्रियंबुलनु,
वदलक रक्षिचुवाडु गावुननु
अच्चुगा गोरक्षुडनियेडि नाम
मिच्चिति.... ....। (पृष्ठ 112)

अर्थात्, तुम इद्रिय रूपी गौओं की अनवरत रक्षा करनेवाले हो, अतः तुम्हें 'गोरक्ष' नाम प्रदान करता हूँ।

और—

प्रथम शिष्युंडु चौरंगि माकयिन,
बुधगुणंबुलनु निपुणडवु गान
ब्रख्यात राज्य भारमु दालिच सिद्ध
मुख्युंडवै नीवु.... ....। (पृष्ठ 115)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्थात्, हमारे प्रथम शिष्य चौरंगीनाथ के होने पर भी, बुद्धि और गुणों में निपुण होने के कारण, तुम्हीं (योग) राज्य-भार का धारण कर, सिद्धों में मुख्य बनो।

इसका कारण यही है कि चौरंगी अपने गुरु की प्रथम आज्ञा का ही पालन नहीं कर पाया। अपने गुरु के आदेश के विपरीत, चौरंगीनाथ अपने गुरु की खोज में माल्यवन्त चल पड़ता है। पर्वत के पास पहुँचने पर उसे अत्यधिक प्यास लगती है और वह एक सरोवर में पानी पीने के लिए उतर पड़ता है। वहाँ एक सर्प उसे पकड़ लेता है और चौरंगी निकट के एक पेड़ को उखाड़कर उसे ऐसा मारता है, जिससे वह मरता तो नहीं, पर निर्वीर्य हो जाता है। तब यह सर्प, जो वस्तुतः एक गन्धर्व था, मीननाथ के दर्शन कर लेने से अपनी विमुक्ति की बात कहकर चौरंगी को 'सन्धानकरणि' नामक बूटी देकर, प्रार्थना करता है कि किसी भी प्रकार से मीननाथ को वहाँ लायें और अपने को शाप से मुक्त करें। तब चौरंगी जाकर मीननाथ के दर्शन कर लेता है। दिव्य दृष्टि से मीननाथ उसके अपराध को जान लेते हैं।

चौरंगी के इस कार्य पर रुष्ट होकर मीननाथ इस प्रकार शाप देते हैं कि तुम्हारी सिद्ध-सन्तति, अर्थात् शिष्य-परम्परा न होगी। तुम निस्सन्तान, अर्थात् बिना शिष्यों के रह जाओगे। तदनन्तर उसे सान्त्वना भी देते हैं कि मैंने तुम्हें जो योगविद्या, सिद्धियाँ और कार्यसिद्धि प्रदान की थी, वे सब व्यर्थ नहीं जायेंगी।

तब चौरंगी के कहने पर मीननाथ चल कर उस गन्धर्व को दर्शन देते हैं। आदिकुण्डलिक' नामक वह गन्धर्व तक्षक के शाप से मुक्त होकर मीननाथ की स्तुति कर स्वस्थान को चला जाता है।

तृतीय सर्ग में 'निधानदर्शन' नामक पुलिन्द (बहेलिया) के सहयोग से मीननाथ को रस (महादेव का वीर्य), पारसमणि और चिन्तामणि प्राप्त होते हैं। मीननाथ उन दिव्य वस्तुओं को गोरखनाथ को दे देते हैं।

तदनन्तर, एक विप्रकुमार को उग्रसेन के हाथों से बचाकर, गोरक्ष को आदेश देते हैं, उसे सिद्धि प्रदान करे।

> चेलगि मेघध्वनि जेसि यी वडुगु
> जनियिंचेननि वीनि जनसिसे मुन्नु
> विनिन चंदंबु भूविभुर्डेरिंगिचे
> नामाट विन्नाड नगु मेघनाद
> नाम मोप्पग ननि............। (पृ. 134)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्थात् इसकी माता से सुन रखा है कि मेघ की भयंकर ध्वनि से दो विप्रबालक का जन्म हुआ था। राजा से यह बात मैंने जान ली है। अतः इसका नाम 'मेघनादनाथ' रखा जायगा।

महाराष्ट्र के राजा गण्यावन्त के अंजनि नामक पत्नी से दो पुत्र हुए— कुमारचन्द्र और विरूपाक्ष। एक दिन विरूपाक्ष आखेट के लिए जाता है, तो वहाँ एक किरात के कहने पर एक कपोती को मार गिराता है। उस कपोती के सिर को खा लेने वाला सिद्ध होगा, यह जानकर विरूपाक्ष उसके सिर को खा लेता है और वह घूमता-घामता मीननाथ की सेवा में पहुँच जाता है। मीननाथ उसे अपना शिष्य बना लेते हैं और कालकंठ के नाम को बदलना नहीं चाह कर, वही नाम रहने देते हैं। वह विरूपाक्ष नाम से प्रख्यात होता है।

इसके बाद इस सर्ग में अवान्तर कथाओं के रूप में वंचक पुरोहित की कथा और कपोत की कथा दी गई है।

चतुर्थ सर्ग चन्द्रवंशीय राजा नरेन्द्रजित के पुत्र का, जो मुनि के शापवश सर्प के आकार में था, मीननाथ उद्धार करते हैं और शापविमुक्त कर—

·······अर्जुन कोटरंबुननु
नुरगरूपंबुन नुंड्टजेसि
नागार्जुनाख्युडनंदगुननिन। (पृ. 173)

अर्थात्, 'साँप के विवर में सर्प के रूप में रहने से इनका नागार्जुन नाम समुचित रहेगा। उसे 'नागार्जुन' नाम देकर सिद्धि प्रदान करते हैं।

तदनन्तर, मार्ग में उस मुनि के दर्शन होते हैं, जिसने नरेन्द्रजित के पुत्र को शाप दिया था। मीननाथ उसे सदुपदेश देते हैं—

"शाप देने की यह मूर्खता तुम्हें क्यों हुई? यह क्रोध पाप का मार्ग है। इससे चित्त विकल हो जाता है और तप नष्ट हो जाता है। तपी के लिए शान्ति, दया, धर्म, कृपा आदि चाहिए। क्रोध से कहाँ किसका भला होगा?"

इस प्रकार, उसे सन्मार्ग का उपदेश देकर 'खणिकाख्यसिद्ध' नाम देकर दीक्षा प्रदान करते हैं। इसके बाद देश-भ्रमण करते-करते वे पश्चिम समुद्र के किनारे मंगलावृत हो महनीय 'पुटभेदन' के पास पहुँचते हैं और देखते हैं कि वहाँ के मृतक राजा को श्मशान की ओर ले जाया जा रहा है। शिवजी के शापवश मीननाथ को इच्छा होती है कि परकाय-प्रवेश कर सांसारिक सुखों का उपभोग करें। तब अपनी दिव्य देह की रक्षा करने के लिए अपने शिष्यों को आदेश देकर मीननाथ राजा के शरीर में प्रवेश करते हैं और बारह रानियों के साथ सुख भोग करते रहते हैं। उनके 'कुमारमंजु' नाम का एक पुत्र भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होता है। वे राजा बनकर, राज्यभोगों का उपभोग करते हैं और योग सुख को भूल सांसारिक विषयों में मग्न रहते हैं। एक दिन गोरक्षनाथ अपने गुरु मीननाथ के पास पहुँचकर विनय करते हैं कि हे महात्मन्, आपका ज्ञान-वैभव कहाँ चला गया ? हाय ! अज्ञानियों को समझाना सरल है, पर अनजान बननेवालों को समझाना ब्रह्मा के लिए भी सम्भव नहीं।........इन सांसारिक सुखों का प्रेम तजकर हे धीनुत ! अपनी दिव्य देह में प्रवेश कीजिए।

इस प्रकार, गुरु-शिष्यों में सांसारिक विषयोपभोग और योग सुख की महत्ता पर वाद-विवाद चलता है। पूर्ण वाद-विवाद के बाद भी जब मीननाथ नहीं मानते, तब गोरक्षनाथ कुमारमंजु को जमीन पर पटककर मौत के घाट उतार देते हैं। पुत्र-मोह में रुदन करने वाले मत्स्येन्द्र से गोरक्ष यह कहकर कि यदि आप अब भी इस महामोह से मुक्त न होंगे, तो मैं अपना गला काट लूँगा और यह कहकर छुरा उठा लेते हैं। मत्स्येन्द्र गोरक्ष का हाथ पकड़ लेते हैं और कहते हैं—

.... मदात्म
नणगिन दुर्मोह मणगे नीकतन। (पृ. 189)

अर्थात्, 'मेरे हृदय में स्थित दुर्मोह तुम्हारे कारण हट गया।' मत्स्येन्द्र योग शक्ति से उस शरीर को छोड़ फिर अपने दिव्य शरीर में प्रवेश करते हैं। अपने वीर्य से उत्पन्न कुमार को पुनः जीवित कर उसे मंजुनाथ नाम देते हैं और दीक्षा प्रदान करते हैं।

तदनन्तर, अपने शिष्यों को सम्बोधित करके मत्स्येन्द्र इस प्रकार कहते हैं—"हे पुत्रो ! आप लोगों ने योग मत की सिद्धि प्राप्त कर ली है। अब पृथ्वी मण्डल पर भ्रमण करने जाइए। महात्मा गोरक्ष आप सबके लिए पूज्य हैं। वे शाश्वत सिद्ध-साम्राज्य के पट्टभद्र हैं। गुरु भक्ति को प्राप्त कर रहिए।........अपनी निपुणता से आप अपनी कथाएँ इस धरती पर प्रसिद्ध करके अपने-अपने नाम पर योग शास्त्रों की रचना कीजिए। गुरु भक्ति निरत, गुण रत्नपूर्ण, पुरुषार्थरत, प्रबुद्ध-विबुध, कुलशील युक्त, कुलवर्त्तन, तेजोयुत तथा सत्यव्रत जो जन होते हैं, उन्हें योग विद्या का उपदेश और संसार में घूमते रहने का आदेश देकर, आप लोग फिर से हिमालय पर चले आइए।"

इस प्रकार, आदेश देकर मत्स्येन्द्रनाथ हिमवत्पर्वत की ओर चल पड़ते हैं। मार्ग मध्य में उज्जयिनीपुरी, द्वारकापुरी, अयोध्या, कुरुक्षेत्र, गंगा, मणिकर्णिका श्रीकाशी, प्रयाग, जागेश्वर, केदार आदि स्थानों के दर्शन करते हैं।

पंचम सर्ग में अपने गुरु मत्स्येन्द्र की आज्ञा से उनके शिष्यों का योग धर्म के प्रचार के लिए देशदेशान्तरों में जाने का विवरण है :

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुपम लाट गौलाभीर भोट
जनपदंबुलकु दा जनिये बेंपोदव। (पृ. 211)

अर्थात्, 'लाट, गौड, आभीर और भोट देशों में स्वयं (गोरक्ष) गये।'

नरिगे गलिंग गांगव भूमुलकु
नरनुतुंडगु मेघनाथुडिपेसग। (पृ. 211)

अर्थात्, 'मेघनाथ कलिंग और गांगव भूमियों में गये।'

नेलमि विरूपाक्षुडेगे मर्णाट
ललित कन्नोजि मालवदेशमुलकु।

अर्थात्, 'कर्नाट, कन्नौज और मालव देशों में विरूपाक्ष गये।'

नूर्जित यशुडु सोंपोदव गाश्मीर
घूर्जटेंकण मत्स्य कोंकणंबुलकु।

अर्थात्, 'कश्मीर, घूर्जर, टेंकण, मत्स्य और कोंकण देशों में खणिक नामक सिद्ध गये।'

गलित प्रभावुंडु खणिकुंडु नरिगे
मलयाल बर्बर मगधांध्र पांड्य
चोल भूमुलु चन जोच्चे विज्ञान
शीलि नागार्जुन सिद्धुडिपार ....।

अर्थात्, 'मलयाल, बर्बर, मगध, आन्ध्र, पाण्ड्य और चोल देशों में नागार्जुन गये।'

इस प्रकार, मत्स्येन्द्र के प्रधान छह शिष्य देश-भ्रमण करने निकल पड़ते हैं और स्थान-स्थान पर गुरु के आदेश से योग्य पुरुषों को चुनकर योग सिद्धि प्रदान करते हैं। कवि ने गोरक्षनाथ के 18, सिद्ध बुद्ध के 14, मेघनाथ के 9, नागार्जुन के 9, विरूपाक्ष के 14 और खणिक के 10 इस प्रकार 72 (?) शिष्यों के नाम दिये हैं। इस प्रसंग में बीच-बीच में तीन पंक्तियों के नष्ट होने से यह अनुमान किया जा सकता है कि कवि ने पूरे 84 सिद्धों के नाम दिये हों।

कवि द्वारा दिये गये नाम इस प्रकार हैं—

1. रतनघोरक, 2. लोकनाथ, 3. अच्युतनाथ, 4. गगमनाथ, 5. अवधूतनाथ, 6. चन्द्रनाथ, 7. पश्चिमनाथ, 8. योनिनाथ, 9. नरदेवनाथ, 10. गोडाचूडा, 11. नागगोडि, 12. जिनार, 13. मयूरसिद्ध, 14. कीर्तिश्री, 15. सोमवासि, 16. वच्चलि, 17. बालगोविन्दुड्, 18. हरिमिण्ड संजा, 19. सूर्यनाथ, 20. जोकाय, 21. तेक्कपि, 22. सिन्धुरिपाय, 23. मोहनपाय, 24. (कि) गिम्मीरिपाय, 25. नित्यनाथ, 26. सत्कीर्त्तिनाथ, 27. सत्यनाथ, 28. नाकूरिनाथ, 29, सिद्धरावूल, 30. मनोरथ. 31. विज्ञानशेवडि, 32. परुवडिसिद्ध, 33. युपवाय, 34. कपालदण्डि,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

35. कालवंचक, 36. कल्याणयोगी, 37. पाषणभुक्क, 38. नरभुक्, 39. भूतनाथ, 40. सरदुटि, 41. दूरभात, 42. नागार्जुन, 43. धूमपाय, 44. भल्लूकपाय, 45. तैलपाय, 46. व्यालि, 47. भानुमन्त, 48. हेमदूर, 49. रसेन्द्रपाय, 50. रत्नपाय, 51. उच्चयाख्य, 52. कालपाय, 53. वज्रकाकनाथ, 54. जालान्ध्र-शिष्य, 55. शैन्द्रपाल, 56. कामन्द, 57. पूर्णगिरिनाथ, 58. याणिगुरु, 59. नालिव्यापक, 60. भुवनेन्द्र, 61. त्रिलोचनसिद्ध, 62. अमृतज्ञसिद्धि (?), 63. कमलनाथ, 64. अमृतनाथ, 65. सदानन्दराल, 66. आनुगन्नाराल, 67. खेचरी, 68. अचलनाथ, 69. परमानन्दयोगी, 70. सिद्धनाथ, 71. विरंचिनाथ और 72 सौरभ ।

गोरक्षनाथ के पास अल्लम प्रभु पधारते हैं । दोनों में अपनी-अपनी शक्तियों का प्रदर्शन और वाद-विवाद होता है, जिसमें गोरक्ष विजयी सिद्ध होते हैं ।

नागार्जुन का शिष्य, जिसका नाम भी नागार्जुन था, रससिद्धि प्राप्त कर समग्र श्रीपर्वत को सुवर्णमय करने का प्रयत्न करता है, तो विष्णु उसका वध कर देते है ।

व्यालि नामक सिद्ध पुरुष पल्लवराजाओं की नगरी काल्याणकटक पहुँच, कार्यसिद्धि का प्रदर्शन कर वहाँ के राजा को अपना शिष्य बना लेता है ।

गोरक्षनाथ का शिष्य गोरक्क (गोरण्टक) गौड देश में अपनी महिमा का प्रदर्शन करता है ।

महाराष्ट्र देश में स्थित कन्दारपुरी के राजा कृष्ण कन्दार के राज्य में राजा की मूर्खता के कारण सूखे हुए तडाग को गोरण्टक द्वारा जल से पूर्ण करने की कथा है ।

इस प्रकार, पंचम सर्ग में नाथ पन्थियों की आश्चर्यजनक तथा चमत्कार पूर्ण शक्तियों का वर्णन किया गया है ।

सरस साहित्यलक्षणविचक्षण की उपाधि से समलंकृत गौरन ने प्रस्तुत काव्य में चरित्रकथन के अतिरिक्त कविता-चमत्कारों का प्रदर्शन करते हुए 'नवनाथ-चरित्र' को प्रौढ प्रबन्ध-रचना के रूप में विस्तार दिया है । नवनाथों के चरित्र-कथन को ही दृष्टि में रखकर रचे जाने पर भी इस काव्य में यथावश्यक रसानुगुण युक्त वर्णन, अलंकारों का प्रयोग आदि के दर्शन होते हैं । इस प्रकार, यह 'नवनाथ चरित्र' आन्ध्र-साहित्य की द्विपद काव्यशाखा की एक उत्कृष्ट रचना है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मोल्ल रामायणमु : एक परिचय

तेलुगु भाषा में संस्कृत महाभारत का अनुवाद मौलिक कृति के रूप में कवित्रय (नन्नय, तिक्कना, एरना) ने किया था। भक्त-प्रवर पोतन्न ने महा-भागवत का आंध्रीकरण (मूल की अपेक्षा छः गुना अधिक) किया था। इन दोनों के बाद किसी भी तेलुगु कवि ने महाभारत और महाभागवत के आंध्रीकरण का प्रयास नहीं किया। किन्तु तेलुगु में वाल्मीकि रामायण के आधार पर अधिक संख्या में काव्य ही नहीं, साहित्य की अन्य विधाओं में पर्याप्त मात्रा में रचनाएँ हुई। इसका मूल कारण राम की कथा की लोकप्रियता है। जनश्रुति के अनुसार रामचंद्रजी ने वनवास का अधिक समय आंध्र देश में ही बिताया था। सीता और राम आन्ध्र जनता के लिए माता-पिता बन गये हैं। आन्ध्र देश में ऐसा कोई गाँव नहीं मिलेगा, जहाँ राम का मंदिर न हो। भाषा से अनभिज्ञ होते हुए भी, आंध्र के लोग बड़ी भक्ति और श्रद्धा के साथ "हनुमान चालीसा" का पारायण करते हैं।

तेलुगु की असंख्य रामायणों में रंगनाथ रामायण, भास्कर रामायण, मोल्ल रामायण, रामाभ्युदय, रघुनाथ रामायण, एकोजी रामायण, गोपीनाथ रामायण, दशरथ-नंदन चरित्र आदि-आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। आधुनिक काल में भी कई कवियों ने रामायण की कथा को अपनी रचना का आधार बनाया है। इनमें कवि सम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण कृत "रामायण कल्पवृक्ष" उल्लेखनीय है। इसी काव्य पर उन्हें 1972 में ज्ञानपीठ का पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इन रामायणों में आकार से "रंगनाथ रामायण" सबसे बड़ा काव्य है। इसमें कई अवाल्मीकीय प्रसंग हैं। आकार में सबसे छोटा होते हुए भी "मोल्ल रामायण" अत्यधिक लोकप्रिय है। वैसे तेलुगु की अन्य कुछ कवयित्रियों ने रामायण की रचना की है, किन्तु मोल्ल-कृत रामायण के समान अन्य काव्य लोकप्रिय नहीं हुए हैं। समग्र भारतीय साहित्य में आतुकूरि मोल्ल ही वह प्रथम महिला हैं, जिन्होंने रामायण को काव्य का रूप दिया और पंडित-पामार जनों की प्रशस्ति पाई है। यही नहीं, मोल्ल ने समाज की निम्न जाति में जन्म लिया था। आज से पाँच या छः शताब्दी पूर्व एक निम्न जाति की स्त्री का रामायण की कथा के आधार पर काव्य की रचना करना और पंडितों की प्रशंसा करना अपूर्व विषय है।

मोल्ल का समय 14 वीं शताब्दी के अंत में और 15 वीं शताब्दी के प्रारंभ में माना जाता है। उसके वंश का नाम "आतुकूरि" था। उसके पिता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का नाम केसना था। ये पेशे से कुम्हार थे। यद्यपि मोल्ल ने अपने पिता का उल्लेख "केसन सेट्टी" के नाम से किया है, किन्तु वे वैश्य नहीं, संपन्न कुम्हार थे। माना जाता है कि मोल्ल आजीवन अविवाहित ही रह गई। अंतःसाक्ष्य के आधार पर मोल्ल के पिता आतुकूरि केसना, गुरुलिंग और जंगमो (शिव भक्त-साधु) की अर्चना में निष्ठा रखने वाले, शिव भक्तिरत, और बांधव-हितू थे। मोल्ल ने "गोपवरम्" नामक ग्राम में स्थित भगवान श्रीकंठ मल्लेश की कृपा से कविता का वर-प्रसाद पाया। यह गोपवरम् आज के नेल्लूरू (विजयवाड़ा और मद्रास के बीच स्थित) नगर के पास है।

मोल्ल के समय तक रंगनाथ रामायण, भास्कर रामायण आदि राम काव्य लिखे जा चुके थे। इतनी रामायणों के होते हुए भी दुबारा राम-काव्य की रचना क्यों ? इसका उत्तर मोल्ल ने यों दिया है—

"आदि रघुरामु चरितमु
नादरमुग विन्न प्रोत्तये, लक्षण सं
पादम्मै, पुण्य स्थिति
वेदम्मे तोचकुन्न वैंरिरने चेप्पन् ?"

(रघुराम की कथा सनातन है। इस कथा को आदर के साथ सुनने पर, नित्य नवीन और विलक्षण गुणों से संपन्न होकर, यह कथा पुण्य-स्थिति (मोक्ष की प्राप्ति) के लिये वेद के समान द्योतित होती है। नहीं तो क्या मैं पगली हूँ, जो उसी कथा को दुबारा कहूँ ?)

रघुराम की कथा भूजनों (नरलोक वासियों) के लिये कल्पवृक्ष के समान है। भक्ति और मुक्ति का मूल है। ऐसे उन परमात्मा रघुराम की दुबारा स्तुति करने में दोष ही क्या है ? जान-बूझकर स्तुति करने वालों और अनजाने में भगवान राम की स्तुति करने वालों को भी भगवान राम करुण-भाव से अनुगृहीत करते हैं। अपना ज्ञान या रचना-कौशल या पांडित्य इसके कारण नहीं हैं।

मोल्ल ने अपने काव्य की प्रस्तावना में अपने-आप को काव्य-रचना कौशल से अनभिज्ञ बताकर यह कहा—"इंह-पर साधक इस पुण्य चरित्र को मैं श्री राम के आदेश पर ही कह रही हूँ। इसलिए हे कविजन ! मेरी रचना में दोषान्वेषण मत कीजिये।" वह कहती है कि "काव्य रचना" ऐसी होनी चाहिये कि मधु के लगते ही मुँह के मीठा हो जाने के समान, पढ़ते ही काव्य का अर्थ समझ में आ जाना चाहिये। गूढ़ और कठिन शब्दों से युक्त काव्य तो बहरों और गूंगों के संवाद के समान होगा।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजा राम की स्तुति करने वाली जिह्वा से वह छोटे-मोटे राजाओं की स्तुति नहीं करना चाहती। इसलिये उसने अपना काव्य श्रीराम के चरण-कमलों में समर्पित किया।

मोल्ल ने अपने इन विचारों को काव्य की प्रस्तावना के रूप में चौबीस पद्यों में अभिव्यक्त किया है। उसके बाद मोल्ल कृत रामायण में, प्रत्येक कांड में गद्यों की संख्या[1] निम्न प्रकार से है—

बालकांड	—	100
अयोध्याकांड	—	43
अरण्यकांड	—	75
किष्किधाकांड	—	24
सुंदरकांड	—	249
युद्धकांड	—	351

इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रथम चार कांडों को अत्यन्त संक्षिप्त रूप में कहकर, मोल्ल ने सुन्दरकांड और युद्धकांड को विस्तार दिया है। उत्तरकांड को तो उसने छोड़ ही दिया है।

बालकांड में अयोध्या नगर वर्णन, सीताराम विवाह प्रसंग, परशुराम गर्वभंग को थोड़ा विस्तार देकर, मोल्ल ने अन्य प्रसंगों को बहुत संक्षेप में कह दिया है। अहल्या के शाप-विमोचन के प्रसंग को केवल तीन पद्यों में कह दिया है। लेकिन एक शिला के नारी के रूप में परिणत होने के क्रम का काव्यमय वर्णन किया है। वह पद्य इस प्रकार है—

"पदनै, योप्पिदमै, कडु
गदलुचु बंगारू पूदे करगिन रीतिन्,
मेदलुचु, लावण्य स्थिति
सुदतिग जूपट्टि निलिचे सुरुचिर लीलन्।"

(नरम बनकर, औचित्य से कंपित होते हुए जिस प्रकार सोने की गुड़िया गलती है, उसी प्रकार हिलते-डुलते लावण्य की स्थिति में सुरुचिर लीला से (वह शिला) स्त्री के रूप में दिखायी पड़ी।)

इस प्रसंग में मोल्ल ने अहल्या के शाप के वृत्तांत का वर्णन ही नहीं किया है।

सीता, मांडवी, उर्मिला और श्रुतकीर्ति आदि चार बहनों के विवाह के

---

1. तेलुगु में सभी महाकाव्य गद्य-पद्य युक्त चंपू शैली में ही लिखे गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्णन में आंध्रदेश में प्रचलित वैवाहिक कार्यक्रमों का मनोहर वर्णन किया गया है।

अयोध्याकांड की कथा का वर्णन अति संक्षेप में किया गया है। मंथरा का वृतांत ही नहीं है। कैकयी का वर मांगना, सीता-राम और लक्ष्मण का वनवास के लिये निकल पड़ना, दशरथ का स्वर्गवास आदि का वर्णन एक-दो पद्यों में किया गया है। केवट का प्रसंग भी दो ही पद्यों में किया गया है। किन्तु इनमें से निम्न पद्य तेलुगु जनता के जिह्वाग्र पर नाचता रहता है—

"सुडिगोनि रामु पादमुलु सोकिन धूलि वहिंचि रायि ये
पॅड नोक कांत यय्ये नट, पन्नुग नीतनि पादरेणु वि
य्येड वडिनोड सोक निदि येमगुनो यनि संशयात्मुडे
कडिगे गुहुंडु राम पद कंज युगम्मु भयम्मु पेंपुनन्।"

(केवट कहता है कि सुनते हैं, राम के चरणों की धूल के स्पर्श से एक पत्थर अद्भुत ढंग से कांता बन गयी। इनके पाद-रेणु यहाँ मेरी नाव का झट से स्पर्श करें तो इसकी क्या दशा हो जायेगी ? इस प्रकार संशयातमा बनकर, भय के आधिक्य से, गुह (केवट) ने राम के चरण कमल-युगल धोये।)

गोस्वामी तुलसीदास ने इस मार्मिक प्रसंग का वर्णन रामचरित मानस, कवितावली और गीतावली में किया है।

तेलुगु के प्रबंध-काव्यों में प्रकृति के विस्तार से वर्णन करने की प्रथा है। मोल्ल ने भी अयोध्याकांड में सायं-संध्या, अंधकार, ज्योत्स्ना, जारिणी स्त्रियों का विश्रृंखल विहार, प्रभात वर्णन, संक्षेप में सही, प्रभावशाली ढंग से किया है।

अरण्यकांड की कथा भी काफी संक्षेप में लिखी गयी है। इस कांड में रति-राज सम दो राजकुमारों का पैदल चलने की बात जंगली जाति के स्त्रियाँ को बहुत अखरती है। स्वर्ण हिरण को मारकर, उसके चर्म को धनुष की नोक पर टांग कर, राम के पर्णशाला की ओर लौटने का वर्णन बड़े ही मार्मिक रूप में किया गया है। इस कांड में शबरी का वर्णन, शबरी के प्रति कवयित्री के भक्ति-भाव को व्यक्त करता है।

"चनि चनि, येदुटनु रामुडु
गनुगोनिये मही जनोग्र कलुषाद्रि महा
शनि स्पं बन दगु ना
धन मुक्ति वधू विलास कबरिन् शबरिन्।"

(जंगल में बहुत दूर जाकर, श्रीराम ने भूलोक-वासियों के उग्र पाप रूपी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर्वतों को समाप्त कर देने वाली अशनि (वज्र) और महान मुक्ति वधू के जूड़े के समान विलसित शबरी को देखा ।)

इस कांड में शूर्पणखा के द्वारा किया गया जानकी के अलौकिक सौन्दर्य का वर्णन और श्रीराम का विरह-वर्णन प्रबन्ध-काव्यों की पद्धति के अनुरूप ही हैं ।

मोल्ल ने सुन्दरकांड को बड़े मनोहर रूप में प्रस्तुत किया है । इस कांड में सीता और हनुमान का संवाद, राक्षस-वीरों के साथ हनुमान का युद्ध और हनुमान रावण संवाद प्रभावशाली बन पड़े हैं। अशोक वन में स्थित सीता जी से हनुमान अपने संवाद का प्रारंभ यों करते हैं—

"उन्नाडु लेस्स राघवु
डुन्नाडिदे कपुल गूडि, युरुगति रानै
युन्नाडु, निन्नु गोनि पो
नुन्ना, डिदि निजमु नम्मु मुर्वी-तनया ।"

(हे सीते ! राम सकुशल हैं । यहीं कपिसेना को लेकर शीघ्र गति से आने वाले हैं । तुम्हें ले जाने वाले हैं । यह सच है । विश्वास करो ।)

इस पद्य की विशेषता यह है कि प्रत्येक चरण का प्रारंभ "है" क्रिया से किया गया है, जिसे सुनकर सीता जी आश्वस्त हो जायँ ।

इसी प्रकार सीता जी का कुशल-समाचार श्रीराम को देते समय भी हनुमान जी ने क्रिया-पद से ही अपनी बात का प्रारंभ किया है—

"कंटिन् जानकि बूर्णचंद्रवदनन्, गल्याणि ना लंकलो
गंटिन् मी पद पंकजातमु मदिन् गौतूहलं बोप्पगा,
गंटिन् मी करुणावलोकनमु विख्यातंबुगा, गीर्तुलं
मंटिन् मा कपिवीर बृंदमुललो गांभीर्य वारान्निधी ।"

(हे गंभीरता के सागर राम ! देखा है, मैंने जानकी को, पूर्ण चंद्र वदन वाली को, लंका में स्थित उस कल्याणी को देखा है और यहाँ आकर आपके चरण-कमलों को, मन में कौतूहल के विलसित होने पर देखा है । आपकी करुणा भरी चितवनों को विख्यात रूप से देखा है। कीर्तियों से युक्त अपने कपिवीर समूहों को देखा है ।) इस पद्य में "देखा" क्रिया का प्रयोग साभिप्राय हुआ है ।

युद्धकांड में सेतु-बंधन से लेकर अयोध्या में राम के राजतिलक तक की कथा का वर्णन सरस और सरल शैली में किया गया है। कथा-कथन की शैली उत्कंठा को जगाने वाली और चमत्कार-युक्त है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्त्री होते हुए भी मोल्ल ने सुन्दरकांड में राक्षस-वीरों के साथ हनुमान के युद्ध का और युद्धकांड में अनेक राक्षस-वीरों के साथ कपिवीरों का, मेघनाद और लक्ष्मण का और अंत में राम और रावण के युद्ध का सजीव एवं प्रभावशाली वर्णन किया है।

युद्ध कांड में वानरों के सेतुबंधन का भी मोल्ल ने औत्सुक्यपूर्ण वर्णन किया है। राम के आदेश पर वानर बड़े-बड़े पत्थरों और पर्वतों को लाकर समुद्र में डाल रहे थे। लेकिन इन सब को समुद्र में स्थित तिमिंगल निगल जा रहे हैं। राम ने इसके बारे में समुद्र से पूछा और समुद्र की सलाह पर सेतु बंधन के लिए नल को नियुक्त किया। नल के हाथ स्पर्श के कारण कोई भी वस्तु पानी में डूबती नहीं। नल ने एक दिन में दस योजन की वारिधि बनायी। दूसरे दिन महाबलशाली हनुमान सुवेलाद्रि के पास जाकर उस पर्वत के पास स्थित हेमकूट, नाग पर्वत आदि को समूल उखाड़कर उन्हें निंबफलों के समान और पुष्प कंदुकों के समान आकाश में उछालते हुए लाकर, नल को दिया। उन तीनों पर्वतों से नल शेष नब्बे (90) योजन की वारिधि बनियी।

इंद्रजीत के ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करने पर राम की सारी सेना मूर्छित हो गयी। राम और लक्ष्मण अभी ब्रह्मास्त्र से आबद्ध हो गये। उस समय सूर्यास्त हुआ। सूर्य के अस्त का वर्णन करते हुए मोल्ल कहती है कि अपने पोतों (सूर्यवंशी राम और लक्ष्मण) की दुर्दशा न देख सका, मानों सूर्य अपराब्धि में डूब गये।

रावण के शक्ति के प्रयोग करने से लक्ष्मण मूर्छित हो गये। क्रुद्ध होकर राम यों प्रतिज्ञा करते हैं—

"रामुडु रावणु डनुचुन्
भूमिपैयिर्वुरुनिकि पोसगदु सुंडी
नामाट विनुडु लेस्सग
रामुडु नेनोंडे भुविनि रावणु डोंडेन्।"

(राम और रावण दोनों का इस धरती पर रहना संभव नहीं होगा। मेरी बात ध्यान से सुन लो। धरती पर राम रहेगा या रावण ही। अर्थात् दोनों में से कोई एक ही रहेगा।)

लक्ष्मण के प्राणों की रक्षा करने के लिए जब हनुमान महौषधियों से युक्त पर्वत को ला रहे थे तो उसकी दिव्य दीप्तियों को देखकर राम ने सोचा कि सूर्य का उदय होने जा रहा है। सूर्य को उदित होने से रोकने के लिये उन्होंने अस्त्र उठाया तो जांबवान उन्हें शांत करते हुए कहते हैं कि यह सूर्य का प्रकाश नहीं है। यह तो औषधियों से युक्त पर्वत का प्रकाश है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस प्रकार मोल्ल ने राम की कथा को स्त्री-सुलभ कोमल प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त करने वाले रूप में प्रस्तुत किया है, जिससे वह अत्यंत लोकप्रिय बन गयी है। कथा के निर्वहण कौशल के साथ मोल्ल का वर्णन-कौशल भी उल्लेखनीय है।

काव्य की प्रस्तावना में मोल्ल ने संस्कृत और आन्ध्र के महाकवियों की स्तुति कर, अपने आप को काव्य-कौशल और वैदुष्य से विहीन बताकर, अपनी विनम्रता को अभिव्यक्त किया है। वह पद्य इस प्रकार है—

"देशीय पदमुलं देनुगुल सांस्कृतुल्
संघुलु प्राज्ञुल शब्द वितति
शय्यलु रीतुलु जाटु प्रबंधंबु
लाया समासंबु लर्थ दृष्टि
भावार्थमुलु गाव्य पारिपाकमुलु रस
भाव चमत्कृतुल् पलुकु सरवि
बहु वर्णमुलुनु विभक्तुलु धातुल
लंकृति छचंदो विलक्षणमुलु।
गाव्य संपद क्रियलु निघंटुवुलुनु
ग्रममु लेवियु नेरुगु, विख्यात गोप
वरपु श्रीकंठमल्लेश वरमुचेत
नेरि गतित्वंबु जोपगा नेर्चुदान।"

(देशी, तद्भव, तत्सम आदि प्राज्ञ जनों का शब्द समूह, काव्य रचना की शय्या[1], रीति, प्रबन्ध काव्य, समास, अर्थ दृष्टि, भावार्थ, काव्य-परिपाक, रस और भावों के चमत्कार से युक्त शैली, बहुवर्ण, विभक्तियाँ, धातुएँ, अलंकार, विलक्षण छंद आदि काव्य को संपन्न बनाने वाली क्रियाओं को (पद्धतियों को) निघंटुवों के क्रम को मैं नहीं जानती। केवल गोपवरम् के विख्यात श्रीकंठ मल्लेश के वर-प्रसाद से कविता कर पा रही हूँ।)

ऐसा कहने के बावजूद मोल्ल रामायण में काव्य-रचना के उत्कृष्ट लक्षण परिलक्षित होते हैं। कुछ पद्यों को पढ़ने से मोल्ल के प्राचीन कवियों की रचनाओं के गंभीर अध्ययन के प्रमाण के भी दर्शन होते हैं। उदाहरण के लिये निम्न पद्य पर बाणभट्ट की कादंबरी का स्पष्ट प्रभाव है। यह पद्य अयोध्या नगरी के वर्णन के प्रसंग में आता है—

---

1. द्राक्षापाक, कदलीपाक और नारिकेलपाक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

"मदनाग यूथ समग्रदेशमु गानि
कुटिल वर्तन शेष कुलमु मादु,
अह वोर्वीजय हरि निवासमु गानि
कीश समुत्क राकितमु, गादु,
सुंदर स्यंदन मंदिरं बगु गानि
संतत मंजुलाश्रयमु गादु,
मोहन गणिका समूह गहमु गानि
यूथिका निकर संयुतमु गादु ।
सरस स त्पुण्यजन निवासम्मू गानि
कठिन निर्दय दैत्य संघम्मु गादु,
कादु कादनि कोनियाड गलिगि नट्टि
पुर व राग्रम्मु साकेत पुरवरम्मु ।"

(मदनाग, मदवतियों) के यूथ (समूह) से युक्त प्रदेश है, किन्तु कुटिल वर्तनवाले शेष नागों का कुल (समूह) नहीं है। आहव (युद्ध में उर्वी पर विजयी होनेवाले हरि (विष्णु) का निवास है, किन्तु हीन बंदरों का निवास स्थान नहीं है। सुन्दर स्यंदन (रथ) का मंदिर (निलय) है, किन्तु सदा सुकुमारता का आश्रय नहीं है। मोहक गणिकाओं (वेश्याओं) के समूह का घर है, किन्तु यूथिका (जंगली पौधा) के समूह के संयुत नहीं है। सरस (रसिक) तथा पुण्य जनों का निवास है, किन्तु कठिन, निर्दयी दैत्य संघ का निवास स्थान नहीं है। "ऐसा नगर नहीं है, नहीं हैं") ऐसा प्रशंसित होने वाला साकेत पुरवर सब नगरों में श्रेष्ठ है।)

वालकाण्ड में अयोध्या नगर के वर्णन के अवसर पर इस प्रकार के चार-पांच और पद्य हैं जिन्हें पढ़ते ही कादंवरी का स्मरण हो जाता है।

अयोध्याकाण्ड में सूर्यास्त, चन्द्रोदय तथा प्रभात के वर्णन में मणिमाणिक्यों के रंगों के चित्रण में मोल्ल ने अपने स्त्री सुलभ आकर्षण को प्रकट किया है। आजीवन अविवाहिता रहने वाली इस कवयित्री ने जारिणी स्त्रियों के अपने उप-पतियों के साथ विहार का वर्णन किया है। चन्द्रोदय के वर्णन के समय का यह पद्य अत्यंत रमणीय है—

"भानु सहस्र सत्किरण पंक्तुल नुद्भवमँन या बृह
द्भानुनि वेट्ट बेल्लुडुक बड्ड सुधावंधि मीदि मीगडल्
पूनि समीरूचे देरल बूर्वदिश गंनुपट्ट दानिपै
पैन मनंग नोप्पे शशि बिंबमु तूरूपु गोवपै दगन् ।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(सूर्य की सहस्र किरणों से उत्पन्न अग्नि की उष्णता के कारण सुधा का समुद्र खूब खौल उठा। उस दूध पर उत्पन्न मलाई हवा के मारे एक जगह इकट्ठी हो गयी। उस पर के फेन के समान ही पूर्व दिशा में चंद्रमा सुशोभित हुआ।)

स्वभावोक्ति का प्रयोग करते हुए पाठकों के समक्ष वर्ण्य विषय को चलचित्र के समान उपस्थित करने में मोल्ल का रचना-कौशल अद्वितीय है। वालि के वध के समय रामचन्द्र के रूप का वर्णन अपूर्व है।

"सालमु पोंत निल्चि रघुसत्तमु डम्मरि वोसि, शब्द वि
न्मूलनुगाग विल् दिविचि, मुष्टियु दृष्टियु गूर्चि, गोत्र भू
त्कूलमु वज्र पात हति गूलु विधंबुन गूल नेसे न
व्वालि, ब्रतापशालि, मृडंवदन शीलि, सुरालि मेच्चगन्।"

(साल वृक्ष की आड़ में खड़े होकर रघुवंशोत्तम ने धनुष साध कर खामोशी के साथ, मुष्टि और दृष्टि एकाग्र कर, पर्वतराज के पंख काट डालने वज्रपति के आघात के समान, प्रतापी और ईश्वर भक्त वालि को, देवताओं को प्रसन्न करते हुए, मार गिराया।

इस पद्य के अंतिम चरण में अनुप्रास की छटा पठनीय है। इसी प्रकार समुद्र-लंघन करते समय हनुमान जी का रूप-वर्णन भी प्रभावशाली है।

"मोगमु बिगिंचि, पादमुलु मोत्तमुगा वडि नूदि त्रोक्कि, नी,
दुग मोग मेत्ति, भीकर कठोर रवंबुन नाचि, बाहुल
त्यागणित लील नूचि, वलयंबुग वालमु द्रिचि, ब्रेगुनन्
नगमु सगम्मु, गृंग, गपि नाथुडु निंगिकि दाटे निव्वुनन्।"

(चेहरे की नसों को कसकर—तानकर, दोनों चरणों को एक स्थान पर सुस्थिरता से रखकर, मुख को ऊपर की तरफ उठाकर, भीकर रूप से ललकार कर, बाहुओं को लहरों की तरह हिलाकर, पूँछ को गोल घुमाकर, हनुमान जी इस वेग से आकाश की ओर उड़े कि आधा पर्वत नीचे धंस गया है।)

इस प्रकार अपने काव्य में जगह-जगह मोल्ल ने सफलता के साथ वस्तु वर्णन किया है।

स्वयं स्त्री होने के नाते मोल्ल ने सीता के उज्ज्वल चरित्र को प्रभावशाली ढंग से इस काव्य में प्रस्तुत किया है। धनुर्भंग के बाद लज्जावश सिर झुकाकर आँख की कोरों से राम को देखने वाली सीता के पहली बार दर्शन होते हैं। अपने अतिशय पराक्रम का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करने वाले और सीता को प्रभावित करने और धमकाने का निष्फल प्रयास करने वाले रावण को वह तृण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समान मानती है। वह रावण को समझाने का प्रयास करती है और राम के पराक्रम का वर्णन करते हुए कहती है कि –

"अट्टि रामुन की यब्धि यनग नेंत ?
लंक यन नेंत ? दनुजुल पोंक मेंत ?
नी वनग नेंत ? नी लावु चेव येंत ?
चेप्प नेटिकि नीवें चूचेदवु गाक।"

(ऐसे महान शूर-वीर, साक्षात आदिनारायण राम के लिए इस सागर की क्या हस्ती है ? यह लंका ही क्या चीज है ? राक्षसों का गर्व ही कितना है ? स्वयं तुम्हारी क्या हस्ती है ? तुम्हारी शक्ति और बिसात ही क्या है ? ज्यादा कहना क्यों ? युद्ध के समय तुम स्वयं देख लोगे।)

कहीं-कहीं संस्कृत समास युक्त शैली का प्रयोग करने पर भी, मोल्ल रामायण की भाषा-शैली सरस और सरल है। पढ़ते ही भाव सरलता से समझ में आ जाते हैं। लगता है, मोल्ल ने अपनी प्रतिज्ञा को सफल बनाया है। मधु के मुंह से लगाते ही जैसे सारा मुँह मीठा हो जाता है, उसी प्रकार काव्य पढ़ते ही काव्य के भावार्थ समझ में आने चाहिये। अपनी भाव-सरलता और संक्षिप्तता के कारण मोल्ल रामायण तेलुगु जनता में लोकप्रिय है।

भावनाओं की कोमलता और अभिव्यक्ति की कलात्मकता के कारण मोल्ल रामायण तेलुगु के राम-काव्यों में अनुपम स्थान रखता है।

प्रसंगानुकूल रचना-शैली, औचित्यपूर्ण शब्द और अर्थालंकारों का प्रयोग, सरल अभिव्यक्ति, प्रवाह पूर्ण भाषा-शैली, कहावतों और मुहावरों का समुचित प्रयोग, संस्कृत और तेलुगु शब्दों का उचित प्रयोग आदि काव्य-गुणों के कारण मोल्ल-रामायण का तेलुगु साहित्य के इतिहास में विशिष्ट स्थान है। मोल्ल ने यह सिद्ध किया कि शूद्र वनिता भी ऐसा उत्तम काव्य रचना कर सकती है, जिसे पंडित और पामर एक समान समादृत करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पिंगलि सूरन्न कृत कलापूर्णोदयमु

तेलुगु साहित्य के इतिहास में प्रबंध युग या रायल-युग[1] स्वर्ण युग माना जाता है। इस युग में प्रबंध काव्य नामक विधा में प्रचुर मात्रा में काव्य लिखे गये। प्रबंध काव्य चम्पू शैली में लिखे गये वर्णन प्रधान महाकाव्य है। रामायण या महाभारत या अन्य किसी पुराण ग्रंथ में से किसी रोचक घटना या प्रसिद्ध चरित्र की कथा को इतिवृत्त के रूप में ग्रहण कर उसका महाकाव्योचित विभिन्न वर्णनों द्वारा विस्तार करके कवि अपने वाग्वैदग्ध्य और वर्णन-कौशल द्वारा प्रबंध काव्य के रूप में प्रस्तुत करता था। इन काव्यों में प्राय: श्रृंगार या वीर रस को प्रधान बनाकर प्रसंगानुसार अन्य रसों का भी समावेश किया जाता था। प्रबंध काव्यों के प्रणेता कवियों ने संस्कृत के भारवी, माध, श्रीहर्ष आदि कवियों की शैली को अपने लिये आदर्श माना था।

तेलुगु के प्रबंध काव्य आश्वासों में विभाजित हैं। संस्कृत महाकाव्यों से भिन्न चम्पू शैली में तेलुगु के प्रबंध काव्यों में प्रसंगानुकूल विभिन्न प्रकार के संस्कृत और देशी छन्दों का प्रयोग किया गया है। काव्य के प्रारंभ में अपने आश्रयदाता राजा की वंशावली और आश्रयदाता के पराक्रम का वर्णन कर, काव्य समर्पित किया जाता था। प्रत्येक सर्ग के प्रारंभ में और अन्त में कृतिभर्ता (काव्य का स्वीकर्ता) का संबोधन होता था। प्रबंध काव्यों में वर्णनों की प्रचुरता होती थी और संवादों में कवि के वाक्-कौशल के दर्शन होते हैं।

श्रीकृष्णदेवराय के दरबार के सुप्रसिद्ध कवि अल्लसानि पेद्दन्न ने[2] मार्कंडेय पुराण से कथा को ग्रहण कर, "स्वारोचिष मनुसंभव" (जो मनु चरित्र के नाम से प्रख्यात हो गया है) नामक काव्य की रचना के द्वारा प्रबंध काव्य रचना पद्धति का प्रवर्तन किया। पेद्दन्न के बाद तेलुगु भाषा में सैकडों की संख्या में प्रबंध काव्य लिखे गये हैं।

---

1. विजयनगर के सुप्रसिद्ध सम्राट श्रीकृष्णदेवराय (1510–1530 राज्यकाल) जो "साहिती-समरांगण सार्वभौम" के नाम से विख्यात हैं।
2. पेद्दन्न + अन्न का तात्पर्य होता है, बड़ा भाई। पेद्दन्न प्रबंध काव्य की रचना शैली के प्रवर्तक थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्रीकृष्ण देवराय के समकालीन आठ महाकवि हुए हैं जिन्हें "अष्टदिग्गज"[1] के नाम से अभिहित किया गया है। इनमें पिंगलि सूरन्न का स्थान अन्यतम है।

पिंगलि सूरन्न को श्रीकृष्णदेवराय के समकालीन नहीं माना जा सकता। ये श्रीकृष्ण देवराय के समय में बालक रहे होंगे और "कलापूर्णोदयमु" के वैशिष्ट्य के कारण "अष्टदिग्गज" कवियों में एक माने गये होंगे। इनका समय सन् 1520 से 1620 के मध्य माना जाता है। तेलुगु के सुप्रसिद्ध समालोचक आचार्य पिंगलि लक्ष्मीकांतम् जी के अनुसार सूरन्न का रचनाकाल सन् 1540 से 1570 तक माना गया है। पेद्द+अन्न—का तात्पर्य होता है, बड़ा भाई। पेद्दन्न प्रबंध काव्य की रचना शैली के प्रवर्तक थे। सूरन्न ने गरुड़पुराण को सन् 1540 में और "राघव पाण्डवीयमु" को सन् 1550 में, कलापूर्णोदयमु" को 1560 में और "प्रभावती प्रद्युम्नमु" को सन् 1570 में लिखा होगा। ऐसा आचार्य लक्ष्मी-कांतम् जी का मत है।

सूरन्न गौतम गोत्रज नियोगी[2] ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम अमरनामात्य और माता का नाम अंबम्मा था। इन्होंने अपने अंतिम काव्य "प्रभावती प्रद्युम्नमु" में इस प्रकार लिखा है—

"जनमुल् मेच्चग मु न्रचिचिति नुदंचद्वैखरिन् गारूडं
बुनु श्रीराघव पांडवीयमु गलापूर्णोदयंबुन् मरिन्
देनुगुं गब्बमु लेन्नियेनियु मत्पित्रादिवंशाभिव
र्णनलेमि बरितुष्टि ना कवि योनर्पजाल वत्यंतमुन्।"

इस पद्य के अनुसार सूरन्न के लिये चार काव्य प्रामाणिक माने जाते हैं।

इन चार काव्यों में गरुड़पुराण उपलब्ध नहीं है। "राघव पाण्डवीयम्" नामक काव्य पंपा के विरूपाक्ष देव को समर्पित है तो "प्रभावती प्रद्युम्नमु" नामक काव्य को सूरन्न ने अपने पितृ देव को समर्पित किया। "कलापूर्णोदयमु" नंद्याल के राजा कृष्ण भूपति को समर्पित है।

"रावव पाण्डवीयमु" तेलुगु साहित्य के इतिहास में प्रथम द्वयर्थि काव्य

---

1. लोक में प्रचलित है कि ये आठ कवि श्रीकृष्णदेवराय की कवि सभा "भुवन-विजयम्" के सदस्य थे। लेकिन ऐतिहासिक कालक्रम के आधार पर यह सत्य सिद्ध नहीं हुआ है।
2. ब्राह्मणों की एक शाखा। ये लोग ग्रामाधिकारी, मंत्री आदि पदों पर नियुक्त होकर, प्रशासन के कार्यों में लगे रहते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। इस काव्य में प्रारंभ से लेकर अंत तक अनेक प्रकार के श्लेष और यमक आदि अलंकारों के द्वारा रामायण और महाभारत की कथा का वर्णन एक साथ किया गया है।[1]

"नव्य प्रकार" से "भव्य काव्य" की रचना के कुतूहल से सूरन्न ने "राम और भारत कथाओं को जोड़कर" गोविन्द की अनुकंपा से युक्त धनबुद्धि के "चमत्कृतिमत्कृतिमत्कृतित्व" (चमत्कृति से अपनी कृति में अपने कृतित्व) को प्रदर्शित करने के लिए द्वयर्थि काव्य की रचना की है। (1–10 और 1–15)

"प्रभावती प्रद्युम्नमु" नामक काव्य की कथा "हरिवंश" नामक पुराण से ली गयी है। सूरन्न की कीर्ति का प्रधान स्तंभ "कलापूर्णोदयमु" नामक काव्य ही है। आधुनिक तेलुगु आलोचना पद्धति के प्रवर्तक सर कट्टमंचि रामलिंगा रेड्डी, (डा. सी. आर. रेड्डी)[2] ने "कलापूर्णोदयमु" को तेलुगु का सर्वश्रेष्ठ काव्य माना है।

तेलुगु के सुविख्यात समालोचक डा. जी. वी. सुब्रह्मण्यम् ने (आचार्य एवं डीन, भाषा केन्द्र, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद) पिंगलि सूरन्न का परिचय देते हुए लिखा है "महाकवि कहलाने वाले कविजन किसी भी युग में क्यों न हो, गिनती भर के होते हैं। परंपरागत रूप से प्रवहमान कालगति के विपरीत लेखनी धारण करने वाला अथवा अतीत के समस्त शिल्प कौशल को आत्मसात कर अपनी प्रतिभा से, अपनी अपूर्व कल्पना सामर्थ्य से अपनी रचना में प्रत्यक्षर रचना शिल्प को आविष्कृत करने वाला ही महाकवि कहलाता है। अथवा परवर्ती कवियों के लिए मार्गदर्शक विशिष्ट साहिती प्रक्रिया प्रयोग का श्रीगणेश कर सकने वाला महाकवि कहलाता है। इन तीन लक्षणों में किसी एक लक्षण से विलसित होने पर भी, वह महाकवि कहला सकता है। इन तीन लक्षणों को महती सामर्थ्य से अपनी रचनाओं को समायुक्त कर सकने वाला मनीषी कवि है पिंगलि सूरन्न। इसलिए महाकवियों में महाकवि हैं।[3]

सूरन्न "सत्काव्य रचना विशारद" एवं "नाना महित प्रबंध रचना घन

---

1. तेलुगु साहित्य में कतिपय द्वयर्थि, त्र्यर्थि और चतुर्थि काव्य लिखे गये हैं। इस प्रकार की काव्य रचना का श्रीगणेश पिंगलि सूरन्न ने ही किया है।
2. आन्ध्र विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति और आधुनिक तेलुगु आलोचना के प्रवर्तक।
3. पिंगलि सूरन्न—डा. जी वी सुब्रह्मण्यम्—विकास लहरी, पृष्ठ 60

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विश्रुति" वाला है। उसने निर्निद्र सारस्य लीला से विचित्र एवं "आरंभ से अंत तक निविड उत्कंठा भाव से युक्त" और "माधुर्यधुर्य" एवं "वाग्वैचित्रि" से मनोज्ञ शैली के "कलापूर्णोदयमु" की रचना की है। (1-13)

आठ आश्वासों में रचित इस काव्य की प्रधान कथा कासारपुर के राजा कलापूर्ण के जन्म, उसके दिग्विजय और अभिनव कौमुदी तथा मधुर लालसा नामक युवतियों से विवाह और संतान प्राप्ति से संबंधित है। "उदय" (अभ्युदय) की कथा है। सूरन्न कथा संविधान में कालक्रम पद्धति को न अपना कर कार्यकारण पद्धति को अपनाया है। इसीलिए प्रधान कथा अंतिम तीन आश्वासों में वर्णित है। प्रथम पाँच आश्वासों में कलापूर्ण तथा मधुर लालसा के पूर्व जन्मों की कथाएँ वर्णित हैं। जन्म जन्मांतरों के वर्णन से युक्त इस कथा वस्तु में अनेक गौण पात्रों का चित्रण हुआ है, जो रतिभाव के विभिन्न पक्षों के वर्णन में सहायक हुआ है।

पाठकों की सुविधा के लिए इस लेख में "कलापूर्णोदय" की कथा को कालक्रम पद्धति के अनुसार ही प्रस्तुत किया जा रहा है।

"कलापूर्णोदयमु" काव्य की कथा संक्षेप में इस प्रकार है।

एक दिन सत्यलोक में ब्रह्मा जी तथा सरस्वती अपने उपवन में विहार करके, एक तटाक के तट स्थित कल्पवृक्ष के तले सुखासीन हुए। शारदा के सुन्दर और स्मिति पूर्ण वदन-कमल को देखकर ब्रह्मा अपने को वश में रख नहीं सके और शारदा के अधर-सुधा-पान की कामना से अपने चारों मुखों से चुंबन करने की चेष्टा की। उनकी इस चेष्टा पर शारदा हँस पड़ी और पीछे हटी। जब ब्रह्माजी ने जवर्दस्ती शारदा के अधरों का चुंबन किया तो एक दाँत शारदा के अधर में चुभ गया। इस बलात्कार के कारण सरस्वती के कंठ से एक मधुर ध्वनि निकल पड़ी। उस ध्वनि का नाम "मणित" था। सरस्वती खीझ कर तालाब की ओर मुख लिये लेटी रही। तब उसका मुखारविंद के मणिस्तंभ में प्रतिबिंबित हुआ।

ब्रह्मा ने समय काटने के लिये अपने पालतू शुकी से कहा कि कोई कथा सुनाओ। शुकी ने ब्रह्मा जी से आग्रह किया "आप ही सुनावें तो हम सुनें।" तब ब्रह्मा जी ने एक काल्पनिक कथा कहना शुरू किया। (यह कथा पंचमाश्वास में है।)

"कासारपुर" नामक नगर में कलापूर्ण नामक एक राजा है। वह जनमते ही यौवन दशा को प्राप्त हुआ। "स्वभावसिद्ध" नामक योग ने उसे दिव्य धनुष और मणिशलाक दिये। "मदाशय" नामक राजा अपनी पत्नी रूपानुभूति और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मन्त्रिवर धीर भाव के साथ कासारपुर आया। कलापूर्ण ने उस मंत्री को राजा से दूर कर उस राजा और रानी को अपना दास और दासी बना लिया।

इस पर शुकी ने पूछा कि कलापूर्ण के माता-पिता कौन हैं ? तो ब्रह्मा ने उत्तर दिया कि कलापूर्ण की माता का नाम मणिस्तंभ है और पिता समुखासक्ति (सुमुख+आसक्ति) है। कलापूर्ण ने "अभिनवकौमुदी" नामक सुन्दरी से विवाह किया।

यह सुनते ही देवी सरस्वती हँस पड़ी और कहने लगी कि आप अनाप शनाप क्या कह रहे हैं ? कहीं पुरुष माता और स्त्री पिता बन सकती हैं ?

ब्रह्मा ने सरस्वती की बातों को अनसुनी करके आगे की कथा कहना शुरू किया।

कलापूर्ण का मंत्री सत्वदास्य ने राजतिलक किया और उसे राजा घोषित किया। क्रमुक-कंठोत्तर नामक नगर का निर्माण राजा मदाशय ने किया और कलापूर्ण को अभिनव कौमुदी के साथ वहाँ बसाकर अपनी पत्नी रूपानुभूति के साथ कलापूर्ण की सेवाएँ करता रहा। कलापूर्ण के मणिशलाक की महिमा से मधुर लालसा नामक पुत्री हुई। मदाशय के पुरोहितों में से किसी के मणिशलाक का स्पर्श करने से कलापूर्ण नाराज हो गया और उन्हें अपने राज्य से निकाल दिया। तदनंतर मदाशय को पत्नी तथा पुत्री के साथ अपने राज्य से निकाल दिया। कालांतर में मधुर लालसा यौवन को प्राप्त कर अतिलोक सौन्दर्य से विलसित हुई। उस समय मदाशय एक बार कलापूर्ण के नगर में आया। कलापूर्ण के आग्रह पर उसने मधुर लालसा का विवाह कलापूर्ण से कर दिया। उसके बाद मधुर लालसा और कलापूर्ण सुख से रहने लगे।

तब सरस्वती ने आक्षेप किया कि यह प्रतीकात्मक कथा मुझ से ही संबंधित है। ब्रह्मा ने इसे स्वीकार किया।

कालांतर में ब्रह्मा के मंदिर में स्थित शुकी शारदा के मुख से निकले मणित का अभ्यास करती रही। उसी समय रंभा वहाँ पर आयी और उसने उस मणित के बारे में शुकी से पूछा, शुकी ने सारा वृतान्त कह सुनाया। इस पर सरस्वती क्रुद्ध हो गयी। लेकिन ब्रह्मा ने शुकी को वर दिया कि अगले जन्म में वह मधुर लालसा बनकर पैदा होगी और कलापूर्ण की पत्नी बनकर सुख भोगेगी। ब्रह्मा ने कहा- मैंने जो काल्पनिक कथा कही, वह सत्य होगी। अन्त में उन्होंने वर दिया कि इस कथा को कहने और सुनने वाले सभी भूलोक में पैदा होकर सभी प्रकार के सुखों का उपभोग करेंगे।

सरस्वती और चतुरानन की रहस्य केलि-कथा पर आधारित इस कथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को पिंगलि सूरन्न ने आठ आश्वासों का विस्तृत रूप दिया है। अब काव्य में वर्णित कथा इस प्रकार है :—

(यहाँ से कथा भाग प्रथमाश्वास में है।) द्वारका नगर पर जब श्रीकृष्ण राज्य कर रहे थे, तब कहाँ कलभाषिणी नामक वेश्या रहा करती थी। वह अत्यंत सुन्दरी, मानिनी तथा विदुषी थी। जन्म से वेश्या होने पर भी वह समस्त सद्गुणों से युक्त थी। एक दिन वह अपनी सखियों के साथ झूला झूल रही थी। उसी समय नारद अपने शिष्य मणिकंधर के साथ श्रीकृष्ण के दर्शन के लिये आ रहे थे। गुरु और शिष्य उन नारियों के सौन्दर्य से आश्चर्य चकित हो गये कि इनका रूप वैभव देव स्त्रियों को भी मात करने वाला है। उसी समय उसी मार्ग से रंभा और नलकूबर विमान पर जा रहे थे। मानव स्त्री के रूप-सौन्दर्य के वर्णन को सुनकर रंभा ईर्ष्यालु बन गयी। उसने विमान को रोक कर नारद से असली बात के बारे में जानने का प्रयत्न किया। उसने नारद को अपने विमान पर बैठा लिया। नारद ने उन दोनों को अनन्य अनुराग से रहने का आशीर्वाद दिया। रंभा ने कहा कि आप का आशीर्वाद सत्य होगा। लेकिन कहीं कुबेर पुत्र मानवी स्त्रियों के प्रति आसक्त हो जाय तो क्या होगा ? खैर, किसी भी लोक की स्त्री क्यों न हो किसी भी तरह मेरी बराबरी तो नहीं कर सकेगी। नारद ने कहा–"तुम्हारा पति तो तुम्हारे वश में है। तुम लोग आनन्द से रहो लेकिन तुम्हारी जैसी स्त्री इसको और इसके जैसा पुरुष उसे जब प्राप्त होंगे, तब देखा जाय।

उनके विमान से नीचे उतरने पर कलभाषिणी ने नलकूबर को देखा और उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो गयी। उसे रंभा के सौभाग्य पर ईर्ष्या हुई। नलकूबर ने रंभा से कलापूर्ण के वृत्तान्त के बारे में पूछा तो उसने उसे गोपनीय बताया। इस बात को कलभाषिणी ने भी सुन लिया। नारद के निकट पहुँचकर कलभाषिणी ने उन्हें प्रणाम किया और शिष्या बनाकर वीणा-वादन में प्रवीण बनाने की प्रार्थना की। उसने रंभा और नलकूबर के बारे में जानना चाहा। नारद को पता चल गया कि नलकूबर के प्रति कलभाषिणी आसक्त हो गयी है। इससे पहले नारद ने कहा था कि रंभा को सौत प्राप्त होगी। नारद को लगा कि कलभाषिणी रंभा की सौत बनने योग्य है। उन्होंने कलभाषिणी को अपनी शिष्या बना लिया।

देवताओं के गायक तुंबुरु और नारद में झगड़ा हो गया था। नारद, तुंबुरु को पराजित करने के लिये कठिन परिश्रम करने लगे। वे श्रीकृष्ण के पास वीणावादन में शिक्षा प्राप्त करने आए थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नारद के शिष्य मणिकधर नामक व्यक्ति ने श्रीकृष्ण का स्तवन करके उन्हें प्रसन्न किया। श्रीकृष्ण ने अपना मणिहार उसे पुरस्कार के रूप में दिया। नारद के साथ श्रीकृष्ण की सभा में मणिकंधर को आते जाते देख, कलभाषिणी उस पर आसक्त हुई थी। लेकिन नलकूबर को देखने के बाद मणिकंधर के प्रति उसकी आसक्ति कम हुई।

नारद ने चार वर्ष तक श्रीकृष्ण के पास संगीत का अभ्यास किया। श्रीकृष्ण की पत्नियाँ अपनी अपनी संगीत निपुणता को जानने की इच्छा से कलभाषिणी को कामरूप (अभीष्ट रूप) प्राप्त करने का वर दिया। कलभाषिणी से संतुष्ट होकर नारद देवलोक में चले गये। नारद के आदेश पर मणिकंधर पुण्य क्षेत्रों की यात्रा करने के लिये चले गए। कलभाषिणी नलकूबर के प्रति आसक्त होकर, अपनी इच्छापूर्ति के अवसर के प्राप्त न होने पर व्याकुल बनी रही। एक दिन जब वह उपवन में बैठी हुई थी, तब मणिस्तंभ नामक एक सिद्ध महात्मा वहाँ आया। कलभाषिणी ने अपनी सेवाओं से उसे संतुष्ट किया और उससे निवेदन किया कि किसी भी तरह अपने प्रियतम के पास पहुँचा दें। मणिस्तंभ ने स्वीकार किया और उसे अपने सिंह पर बिठाकर आकाश मार्ग से ले चला। मृगवाहना देवी के मंदिर के पास उसे उतारकर कलभाषिणी को मंदिर की देवी के लिये बलि चढ़ाने का प्रयत्न किया। उस मंदिर में समुखासत्ति नामक योगिनी थी। उसने कलभाषिणी पर तरस खाकर उसे बचाया। देवी के प्रभाव से मणिस्तंभ और कलभाषिणी कहीं दूर फेंक दिये गय। वहाँ मणिस्तंभ कलभाषिणी पर बलात्कार करने लगा। उसकी चीख पुकार को सुनकर, नलकूबर के वेश में कोई व्यक्ति वहां आया। उसे देख मणिस्तंभ डर गया और भाग निकला। कलभाषिणी ने वर के प्रभाव से रंभा का रूप धारण किया और अपने प्रियतम उस नलकूबर के पास गयी। वे दोनों लताकुंज में चले गये। थोड़ी देर के बाद उनके सामने रंभा के रूप में एक और नारी आकर खड़ी हो गयी। दोनों में नलकूबर के लिये वाद-विवाद और झगड़ा हुआ। अंत में एक रंभा ने कहा कि चलो, देवसभा में जाकर इसका निर्णय किया जाय। दूसरी ने देवसभा में आने से इन्कार कर दिया। नलकूबर ने समझ लिया कि यह माया रंभा है। तब असली रंभा ने माया रंभा को शाप दिया कि "तू खड्ग के प्रहार से मर जाय"। उसके बाद वह अपने प्रियतम के साथ चली गई।

जब वे जा रहे थे, तो नलकूबर के वेश में एक अन्य पुरुष वहाँ आया। रंभा चकित हुई कि इनमें उसका असली पति कौन है ? दोनों नलकूबर आपस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में झगड़ने लगे । अंत में दोनों युद्ध के लिये तैयार हुए, तो रंभा ने रोका। वस्तु स्थिति या वास्तविकता को जानने के लिये रंभा ने दोनों से अलग-अलग से कलापूर्ण के वृत्तांत के बारे में पुछा। पहला नलकूबर उत्तर देने में असमर्थ रहा। दूसरे ने जवाब दिया। रंभा ने पहले व्यक्ति को छद्म वेशधारी मानकर उसे हट जाने को कहा। नलकूबर ने उसे शाप दिया। तब रंभा और नलकूबर ने नारद के वचनों का स्मरण किया। अपने मिथ्या गर्व के लिये प्रायश्चित होने पर वे विनम्र और प्रसन्नचित्त होकर चले गये।

वहीं निकट में छिपकर मणिस्तंभ ने इस विचित्र वृत्तांत को देखा और पुनः देवी के मंदिर में गया। कलभाषिणी भी वहाँ पहुँच गयी और मणिकंधर भी। इस प्रकार एक दूसरे को देखकर वे सब आश्चर्य चकित रह गये। योगिनी के पूछने पर मणिस्तंभ ने रंभा-द्वय और नलकूबर-द्वय की कथा कह सुनायी। कलभाषिणी और मणिकंधर दोनों ने बताया कि हमीं लोग वेश बदलकर वहाँ आये थे। इन विचित्र परिस्थितियों में अपने पूर्व प्रियतम मणिकंधर से पुनः भेंट होने पर कलभाषिणी संतुष्ट ही हुई। उसे अपनी मूर्खता पर पश्चाताप हुआ। उसने कहा—"सच्चे मणि को छोड़कर मैं काँच के टुकड़े के पीछे पागल हो गयी थी। अब मैं सत्य बात कहूँ तो भी जन्म से वेश्या होने के कारण कोई मेरी बात को नहीं मानेंगे।"

मणिकंधर ने उसकी मानसिक वेदना को समझकर, उसे सांत्वना दी। उसका मन भी तो रंभा के प्रति विचलित हुआ। यह सच है कि प्रत्येक पुरुष अपनी प्रेमिका को या प्रेम को एक विशिष्ट रूप में देखना चाहता है। इसे स्पष्ट करने के लिये उसने एक कथा सुनायी।

काश्मीर के शारदापीठ में एक पुरोहित था। उसकी पुत्री का नाम सुगात्री था। उसके पति का नाम शालीन था। सुहाग रात के दिन सुगात्री की सखियों ने उसे खूब सजाकर पति के पास भेजा। उस कृत्रिम अलंकार को देखकर शालीन के मन में विरक्ति हुई। उसने अपनी पत्नी से बात तक नहीं की, स्पर्श करने की बात तो दूर। सखियों के उपदेश के अनुसार सुगात्री ने पति की खूब सेवा की। फिर भी शालीन विचलित नहीं हुआ। शालीन की सास ने उसे अयोग्य मानकर, उसे अपने उपवन का माली बना दिया। शालीन उस कार्य को बड़ी श्रद्धा से करता रहा।

कालांतर में एक दिन जोरों की आँधी और तूफान के कारण सारा नगर जल से आप्लावित होने लगा। उस ससय सुगात्री को बगीचे में परिश्रम करने वाले अपने पति का स्मरण हो आया और वह आँधी तूफान की परवाह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किये बिना, अपने पति के पास बगीचे में गयी और पति के साथ मेहनत करने लगी। उस समय उसने अपने पूरे आभूषण निकालकर, एक कोने में रख दिये और साड़ी का फेंटा कसकर बाँधकर काम करने लगी। उस अनभ्यस्त श्रम के कारण उसके चेहरे पर पसीने की बूंदें चमकने लगी। सुगात्री को उस स्वरूप में देखकर शालीन ने उसे गले लगाया। तब सुगात्री अपने भाग्य को सराहने लगी। तब उसे मालूम हुआ कि उसका पति कृत्रिम अलंकरण को पसंद नहीं करता। उसके बाद उसने कृत्रिम अलंकरण छोड़कर पति के प्रेम को प्राप्त किया।

मणिकंधर ने आगे कहा कि जब मैं काश्मीर के शारदापीठ में मनाये जानेवाले एक उत्सव में गया तो वहाँ सुगात्री और शालीन की प्रशंसा सुनकर उसके दर्शन करने गया। पता चला परस्पर अत्यंत अनुरक्त उस पुण्य दंपति ने सरोवर में कूदकर अपनी इहलीला समाप्त कर दी थी। मणिकंधर के मुख से यहाँ तक कहानी सुनकर सुमुखासत्ति ने बताया कि मैं वही सुगात्री हूँ। मणिस्तंभ ने अपने को वही शालीन बताया। लेकिन सुमुखासत्ति ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। कलभाषिणी और मणिकंधर ने एक गुप्त विषय के बारे में पूछकर स्पष्ट कर दिया कि मणिस्तंभ शालीन ही है। कलापूर्ण के वृत्तान्त को सुनना कल्याणप्रद मानकर अलघुव्रत नामक व्यक्ति वहाँ आया और पूजा-पाठ में मन लगाकर अपना समय बिताने लगा।

सुमुखासत्ति और मणिस्तंभ के कहने पर तथा कलभाषिणी के निवेदन करने पर मणिकंधर ने शापग्रस्त कलभाषिणी की बलि चढ़ा दी। (रंभा का शाप सत्य हुआ) और स्वयं शाप फल भागने के लिये श्रीशैल गया और पर्वत शिखर से कूदकर प्राण देने का निश्चय किया। सुमुखासत्ति और मणिस्तंभ उसी मंदिर में दो वर्ष तक तपस्या करते रहे और बाद में देशाटन के लिये निकल पड़े।

भगवती की महिमा से अलघुव्रत कलापूर्ण की सभा में जा पहुँचा। उसने अपने हाथ का मणिहार राजा को दिया। राजा ने वह हार वहीं पालने में स्थित शिशु के गले में डाल दिया। उस हार की प्रधान मणि के स्पर्श से शिशु में विलक्षण ज्ञान उत्पन्न हुआ और उसने सरस्वती और ब्रह्मा की रहस्य-केली की कथा को स्पष्ट किया। उस शिशु ने बताया कि मैं सरस्वती और ब्रह्मा की पालतू शुकी हूँ। उसने प्रथम जन्म में कलभाषिणी के रूप में और दूसरे जन्म में मधुरलालसा के रूप में जन्म लिया था। उसने पूर्व कथा को स्पष्ट करते हुए बताया कि स्वभावसिद्ध सुगात्री का पिता है। उसने मणिकंधर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को हितोपदेश, देकर भृगुपात (पर्वत के शिखर से कूद कर प्राण त्याग देना) से रोका।

मधुरलालसा (शिशु) ने आगे बताया– मणिकंधर ने शल्यासुर का वध किया और स्वयं मर गया।

कलापूर्ण ज्योंही सत्वदात्मा का वृत्तान्त बताने लगा त्योंही मधुलालसा का दिव्य ज्ञान समाप्त हो गया। मधुरलालसा ने सयानी होने पर कलापूर्ण के साथ विवाह किया। कलापूर्ण ने दिग्जिय कर अनेक राजाओं को जीतकर उनसे प्राप्त मणियों से विचित्र मणिहार बनवाया और उसे मधुरलालसा देवी के गले में डाला। तब उस हार की प्रधान मणि के संस्पर्श से मधुरलालसा को पुनः दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ। मधुरलालसा ने श्रीमहाविष्णु के माहात्म्य का वर्णन करते हुए लक्ष्मीनारायण संवाद की कथा बतायी। उस कथा में भगवान ने समस्त मानव जाति को यह वर प्रदान किया कि तीर्थ स्थानों की यात्रा न कर सकने वाले अपने अपने आवासों में रहकर मेरा ध्यान करते रहें तो भी उन्हें मोक्ष की प्राप्ति अवश्य हो जायेगी।

कलापूर्ण ने अभिनवकौमुदी के द्वारा सुप्रसाद और मधुरलालसा के द्वारा सरस नामक पुत्रों को प्राप्त किया और सुख से जीवन बिताया।

"कलापूर्णोदयमु" काव्य की कथा का यह अति संक्षिप्त रूप है।

इस काव्य की प्रतीकात्मकता का विवरण देते हुए प्रो. जी. वी. सुब्रह्मण्यम ने यों लिखा है—

"कलापूर्णोदय नामक काव्य-वृक्ष के लिए सरस्वती चतुर्मुख की विलास केली स्कंध है। वाणी के मुख के प्रतिबिंब के वर्णन में "वाच्य हो दिखाई पड़ने वाले नाम जाति क्रियादि सकल पद अर्थ वाक्यों में प्रतीयमान कलापूर्ण का वृतांत उस तरु की एक शाखा है। सरस्वती और चतुर्मुख के मुख बिंब और प्रतिबिंबों में दृश्यमान चेष्टा विशेषों में व्यंग्य रूप के भासमान कलाभाषिणी वृत्तान्त एक और शाखा है। इन दोनों शाखाओं के लिए स्कन्ध ही आधार है। कलापूर्ण की कथा की कल्पना वाच्य है किन्तु उस प्रकार रहस्यकेली प्रसंग में कलभाषिणी वृत्तान्त सूच्य नहीं है। वह कथा कल्पना-शिल्प का एक मर्म है, एक व्यग्य मर्यादा है।" (विकास लहरी पृष्ठ 78-79)

इस प्रतीकार्थ को समझने पर ही काव्य रचना कौशल से पाठक परिचित हो सकते हैं।

सूरन्न ने प्रवंधकाव्य रचना की परम्परा से हटकर कल्पित कथा रचना की पद्धति को अपनाया और उसमें सफलता प्राप्त की। प्रतीक तत्व से युक्त इस काव्य की कथा औपन्यासिक तत्वों से युक्त होकर, आधुनिक उपन्यासों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की तरह कुतूहलवर्धक और रोचक है। तेलुगु के क्या, संभवतः आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्यों में इस प्रकार की विलक्षण कथा से युक्त अन्य कोई काव्य नहीं है। कई आलोचकों ने कलापूर्णोदय को पद्यबद्ध उपन्यास की संज्ञा दी है जो सर्वप्रकारेण समुचित है।

यह काव्य प्रबंध युग के अन्य काव्यों के समान शृंगार रस प्रधान है। शृंगार वर्णन में भी सूरन्न ने अपनी विशिष्टता प्रदर्शित की। इस काव्य में पांच नायक-नायिकाओं के होने के कारण पाँच प्रकार के शृंगार वर्णन परिलक्षित होते है। अभिनवकौमुदी और शल्यासुर, सुगात्री और शालीन, सरस्वती और चतुर्मुख, कलभाषिणी और मणिकंधर, मधुरलालसा और कलापूर्ण—इन पाँच दंपतियों को आलंबन बनाकर, सूरन्न ने विलक्षण रूप से शृंगार रस को प्रस्तुत किया है। यह तेलुगु साहित्य के इतिहास में ही अपूर्व है।

तेलुगु के सुप्रसिद्ध समालोचक स्व. प्रो. पिंगलि लक्ष्मीकान्तम जी के शब्दों में—

इस काव्य के वर्णित शृंगार रस सत्यलोक में उद्भूत होकर, गंधर्व लोक से होते हुए मर्त्यलोक में अवतरित हो रही है। भूमि के स्वभाव के अनुरूप जल के गुण में अन्तर पड़ जाने के समान इस शृंगार ने तीनों लोकों में तीन रूप धारण किए। सत्यलोक में उसका स्वरूप है—कामवासना से रहित दिव्यलीला। सरस्वती और चतुर्मुख की विलास लीला ही इस समस्त सृष्टि के प्रभव का कारण है। सत्यलोक से प्रभावित होते हुए वह रस प्रवाह गंधर्व लोक में जिस रूप का धारण करता है, उसे गंधर्व प्रणय कहते हैं। इस काव्य-कथा में कलभाषिणी और मणिकंधर का शृंगार उक्त गंधर्व-प्रणय का स्वरूप है। गंधर्व लोक से मर्त्यलोक में अवतरित होने तक यह रस—वाहिनी सहधर्मचर्य का रूप धारण करता है। इस काव्य में सुगात्री और शालीन का दांपत्य शृंगार इसी का रूप है। वहाँ "प्रजाये गृहमेधिनः" के अतिरिक्त और किसी सूक्ति के लिए स्थान नहीं है। गृहस्थ धर्म के निर्वाह और दांपत्य सिद्धि के लिए पातिव्रत्य धर्म ही आधार है। इस कथा की सुगात्री पातिव्रत्य धर्म का मूर्तिमान रूप है।

यह प्रवाह वहीं न रुककर, मानवलोक से अधोलोक की ओर प्रवाहित होकर, "काम" का रूप धारण करता है। उसे "काम" कहने की अपेक्षा "तुच्छकाम" कहना संगत है। अननुरक्ता युवती पर बलात्कार करने की इच्छा रखने वाला राक्षस स्वभाव उसका आलंबन है। इस कथा में अभिनव-कौमुदी पर बलात्कार करने का प्रयत्न करने वाले शल्यासुर का वृत्तान्त इसका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रमाण है। शृंगार के इन चार रूपों को दिव्य, गन्धर्व, मानव, राक्षस—ये चार नाम दे सकते हैं। (आन्ध्र विज्ञान सर्वस्व-- तृतीय खंड, पृष्ठ सं. 1213)

प्रबंधकाव्य साधारणतया वर्णन प्रधान होते हैं। इन वर्णनों का कभी-कभी मूल कथा से कोई संबंध नहीं होता। किन्तु सूरन्न ने वर्णनों को कथा संविधान से जोड़कर उन्हें सार्थक और रमणीय बनाया है। सूरन्न ने वर्णनों के द्वारा कथा के विभिन्न अंशों को जोड़ने का प्रयत्न किया है एवं वर्णनों के द्वारा कथांशों को सूचित किया है। इस प्रकार सूरन्न के वर्णन निरर्थक न होकर, सार्थक बने हैं और पाठक में औत्सुक्य को जागृत करने वाले सिद्ध हुए हैं।

सूरन्न ने अपने काव्य के प्रधान पात्रों के चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक पद्धति को अपनाया है। इसलिये "कलापूर्णोदयमु" के सभी पात्र अपनी-अपनी विशिष्टताओं से युक्त होकर सजीव लगते हैं।

कविता के स्वरूप और प्रभाव का उल्लेख करते हुए सूरन्न ने "कलापूर्णोदयमु" के प्रथम आश्वास में यों लिखा है—

"चलुव गलवेन्नेललचेलुवुनकु सौरभमु
गलिगिननु, सौरभमु चलुवयु दलिर्प
बोलु पेंपेसगुकरपुरपु बलुकुलकु गोमलत
नेलकोनिन, सौरभमु जलुवपसयुं गो
मलतयुनु गलिगि जनमुल मिगुल बें पेसगु
मलयपवनंपु गोदमलकु मधुरत्वं
बलवडिन, नीडु मरि कलदनक वच्चु गाडु
वेलयगल यीसुकविपलुकुलकु नेंचन्।"

(अर्थात् शीलता से युक्त चाँदनी का सौन्दर्य सौरभ से युक्त हो जाय, सौरभ और शीतलता से युक्त कर्पूर के टुकड़े कोमलता से युक्त हो जाये, सौरभ, शीतलता और कोमलता से युक्त होकर जनता को सम्मुदित करने वाले मंद मलयपवन मधुरता से युक्त हो जाय, जब जाकर उसकी तुलना सुकवि कविता की जा सकती है।)

इसके आगे कवि ने सत्कविता के बारे में एक और पद्य में यों कहा है—

"पोसग मुत्तेपुसरूल पोहलिंचिनलील
दमलोन दोरयुशब्दमुल गूर्चि,
यर्थंबु वाच्यलक्ष्यव्यंग्यभेदबु
लेरिगि निर्दोषत नेसग जेसि,
रसभावमुलकु नईबुग वैदर्भि
मोदलैन रीतुलिम्मुग नर्मचि,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रीतुल कुचितंबुलै तनरारेडु
प्राणंबु लिम्मुगा बादुकोल्पि,
यमरनुपमादुलुनु यमकादुलु नगु
नाट्टियर्थशब्दालंक्रियलु घटिचि
कवित जेप्पंग नेर्चुसत्कविवरूनकु
वाछितार्थंबु लोसगनिवारू गलरे ?"

(अर्थात् मुक्ताहार में मोतियों को गूंथने के समान शब्दों को क्रम से व्यवस्थित कर, वाच्य, लक्ष्य, व्यंग्य के अर्थों को जानकर, काव्य को निर्दोष बनाकर, रस भावों के उपयुक्त वैदर्भ आदि रीतियों का संग्रथन कर, रीतियों के अनुरूप उपमा, यमक आदि अर्थ और शब्दालंकारों का प्रयोग करने वाले सत्कवि को आश्रयदाता मनोवांछित फल नहीं देता ? अवश्य देते हैं ।)

कवि ने इन दोनों पद्यों में जिन-जिन लक्षणों का उल्लेख किया है, उनका सफल निर्वाह इस काव्य में किया है । वैसे इस काव्य का आदि भाग का (सरस्वती और ब्रह्मा की लीला केलि) का वर्णन पंचमाश्वास में किया है । इस कार्य-कारण पद्धति से पाठकों में अंतिम आश्वास का औत्सुक्य बना रहता है ।

सूरन्न ने काव्य के प्रारंभ में यह सोचकर कि "सकल लक्षण लक्षित महाप्रबंध की रचना करना कीर्ति का कारण है, "कलापूर्णोदय" नामक काव्य की रचना का प्रारंभ किया । यह काव्य अपूर्व कथा-संविधान वैचित्र्य से महनीय, शृंगार रस से संयुक्त पुण्य वस्तु वर्णन और आकर्णन से युक्त है । अपूर्व कथा संविधान से युक्त होने के कारण कवि की प्रतिभा और भावना शक्ति के लिये अपूर्व प्रमाण के रूप में यह काव्य तेलुगु साहित्य के इतिहास में अमर है ।

इस प्रकार तेलुगु के प्रबंधकाव्यों में कथा कथन कौशल, वर्णन-विधान, संवाद-चातुरी, भावपक्ष और कलापक्ष का सुरुचिर-निर्वाह आदि कारणों से "कलापूर्णोदय" का स्थान अद्वितीय है । 16वीं शताब्दी में[1] आधुनिक उपन्यास के समान कुतूहलवर्धक कल्पना प्रधान काव्य की रचना करने वाले सूरन्न की प्रतिभा अनुपम है ।

---

1. संयोग की बात है कि 16वीं शताब्दी में ही इंग्लैंड के महाकवि शेक्सपियर ने "कामेडी आफ एरर्स" नामक नाटक की रचना की थी । दोनों रचनाओं की कथावस्तु में साम्य परिलक्षित होता है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गाँधीयुग का प्रकाशस्तम्भ : उन्नव लक्ष्मीनारायण पन्तुलु कृत—

मालपल्लि

समकालीन समाज में व्याप्त सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि परिवर्तनों के परिज्ञान अथवा दिग्दर्शन के लिए यदि साहित्य को श्रेष्ठ साधन माना जाए तो 20 वीं शती के प्रारम्भिक कतिपय दशकों के आंध्र-जन-जीवन का समग्र चित्र प्रस्तुत करनेवाली श्रेष्ठ रचना है 'मालपल्लि'। यह आंध्र के ग्रामीण जीवन के विकासक्रम को काव्योचित रूप में प्रस्तुत करनेवाला अन्यतम उपन्यास है। इस उपन्यास में वर्णित 'सेटलमेंट' (सुधार केन्द्र), जेल, अदालत, पाठशालाएँ, पुलिस, खादी धारण, असहयोग, धार्मिक लूट-खसोट, स्वराज्य-आन्दोलन आदि विषयों से संबंधित अनेकानेक विवरण इस रचना को सामाजिक अभिलेख' (Social document) का महत्त्व प्रदान करते हैं। यह जन-साहित्य का सजीव तथा सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। उस समय की सरकार ने 'मालपल्लि' पर प्रतिबन्ध लगाया था, इसी से इस उपन्यास की राष्ट्रीय महत्ता और चेतना का बोध होता है। आंध्र के इस सुप्रसिद्ध उपन्यास के लेखक हैं प्रसिद्ध देशभक्त, नेता श्री उन्नव लक्ष्मीनारायण।

श्री उन्नव लक्ष्मीनारायण का जन्म गुन्टूर जिले के सत्तेनपल्लि तालुका के 'वेमुलूरू पाडु' में सन् 1873 में हुआ था। आंध्र क्रिश्चियन कालेज, गुन्टूर में एफ. ए. तक शिक्षा प्राप्त कर, आपने वकालत का अध्ययन किया और वहीं कई वर्ष तक वकालत करते रहे। सन् 1913 में आयरलैंड के डब्लिन नगर से बैरिस्टरी की उपाधि प्राप्त की। वहीं आयरलैंड के स्वतन्त्रता-आन्दोलन के नेता डी वेलरा से श्री लक्ष्मीनारायण का परिचय हुआ। उस देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन ने उन्हें बहुत प्रभावित किया। विदेश से लौट कर बैरिस्टरी में श्री लक्ष्मीनारायण ने खूब नाम और धन कमाया। सन् 1920 से महात्मा गाँधी जी के आदेशानुसार असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और कई बार जेल-यात्रा की। जेल-जीवन से परिपुष्ट उनके विस्तृत अनुभव 'मालपल्लि' के रूप में, जेल में ही प्रस्तुत और परिवर्द्धित हुए।

श्री वीरेशलिंगम् की प्रेरणा से श्री लक्ष्मीनारायण ने स्त्री-जनोद्धार के लिए अनेक सराहनीय कार्य किए जिनमें विधवाओं के लिए आश्रम की स्थापना, विधवा-विवाह को सामाजिक स्तर पर प्रोत्साहित करना आदि प्रमुख हैं। स्त्रियों में विद्या-प्रचार के लिए उन्होंने गुन्टूर में 'शारदा-निकेतन' की स्थापना की जो आज भी इनकी कीर्त्ति-पताका बन, उनके यश को चारों ओर फैला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहा है। आंध्र के सामाजिक क्षेत्र में सुधार लानेवालों तथा राजनीतिक जागृति उत्पन्न करनेवालों में श्री उन्नव लक्ष्मीनारायण अग्रगण्य हैं।

'मालपल्लि' के अतिरिक्त श्री लक्ष्मीनारायण की अन्य रचनाओं में 'नायकुरालु', 'भावतरंगमुलु', 'स्वराज्य सोदे', (सोदे-भविष्यवाणी) आदि उल्लेखनीय हैं। अन्तिम रचना 'तिक्कना' है। यदि काल के कराल गाल से लेखक कुछ समय तक सुरक्षित रहते तो निश्चय ही यह प्रौढ़तम रचना सिद्ध होती। अस्तु, अपनी सद्यः प्रसूता कृति को उसके शैशव में ही छोड़कर, वाणी का यह वरपुत्र सन् 1952 में दिवंगत हुआ।

शासकीय तथा सामाजिक क्षेत्र में अनयपूर्ण जीवन का समग्र एवं सजीव चित्र प्रस्तुत करनेवाला, आंध्र वाङ्मय का समादृत बृहद्काय उपन्यास 'मालपल्लि' है। इसका दूसरा नाम 'संगविजयमु' है। कथानायक रामदास तथा संगदास के आदर्शों की विजय से परिपूर्ण इस उपन्यास का द्वितीय नाम अधिक सार्थक है। 'मालपल्लि' का संक्षिप्त इतिवृत्त इस प्रकार है :—

'मंगलापुरम्' ग्राम की 'मालपल्लि' (हरिजनों की बस्ती) का मुखिया है रामदास। 'माला' (अस्पृश्य) होने पर भी सुशिक्षित, स्थितप्रज्ञ एवं राजयोगी है। उसकी पत्नी महालक्ष्मम्मा आदर्श भारतीय नारी है। उनके तीन पुत्र— वेंकटदास, सगदास और रंगडु और एक पुत्री है। ज्येष्ठ वेंकटदास सच्चा किसान पर विद्रोही स्वभाव का युवक है। संगदास गांधीजी के सिद्धान्तों में अटल विश्वास रखनेवाला एवं उन सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने में तन-मन-धन की बाजी लगानेवाला है। वह गाँव के मुखिया चौधरय्या के यहाँ नौकरी करता रहता है। रामदास की पुत्री ज्योति सरल तथा आदर्श स्वभाववाली कन्या है जो अपने चरित्र-बल से समग्र उपन्यास को ज्योतित करती रहती है। रामदास की बहन का पुत्र अप्पादास आदर्श युवक है। अप्पादास तथा ज्योति में बचपन से ही स्नेह पनपता रहता है। इस मुख्य कथा के साथ उपन्यासकार ने चौधरय्या के परिवार की कथा का भी आकलन स्वभाव-वैषम्य आदि के प्रदर्शनार्थ किया है। चौधरय्या क्रूर तथा लोभी स्वभाव का है और उसकी पत्नी लक्ष्मम्मा अति उदार तथा स्नेही है। आरम्भ में सन्तान के अभाव में वह संबंधियों में से एक बालक को गोद लेता है। परन्तु इसके कुछ समय बाद उसे एक पुत्र की प्राप्ति हो जाती है और उसका नामकरण होता है रामानायुडु। दत्तक पुत्र वेंकटय्या और रामानायुडु दोनों ही बड़े होकर, कलत्रवान बन, खेती-बारी में अपने पिता की सहायता करते हैं। रामानायुडु इसी समय पुत्र प्राप्त करता है और उसका नाम रखा जाता है गोपीकृष्ण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामदास अपने परिश्रम और भलमानसी के कारण चार-पाँच एकड़ जमीन का स्वामी बन खेतीबारी का काम करता रहता है। उसका परिवार बड़ा है और उसी प्रकार उत्तरदायित्व भी। अपना उत्तरदायित्व निभाते हुए वह अपनी गृहस्थी के कामों से फ़ुरसत पाकर, वेदान्त की चर्चाओं में मन लगाता है। यथा समय वह गुरु से दीक्षा ग्रहण करता है। ऐहिक विषयों के प्रति उसका दृष्टिकोण अलिप्त-सा है।

रामदास चांडाल कहलानेवाले अपनी जाति के लोगों के उद्धार के लिए प्रयत्नशील रहता है। उसके मतानुसार उन लोगों की दुरवस्था के दो प्रधान कारण हैं—दरिद्रता और अज्ञान। उसका पुत्र संगदास अपने पिता के अभिप्रेत कार्य की सफलता के लिए तन-मन से प्रयत्नशील रहता है। वह हरिजनोद्धार-आन्दोलन में सक्रिय भाग लेता है, सभा-सम्मेलनों में जाता है और वहाँ भाषण आदि देकर निज जनों को प्रबुद्ध बनाने का प्रयत्न करता है। अपने मालिक चौधरय्या के पुत्र रामानायुडु को वह अपने व्याख्यान तथा व्यवहार से प्रभावित करता है। संगदास की कार्यनिष्ठा तथा आदर्शों के कारण रामानायुडु उस पर लट्टू हो जाता है और धीरे-धीरे उन दोनों में घनिष्टता बढ़ने लगती है। रामानायुडु का एक हरिजन (संगदास) के साथ मिलजुल कर रहना चौधरय्या को अच्छा नहीं लगता क्योंकि इससे उसका 'अहम्' आहत हो जाता है।

चौधरय्या, पटेल और निकट के दूसरे गाँवों के कुछ भूस्वामी मिलकर षड़यंत्र करते हैं कि खेतों में काम करनेवाले मजदूरों को अनाज की जगह पैसे दिए जाएँ, किन्तु मजदूरों के नेता इस बात को स्वीकार नहीं करते। गाँवों में इस बात को लेकर खलबली मचती है। मजदूरों का पक्ष लेकर संगदास चौधरय्या को समझाने का निष्फल प्रयत्न करता है। एक दिन वह अपने साथ रामानायुडु को भी खेत पर काम करने ले जाता है। वहाँ सब कुछ स्वयं देखकर रामानायुडु मजदूरों की दुर्दशा से खिन्न हो उठता है। इस पर चौधरय्या और भी नाराज हो जाता है और सोचता है कि इस हरिजन की संगति से रामानायुडु बिगड़ता जा रहा है अतः जैसे हो इन्हें पृथक करना चाहिए। हरिजनोद्धार संबंधी सभाओं में भाग लेने के लिए दूसरी ओर रामानायुडु को संगदास विजयवाड़ा ले जाता है। वहाँ संगदास अपने वाक्चातुर्य से सभी को मुग्ध कर देता है। सोमयाजुलु जैसे पुरातन-पन्थी भी उसकी बातों से प्रभावित होते हैं। इन व्याख्यानों के माध्यम से लेखक ने वर्णाश्रम-व्यवस्था, ग्राम-निर्माण-पद्धति, स्वशासन की उत्तमता आदि का सविस्तर वर्णन किया है।

इस सभा का परिणाम होता है सवविधि जागरूकता और जागरूक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

व्यक्ति अनायास कार्य में प्रवृत्त नहीं होता। अतः मजदूर भी काम पर जाने से इनकार कर देते हैं। खेतों पर काम रुक जाता है। चौधरय्या क्रोधावेश में संगदास के सिर पर हेंगी दे मारता है और वह बेचारा वहीं ढेर हो जाता है। चौधरय्या इस अप्रत्याशित घटना से डरकर घर में छिप जाता है। पटेल, पटवारी आदि पन्तुलु के द्वारा चौधरय्या से खूब पैसे ऐंठते हैं और इस हत्या काण्ड को दबा देते हैं। रामदास और उसकी पत्नी महालक्ष्मम्मा रो-धो कर उसकी अन्त्यक्रिया कर देते हैं। वे पुलिस रिपोर्ट करना उचित नहीं समझते और सब कुछ ईश्वर पर छोड़ देते हैं।

संगदास की अन्त्येष्टि के बाद 'मंगलापुरम्' में संगदास की समाधि बनाई जाती है और ग्रामीणों द्वारा उसी के निकट 'संगपीठम्' की स्थापना होती है। वहाँ हरिजनों की शिक्षा-दीक्षा का सुन्दर प्रबन्ध किया जाता है। रामदास मजदूरों के बच्चों के लिए पाठशाला चलाता है तो अप्पादास रात के समय मजदूरों की शिक्षा का प्रबन्ध अपने ऊपर ले लेता है। रामानायुडु अपनी पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ 'संगपीठम्' से सम्बद्ध पुस्तकालय को भेंट कर देता है। उस संस्था की सुव्यवस्था से आकर्षित होकर गाँव के उच्च वर्णों के लोग भी वहाँ आने लगते हैं।

यद्यपि चौधरय्या हत्या करके साफ बच जाता है तथापि वह रामदास के समाज-सुधारक कार्यक्रम को अच्छी नजर से नहीं देख पाता। पुराने कागज-पत्र निकाल कर, षड्यन्त्र रचकर, रामदास के खेतो पर अभियोग चलाता है। दुर्भाग्य से रामदास उस अभियोग में हार जाता है। परन्तु भगवान की इच्छा को सर्वोपरि माननेवाला वह साधु पुरुष न्यायालय में जाने से इनकार कर देता है। उसका सर्वस्व चौधरय्या के अधीन हो जाता है और उसे अपना घर छोड़, अप्पादास के घर में रहने के लिए विवश होना पड़ता है।

पिता के कुकर्मों का फल सदाचारी पुत्र को भोगना पड़ता है। रामानायुडु की पत्नी कमला मोहनराव (रामानायुड के चचेरे भाई) के साथ मद्रास भाग जाती है। बेचारा रामानायुडु व्यथित हो उठता है। कमला और मोहनराव तीन-चार महीने मौज से गुजारते हैं। कभी-कभी कमला को गोपीकृष्ण (जिसे वे 'साहू' कह कर पुकरते थे) की याद सताती है। इस काण्ड को जानकर मोहन राव का भाई उसे (मोहनराव को) अपने गाँव ले जाता है। इसी मध्य कमला चेचक से आक्रान्त हो, धर्मार्थ-चिकित्सालय में मरणासन्न हो जाती है और उसे अन्य शवों के साथ फेंक दिया जाता है। उसी समय मोहनराव वहाँ लौटता है और कमला के निधन-समाचार से व्याकुल हो गाँव लौटता है और क्षय रोग से पीड़ित हो जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अप्पादास 'संगपीठम्' की पाठशाला में नियमित रूप से और बड़ी योग्यता के साथ पढ़ाने लगता है। स्वयं संस्कृत के पंच महाकाव्यों का अध्ययन कर वह ज्योति को भी सुशिक्षित करता है। ज्योति भी प्राचीन काव्य ग्रंथों का अध्ययन कर, अप्पादास के साथ कई विषयों पर चर्चाएँ करती रहती है। 'संगपीठम्' में भाषणों का प्रबन्ध होता है, हरिकथा, पुराण-पाठ तथा प्रवचन आदि होते रहते हैं। एक बार वहाँ 'प्रह्लाद चरित्र' नामक यक्षगान का अभिनय होता है। इस प्रकार 'संगपीठम्' उस प्रान्त के सामाजिक जागरण का केन्द्र बन जाता है।

खेतों के हाथ से निकल जाने के बाद रामदास को मजदूरी करनी पड़ती है। इन अत्याचारों को न सह सकने के कारण रामदास का ज्येष्ठ पुत्र वेंकटदास घर से भाग निकलता है और 'तक्केळ जग्गडु' के नाम से डाकू बनकर, धनी साहूकारों की लूट, दीन-दुखियों की सहायता करने लग जाता है।

कमला मरती नहीं, बीमारी से कुरूप बन, अपने पुत्र की देख-रेख में दिन बिताती है। दुर्भाग्यवश गोपीकृष्ण को पाण्डु रोग हो जाता है और वह सदा के लिए आँखें बन्द कर लेता है। उसका दुःख न सह पाने के कारण वह भी एक दिन पति के चरण स्पर्श कर, अन्तिम क्षणों में केवल पति को अपना परिचय दे, प्राण छोड़ देती है।

चौधरी के अत्याचारों की सीमा नहीं रहती। वह अपनी साख के प्रभाव से अप्पादास को पाठशाला की नौकरी से निकलवा देता है। रामदास की गृहस्थी के लिए बुरे दिन आते हैं। वह सुब्बिसेट्टि नामक साहूकार के पास से कुछ कपड़े लेकर, आस-पास के गाँवों में बेच आने के लिए निकल पड़ता है। मार्ग में तक्केळ जग्गडु के अनुयायी उसे पकड़ लेते हैं और कपड़े लेकर, दुगुना दाम चार सौ रुपये देते हैं। ईमानदार रामदास सारी रकम सेट्टि को देता है परन्तु वह ऊपर के दो सौ रुपये चुपचाप जेब में डाल लेता है और रामदास को उनमें हिस्सा तक नहीं देता। उसी दिन रात को जग्गडु के अनुयायी सुब्बिसेटि का घर-बार लूट लेते हैं। जग्गडु को पकड़ने के लिए सरकार अनेक प्रयत्न करती है पर कोई लाभ नहीं होता है। साहूकारों और जमींदारों के अत्याचारों से पीड़ित साधारण जनता की सहानुभूति प्राप्त करने के कारण, सरकार को उसकी गतिविधियों का कोई समाचार प्राप्त नहीं होता।

मगलापुरम् में पादरी लोग अपने धर्म का प्रचार करने आते हैं। रामदास वाद-विवाद में स्वधर्म को श्रेष्ठ सिद्ध करता है। अंग्रेज पादरी अपना-सा मुँह लिए चले जाते हैं। पर क्योंकि उन्हें सरकार का सहयोग प्राप्त था, इसलिए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जग्गडु की चोरी-डकैती के सिलसिले में रामदास के परिवार को गिरफ्तार कर लिया जाता है और उन्हें सुधार केन्द्र में भेजा जाता है। वहाँ उन्हें अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है। वहाँ का सुपरिटेंडेंट 'पॉल' 'ज्योति' को देख मोहित हो जाता है। रामदास को उसका व्यवहार पसन्द नहीं आता। सुधार केन्द्र भी एक प्रकार से ईसाई धर्म के प्रचार-केन्द्र ही थे। रामदास अपने धर्म पर अडिग रहता है। उसके कारण वहाँ के अशिक्षित लोगों में अपने धर्म के प्रति निष्ठा जागृत होती है। इस जागरण को और ज्योति को फँसाने में अपनी असफलता को देख पॉल और वहाँ के पादरी दोनों मिलकर रामदास के साथ कुछ और लोगों पर मुकदमा चलाकर उसे जेल भेजने का षड्यन्त्र रचते हैं। अदालत में सुनवाई होती है और रामदास तथा महालक्ष्म्मा को छः महीने का कठोर दंड दिया जाता है। ज्योति और रंगडु सुधार-केन्द्र में ही रह जाते हैं।

चौधरय्या की मृत्यु के बाद रामानायुडु और वेंकटय्या यह निश्चय करते हैं कि अपनी सारी जायदाद 'संगपीठम्' को दे दें। रामानायुडु ज्योति और रंगडु को वापिस गाँव में लाने का प्रयत्न करता है। पादरी स्वयं को उनका संरक्षक घोषित करता है। दूसरी ओर अवसर पाकर एक दिन पॉल ज्योति पर अत्याचार करने का प्रयत्न करता है तो वह नदी में कूद कर जान दे देती है। उसी समय वहाँ आया हुआ अप्पादास ज्योति के शव के साथ नदी में डूब कर अपनी जान दे देता है।

ज्योति और अप्पादास का सहमरण प्रान्त भर में तहलका मचा देता है। सरकारी सुधार-केन्द्र की व्यवस्था को सुधारने के लिए प्रत्यन होने लगते हैं।

जग्गडु के अनुयायियों और सरकारी सेना में घमासान युद्ध होता है। जग्गडु घायल हो कर पकड़ा जाता है। पकड़े जाने के बाद अस्पताल में वह अपना परिचय देता है। मंगलापुरम् के लोग अपने ही गाँव के एक व्यक्ति के साहसिक कृत्यों को जानकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं। तदनन्तर उस पर अभियोग चलता है और उसे (वेंकटदास उर्फ जग्गडु) पाँच साल की सजा दी जाती है और उसे भी वहीं भेज दिया जाता है जहाँ रामदास और महालक्ष्म्मा थे।

लेखक ने इस अवसर पर उस समय की जेल-व्यवस्था तथा वहाँ के अत्याचारों का अनावश्यक विस्तार के साथ वर्णन किया है।

रामदास और महालक्ष्मम्मा को जेल में अनेक यातनाओं को सहना पड़ता है। वेंकटदास के मुख से ज्योति और अप्पादास के सहमरण का समाचार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुनकर तथा उसकी दुर्दशा को देख महालक्ष्मी का हृदय फट जाता है और वह तत्काल मर जाती है। उसके बाद ही अन्तिम समय तक भी भगवान का नाम न लेकर विद्रोही वेंकटदास भी मर जाता है। तदनन्तर जेल में अनेक कष्टों का सामना कर रामदास मुक्ति-लाभ करता है और अपने गाँव चला आता है। वहाँ रामानायुडु आदि उसका स्वागत करते हैं। मंगलापुरम् में जग्गडु की भेजी पाँच लाख की रकम से 'कलाशाला' (महाविद्यालय) की स्थापना की जाती है। जग्गडु मजदूर सभा के लिए भी उतनी ही रकम की व्यवस्था करता है।

मोहनराव अपने कुकर्म का प्रायश्चित्त करने के लिए, क्षयरोग से मरते समय, अपनी सारी जायदाद 'विजय कलाशाला' को दे जाता है। 'विजय कलाशाला' आदर्श महाविद्यालय के रूप में बुनियादी शिक्षा का केन्द्र बन स्वराज्य आन्दोलन की मार्ग-दर्शिका बनती है। इस प्रकार जीवन में पगपग पर कष्टों का सामना करने वाला रामदास अचंचल भाव से अपने कार्य में निमग्न रहता है। एक दिन वह अकस्मात् आरण्यकों की ओर चला जाता है और यहीं उपन्यास भी समाप्त हो जाता है।

इस उपन्यास में संगदास का सर्वतोमुखी ज्ञान, अद्भुत त्याग, ज्योति अप्पादास का अशरीरी प्रेम, महालक्ष्मम्मा का वात्सल्य, वेंकटदास का आत्म समर्पण, रामानायुडु का अकुंठित सेवाभाव आदि का और रामदास के निष्काम कर्मभाव का सुन्दर तथा प्रभावशाली ढंग से वर्णन किया गया है।

'मंगलापुरम' मानव-धर्म का 'मंगलपुर' है। इस उपन्यास में यह दर्शाया गया है कि मानव के महत्व का मूल कारण त्याग-वैराग्य, गुणशील, प्रेम-निग्रह, भक्ति-श्रद्धा आदि हैं न कि भोग-विलास, कुल सम्पत्ति, प्रज्ञा-पांडित्य, दम्भ अहंकार आदि।

'रामदास' 'मालपल्लि' अथवा 'संगविजय' का हृदयभूत है। सुख-दुःख में समता का अनुभव करनेवाला यह स्थित्त प्रज्ञ वास्तव में ही कर्मयोगी और पूर्ण वेदान्ती है। रामदास के लिए दुखों की परम्पराएँ, रागद्वेष, ममता, अहंकार, मान-अभिमान आदि सभी आत्म विजय के ही साधन बने हैं। सारी जायदाद का छिन जाना, संगदास की हत्या, सुधार केन्द्र और जेल की यातनाएँ, ज्योति और अप्पादास का सहमरण, पत्नी और पुत्र की मृत्यु आदि समस्त घटनाएँ उसके आत्मोद्धार की साधिका ही सिद्ध हुई हैं। निष्काम कर्मयोग के अभ्यास ने रामदास के लिए 'अन्ता राममयम्, इ जगमन्ता राममयम्' (सियाराममय सब जग) परक धर्म को सर्वसुलभ बनाया है। रामदास का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चरित्र आदर्श है। वह अपने चरित्र-बल से 'मालपल्लि' को 'मुनिपल्लि' (मुनियों की बस्ती) बनाता है।

भक्ति और प्रेम जब इन्द्रियानुभव से विरत होकर, आत्मार्थ की ओर उमुख होते हैं तो आत्मानन्द की अनुभूति होती है। श्रीमद्भागवत में प्रतिपादित इस परमार्थ तत्व को 'मालपल्लि' में ज्योति और अप्पादास के चरित्रों द्वारा अभिव्यक्त किया गया है।

धर्माजित सम्पत्ति सुकृत में ही व्ययित होती है और पापार्जित परपीड़न में। इसीलिए चौधरय्या का क्रोध तथा लोभ आत्मनाश का कारण बनता है और वेंकटदास का त्याग और सेवाभाव धर्म-विजय का।

वेंकटदास का चरित्र अत्यन्त विलक्षण है। जगत की व्यवस्था एवं अत्याचारों से असंतुष्ट होकर वह भगवान के अस्तित्व में ही सन्देह प्रकट करने लगता है और वर्तमान व्यवस्था को बदल देने के लिए आत्मबलिदान कर देता है। उसका कार्यक्रम सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक नूतन अध्याय जोड़ता है।

इस उपन्यास में वर्णित सुधार-केन्द्र, जेल, अदालत, पाठशाला, खादी, असहयोग, धार्मिक लूटखसोट, स्वराज्यान्दोलन, अहिंसा आदि विषयों से सम्बद्ध अनेक विवरणों द्वारा 'मालपल्लि' सचमुच समकालीन समाज का प्रतिबिम्ब बना हुआ है। मालपल्लि के प्रत्येक पृष्ठ में, भाषा में, भावों में तथा रचना-शिल्प में नव जीवन की झांकियाँ प्रस्तुत की गई हैं।

आंध्र के ग्रामीण जीवन का जीता-जागता चित्र प्रस्तुत करते हुए इस उपन्यास ने आदर्श समाज की स्थापना की ओर इंगित किया है और आंध्र जनता को तद्विषयक जागरूकता प्रदान कर अभीष्ट कार्य-पूर्ति की दिशा में अग्रसर कर, अपने दायित्व को निभाया है।

विश्वदाता काशीनाथुनि नागेश्वर राव पन्तुलु के शब्दों में 'तेलुगु शब्द तेलुगु देश, तेलुगु साहित्य, तेलुगु हृदय, तेलुगु संकल्प आदि ने 'मालपल्लि' को अनिर्वचनीय प्रतिभा प्रदान की है।' आन्ध्र के उपन्यास-साहित्य में 'मालपल्लि' का अप्रतिम स्थान है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु का प्रसिद्ध नाटक : श्रीकृष्ण तुलाभारमु

आधुनिक तेलुगु नाटक के पूर्वरूप यक्षगान, वीथिभागवतम् आदि हैं। अन्य सभी भारतीय भाषाओं की भाँति तेलुगु भाषा में आधुनिक नाटक साहित्य का प्रारंभ उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध से हुआ। प्रथम उत्थानकाल की रचनाओं पर संस्कृत तथा अंग्रेजी के नाटकों का तथा अभिनय पर पारसी नाटक मंडलियों का प्रभाव परिलक्षित होता है। सन् 1880 के लगभग धारवाड से आकर महाराष्ट्र की कुछ नाटक कंपनियों ने आंध्र के कई नगरों और गाँवों में नवीन पद्धति पर नाटकों का अर्थात् लोक नाटकों से भिन्न, अभिनय किया था। इन नाटकों के अभिनय द्वारा आन्ध्र प्रान्त में नाटक-रचना तथा प्रदर्शन की धूम मच गई। इसका सुफल यह रहा कि नाटक रचना के साथ-साथ अभिनय को भी समान रूप से प्रधानता मिली। इसी प्रकार आन्ध्र के नाटक पाठ्य होने के साथ-साथ अभिनेय भी रहे हैं। इन अभिनेय नाटकों में पद्यों और गीतों की भरमार रहती थी।

प्रथम उत्थानकाल के इन नाटकों में पौराणिक नाटकों की संख्या अधिक है। पौराणिक कथानकों से मानव मन के धार्मिक भाव को सन्तुष्टि मिलती है। आन्ध्र देश में प्रसिद्धि प्राप्त पौराणिक नाटकों में से पादुकापट्टाभिषेकमु, गयोपाख्यानमु, पारिजातापहरणमु, श्रीकृष्ण तुलाभारमु, हरिश्चन्द्र, पांडव उद्योग विजयमु आदि मुख्य हैं।

पारिजातापहरण की कथा हरिवंश, महाभागवत, विष्णुपुराण आदि ग्रन्थों मे पायी जाती है जिनमें सत्यभामा को मनाने के लिए श्रीकृष्ण का स्वर्ग की राजधानी अमरावती पर चढ़ाई करना तथा इन्द्र को हराकर, पारिजातवृक्ष को लाकर सत्यभामा के उपवन में रोपने का इतिवृत्त है। इस कथा में प्रणय की विजय तथा श्रीकृष्ण का सत्यभामा पर अपार प्रेम परिलक्षित होता है। इसी कथा के उत्तरार्ध में नारदमुनि पुण्यकव्रत द्वारा सत्यभामा के गर्व को दूर कर अहंकार युक्त प्रेम की अपेक्षा अहंकार रहित भक्ति की महत्ता स्थापित करते हैं। श्रीकृष्णदेवराय के अष्टदिग्गजों में प्रमुख नंदितिम्मन्न नामक महाकवि ने इसी इतिवृत्त का आधार लेकर पारिजातापहरणमु नामक उत्कृष्ट महाकाव्य की रचना की है, जिसका यह पद्य आन्ध्र के साहित्य-रसिकों की जिह्वा पर है।

"जलजातवासादि सुरपूजा भासनंबै तनर्चु
लतांतायुधु कन्न तंड्रि सिरमच्चोवामपादमुन्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तोलगंद्रोचेंलतांगि यट्लयगु नाथुल्वेरमुसेयये
रलुकंजेदिनयट्टि कांतलुचित व्यापारमूल्नेर्तुरे ।"

अर्थात् ब्रह्मा इन्द्र आदि देवताओं की पूजाओं के पात्र तथा कामदेव के पिता के सिर को उस लतांगी (सत्यभामा) ने बाएँ पैर से हटा दिया। ठीक है, नायक की धृष्टता पर अधिक रुष्ट बनी कान्ताएँ उचित-अनुचित का क्या ध्यान रखेंगी ?

इस पौराणिक कथानक को लेकर तेलुगु में कई नाटकों की रचना हुई है। तेलुगु के लोक नाटकों में 'भामाकलापमु' नामक यक्षगान तो सत्यभामा को नायिका बनाकर ही रचा गया है। लोक नाटक का यह रूप आन्ध्र देश में विशेष लोकप्रिय है तथा कूचिपुडि नृत्य का प्रधान विषय है। श्रीपानुगंटि लक्ष्मीनरसिंहाराव जी का 'पारिजातापहरणमु', मुत्तुराजु सुब्बाराव जी का 'श्रीकृष्ण तुलाभारमु', डी. लक्ष्मीनरसिंहम् जी का 'श्रीकृष्ण तुलाभारमु' अथवा 'तुलसी-माहात्म्यमु' आदि इसी कथा पर आधारित नाटक हैं। अन्तिम दो नाटकों में श्री मुत्तुराजु सुब्बाराव का नाटक अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय रहा है और यह नाटक आन्ध्र देश में सैकड़ों बार मंचित हो चुका है। इसका इतिवृत्त इस प्रकार है :—

पारिजात वृक्ष के अपहृत होने की अपेक्षा सत्यभामा की गर्व भरी चितवनों से व्याकुल बनी शचीदेवी की ग्लानि को दूर करने का आश्वासन देकर और श्रीकृष्ण परमात्मा को प्रणय की अपेक्षा भक्ति द्वारा उपलभ्य सिद्ध करने की इच्छा लेकर नारद भूलोक पधारते हैं।

भूलोक में सत्या और श्रीकृष्ण के वन-विहार करते समय रुक्मिणी वहाँ आती हैं और श्रीकृष्ण को अपने जन्मदिन के उपलक्ष्य में आयोजित प्रीतिभोज में आने के लिए निमंत्रित करती हैं। किन्तु कृष्ण सत्या के आदेश के बिना जाना नहीं चाहते। भगवान की चरण-धूलि की प्यासी रुक्मिणी सत्या से अनुनय करती हैं कि नित्यप्रति जो तुम्हारा सुख है, उसका एक दिन के लिए हमें भागी बनने दो। सत्यभामा जवाब देती है कि यदि सौत अच्छी दिलवाली है तो धन-धान्य दिलाती है किन्तु पति का स्नेह नहीं। किसी और वस्तु को बाँट लिया जा सकता है, किन्तु पति के प्रणय को तो नहीं।

ऐसे अवसर पर जबकि सपत्नी-कलह छिड़ा हुआ था, नारद जी वहाँ पधारते हैं तो श्रीकृष्ण इस धर्म संकट से बचने के लिए नारद जी से न्याय-मार्ग बताने का अनुरोध करते हैं। इसपर सत्यभामा अधिक रुष्ट हो जाती है कि पति-पत्नी के मामले में तीसरे से क्या मतलब ? यह कहती हुई वह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वहाँ से चली जाती है कि मुझे नहीं चाहता, उससे मेरा क्या ? तदनंतर भक्तवत्सल भगवान रुक्मिणी के घर जाते हैं। माधव पर रुष्ट होकर रूपगर्विता और प्रणय कुपिता सत्या यह समाचार पाकर कोपगृह में प्रवेश करती है। उसके मन में पल भर के लिए शंका पैदा होती है कि क्या प्रणय के मेरे मार्ग की अपेक्षा रुक्मिणी का भक्तिमार्ग ही श्रेष्ठ है। हूँ, नहीं, कदापि नहीं हो सकता। स्वाधीनपतिका नायिका तो पति के प्रेम में लेशमात्र भी भंग पड़ने पर व्याकुल हो उठती है। कुसुम-कोमल नारियों के जीवन-कुसुम का आधार प्रणय ही है ना ?

वह सोचती है कि अगर कोई महात्मा श्रीकृष्ण को केवल अपने प्रणय-पाश में बाँध रखने के उद्देश्य से कोई वशीकरण मंत्र बता दे तो कितना अच्छा हो। उस अवसर पर नारद जी वहाँ आते हैं। सत्या उनके सामने अपना दुखड़ा कह सुनाती है। वह कहती है —

धन धान्यादिकमुल धवु
डोनगूरिचि मरल गोनिन नोर्वगवच्चुन्
मनसिच्चि मरलगैकोन
मननगुने मानवतिकि मौनिवरेण्या !

अर्थात् हे मुनिवर ! यदि प्रियतम धन-धान्य आदि देकर फिर वापिस ले ले तो सहा जा सकता है। पर दिल देकर फिर मुँह मोड़ ले तो मानिनी स्त्री जीवित कैसे रह सकेगी ?

इसलिए कोई ऐसा उपाय बताइये कि श्रीकृष्ण मेरा और मेरा ही आज्ञानुवर्ती बनकर रहे।

वह नारद जी से पुण्यकव्रत का उपदेश ग्रहण करती है। शास्त्र विधान के अनुसार किसी पुण्यात्मा के हाथों भर्तुदान कर तदनंतर पति के वजन का सोना-चाँदी देकर पुनः पति को प्राप्त किया जा सकता है। इस व्रत के अनुष्ठान में पति सदा उसी पत्नी के वशीकृत होकर रहेगा। श्रीकृष्ण के प्रणय-धन को प्राप्त करने की उत्कृष्ट अभिलाषा से सत्यभामा इस व्रत के लिए तैयार हो जाती है।

रुक्मिणी के घर से लौटकर श्रीकृष्ण सत्या के कोपगृह में प्रवेश कर उसे मनाने के प्रयत्न करते हैं। अंत में वह जो भी चाहे कर देना का वचन देते हैं। सत्या भर्तृ दान की बात कहती है तो चौंक कर कहते हैं—

असदृशरागमोप्प भवदंघ्रि सरोजयुगंबुगोल्तु ना-
कसुवुलुगलुगुनंदनुक नंचुवचिंचियु निट्टुलन्यु कै-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वीसमोर्नरिप जूचेदवु भामरो ! नापयै ब्रेममासेनो
विसुगु जनिचेनो मदिकि वेक्कसमय्येनो ना चरित्रमुल् ।

अर्थात् 'जीवन पर्यन्त असदृश प्रेम के साथ आपके चरण-कमलों की सेवा करूँगी' यह कहकर भी तुम मुझे दूसरे के वश कर देना चाहती हो । यह कैसा न्याय है ? क्या मुझपर तुम्हारा प्रेम विलुप्त हो गया अथवा मुझसे ऊब गयी हो अथवा मेरी करतूतों से उकता गयी हो ?

सत्या के समझाने पर कि दान देने के दूसरे ही क्षण वह अपने प्राणप्रिय को वापिस ग्रहण कर लेगी, श्रीकृष्ण आशंका प्रकट करते हैं—

त्रासुन नन्नुदूपगल द्रव्यमु लेकय पुण्यकव्रतो-
पासनकुंगडंग नेडब्राटुनेपम्मुन नीकु नाकुनु
न्मोसमुवच्चुगान मुनुमुन्दुगनेम्मदि सुंत योजनं
जेसि कडंगु मीव्रतमु जेय सरोरुहपत्रलोचना !

अर्थात् तुला में मुझे तौलने के धन के बिना पुण्यकव्रत करोगी तो वियोग के मिस हम दोनों को धोखा खाना होगा । इसलिए पहले ही से सोच-विचार कर यह व्रत करो ।

सत्या को गर्व था कि मेरे पास एक क्या करोड़ों कृष्णों को तौलने भर का सोना-चाँदी है । वह अन्ततः श्रीकृष्ण को मना ही लेती है ।

दूसरे दिन यथा नियम पुण्यकव्रत संपन्न होता है । सत्यभामा श्रीकृष्ण के साथ पारिजात वृक्ष को भी नारद जी के हाथों दान कर देती है । अब श्रीकृष्ण के वजन भर का सोना-चाँदी ? जिस श्रीकृष्ण को सत्या बहुत हल्का समझती है, उसे तौलने के लिए उस घर भर का सोना-चाँदी अपर्याप्त सिद्ध होता है । पलड़ा तिल भर भी नहीं हिलता । सत्या बहुत चिंतित हो उठती है ।

चिरकाल परिचयंबुन
बरुवोक्किंतयुनुलेडु प्राणेश्वरुडं-
चरमरवीड़ि दानंबिड
गरमुम बरुवय्येनिक गार्यंबेदियो ।

अर्थात् चिरकाल के परिचय से यह समझकर कि प्राणनायक का कोई वजन नहीं है, निस्संकोच भाव से दान कर दिया । अब वे अत्यधिक भारी लग रहे हैं । हाय ! अब मैं क्या करूँ ?

तब नारदजी की अनुमति लेकर धनेतर वस्तुओं से श्रीकृष्ण को तौलने का निष्फल प्रयत्न करती है । नारदजी कहते हैं ।

अंडपिंड ब्रह्मांड संहतुलनेल्ल
गुप्तगति बोज्जलो नुंचुकोन्नयट्टि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तोयजाक्षुनितोदुल दूपगलवे
धनमुल धनेतरम्मुल दरलनयना !

अर्थात् अंडपिंड ब्रह्मांड को गुप्त रीति से अपने उदर में समाये रखनेवाले परमात्मा को धन और धनेतर पदार्थों से कहीं तोल सकोगी ! व्यर्थ है तुम्हारा यह प्रयास।

सत्या नारद पर रुष्ट होती है कि यह बात पहले ही क्यों नहीं बतायी ? मुझे धोखे में डाल यह नाटक रचा गया। हाय री ! अब मैं क्या करूँ ? वह नारद से अनुनय करती है कि और किसी अन्य उपाय से प्राणप्रिय को प्राप्त करने की अनुमति दें। नारद नहीं मानते। वे कहते हैं कि मुझे तो वही वस्तु चाहिये जो श्रीकृष्ण को तोल सके। अन्यथा मैं उन्हें ले जाकर किसी बाजार में बेच दूंगा। सत्या को और भी व्यथाकुल करने के लिए नारद जी श्रीकृष्ण से सेवाकार्य करवाते हैं। सत्या श्रीकृष्ण से बोलना चाहती है तो वे इन्हें बोलने तक नहीं देते।

श्रीकृष्ण को संग लेकर नारद के चले जाने के बाद सत्या की सपत्नियाँ वहाँ आती हैं और उसे खरी-खोटी सुनाती हैं। वे सब मिलकर नारद जी के पीछे-पीछे चल पड़ती हैं। नारद जी उन्हें खूब घुमाकर अंत में उपदेश देते हैं कि श्रीकृष्ण भक्तों के वशंवद हैं। वे भक्तों के हैं और भक्ति उन्हें वश में करने का एकमात्र महामंत्र है।

अब सत्या की समझ में आता है कि रुक्मिणी का मार्ग ही सच्चा है। जब नारद जी बताते हैं कि भक्ति भाव से रुक्मिणी तिनका भर डाल देने से श्रीकृष्ण तुल जायेंगे तो सत्या श्रीकृष्ण के पैरों पड़ रोती है।

नी माहात्म्य मोकितयुंगनक यं धीभूतचेतस्कनै
सामान्यंबले नेंचि चेसिनदि दोषंबंचु गन्गोंटि ने-
डामूलाग्रमु गर्वमेल्ल मटुमायंबय्ये गोपालक्रृ
ष्णा ! मन्निपुमुनीदु सत्यनिकनैनन् सानुरागंबुगान्।

अर्थात् तुम्हारे माहात्म्य को बिलकुल न जानकर अंधी बन, सामान्य स्त्री के समान जो कुछ किया था वह सारा दोष ही दोष है। आज मेरा सारा गर्व चूर-चूर हो गया है। अब सानुराग हो अपनी सत्या को क्षमा कर दो।

उस बेचारी के लिए रुक्मिणी के सामने आँचल पसारने के सिवा और कोई मार्ग नहीं रह जाता। जिस रुक्मिणी की प्रार्थना को ठुकराया था, आज फिर उसी के सामने जाऊँ तो वह क्या कहेगी ? कैसे-कैसे ताने देगी ? दूसरों के कहने पर मन मारकर रुक्मिणी के पास पहुँचती है। कहती है कि तीर्थ जल में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहते हुए भी मछली तीर्थ के माहात्म्य से जिस प्रकार अनभिज्ञ रहती है, उसी प्रकार मैं भी प्रियतम परमात्मा के महत्व को समझ नहीं सकी। रुक्मिणी तुलसीदल ले पति के पास चल पड़ती है। श्रीकृष्ण की प्रदक्षिणा और नमस्कार कर तथा उनकी अनुमति लेकर वह तुलसीदल पलड़े में डाल देती है तो पलड़ा भारी बन जाता है। अब श्रीकृष्ण रुक्मिणी के हो जाते हैं। सत्या की समझ में आता है कि—

प्रणयमे भक्तिकंटे निजवल्लभुदन्पगमेटिसाधनं
बनि तलपोयुनेनु भवदाचरणंबुन भवितयुत्तमं
बनि कनुगोंटिन ....

अर्थात् भक्ति की अपेक्षा प्रणय ही अपने प्रियतम को संतुष्ट करने का उत्कृष्ट साधन माननेवाली मैं आपके आचरण से समझ गयी हूँ कि भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है।

वह भगवान के पैर पड़ प्रार्थना करती है कि मुझे रुक्मिणी के समान अपनी भक्ति प्रदान कीजिए।

इस प्रकार नारद जी सत्यभामा के अहंकार को दूर कर भक्ति की महिमा को सिद्ध करते हैं और पारिजात वृक्ष ले जाकर शची देवी के दु:ख को दूर कर देते हैं। इस नाटक का मुख्य उद्देश्य जैसे प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में नारद जी के वचनों के अनुसार भक्ति की महिमा को स्थापित करना है। लेखक को अपने उद्देश्य की पूर्ति में पूर्णत: सफलता मिली है।

इस नाटक का यह गीत काफी प्रसिद्ध हुआ है। स्वाधीना-पतिका सत्या का विश्वास है कि सत्यापति कभी अपने आदेश को टाल नहीं सकते।

मीरजालगलडा नायानति
व्रतविधानमुनकु सत्यापति

अर्थात् पुण्यक व्रत विधान को संपन्न करने के लिए पति मेरे आदेश को कभी टाल नहीं सकते।

यह नाटक तीन अंकों में विभक्त है। इसमें कार्य की अवस्थाओं तथा अर्थ प्रकृतियों का सफल निर्वाह हुआ है। चरित्र-चित्रण के दृष्टिकोण से नारद, श्रीकृष्ण, सत्यभामा और रुक्मिणी के चरित्रों का सुन्दर अंकन हुआ है। रंगमंचीय नाटक होने से सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक तत्वों का चित्रण तो नहीं हुआ है लेकिन स्थूल रूप से लेखक के उद्देश्य की पूर्ति में चरित्र-चित्रण सफल बन पड़ा है। रूप गर्विता सत्यभामा को ही इस नाटक की नायिका मान सकते हैं, क्योंकि उसीका गर्व-भंजन तथा उसका भक्ति की महिमा को मान लेना ही इस

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाटक का कार्य अथवा फल है। संकलनत्रय, सजीव संवाद योजना आदि दृष्टियों से भी नाटक सफल बन पड़ा है। नाटक की भाषा परिष्कृत और मंजी हुई है। तेलुगु के प्राध्यापक द्वारा रचे जाने के कारण 'श्रीकृष्ण तुलाभारमु' सफल रंगमंचीय नाटक होने के साथ-साथ सुपाठ्य भी है। इस प्रकार तेलुगु के रंगमंचीय नाटकों में 'श्रीकृष्ण तुलाभारमु' का विशिष्ट स्थान है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत तेलुगु रचना

विश्वनाथ मध्याक्करलु

तेलुगु साहित्य–क्षेत्र में शतक रचना की प्रक्रिया, संस्कृत की ही देन है। तथापि तेलुगु-साहित्य में शतक साहित्य, अपनी मौलिक उद्भावनाओं को लिये, विशिष्ट स्थान का अधिकारी बना हुआ है। समग्र संस्कृत साहित्य में सौ-डेढ़-सौ शतकों का ही उल्लेख मिलता है तो तेलुगु में लगभग तीन हज़ार शतकों की रचना हुई है। दक्षिण की इतर भाषाओं में इतनी संख्या में शतक है नहीं, अपितु उन भाषा साहित्यों में इस रचना-प्रक्रिया का कोई विशेष महत्व नहीं है। तेलुगु की साहित्यिक प्रक्रियाओं में "शतक" अपनी विशिष्टताओं को लिये लेखक और पाठक को अनवरत आकर्षित किये हुए है।

तेलुगु शतक रचना की विशिष्टताओं में संख्या नियम, मुकुट नियम, वृत्त नियम, रस नियम आदि मुख्य हैं। प्रारंभ में भक्तिरस की अभिव्यक्ति के लिए शतकों की रचना हुई थी और वह भी चंपकमाला, उत्पलमाला आदि छन्दों में। भक्तिरस पूर्ण इन छन्दों की संख्या, अष्टोत्तरशती के अनुरूप 108 होती थी। उसी रूढि के अनुसार परवर्ती शतकों में एक सौ के ऊपर आठ पद्य लिखे जाने लगे। इस प्रकार तेलुगु शतक में एक सौ की जगह 108 पद्य होते हैं।

मुकुट :

संस्कृत के शतकों में, प्रत्येक छन्द के अन्त में, संबोधनात्मक विशेषण का कोई नियम नहीं है। किन्तु, तेलुगु के शतक में—शतक के प्रत्येक छन्द में—एक, और एक ही संबोधनात्मक विशेषण का होना, आवश्यक माना गया। इस संबोधनात्मक विशेषण को 'मुकुट' कहा जाता है। इस नियम का पालन करने के लिए समग्र शतक में प्रायः एक ही प्रकार के छन्द का प्रयोग करना पड़ता है। अतः एक शतक के पद्य प्रायः एक प्रकार के छन्द में लिखे जाते हैं। यद्यपि शतक को मुक्तक कविता के अन्तर्गत मान सकते हैं, फिर भी एक शतक में एक ही रस की निष्पत्ति समीचीन मानी गयी है। इस प्रकार तेलुगु का शतक साहित्य अपने विलक्षण नियमों से युक्त हो कर, समग्र भारतीय साहित्य में विशिष्ट स्थान का अधिकारी बना हुआ है।

शतक में न कोई संबद्ध कथा होती है, न किसी वर्णन का प्राधान्य ही। शतक के सभी पद्य एक तरह से मुक्तक ही होते हैं। मुक्तक होने पर भी किसी एक विशिष्ट रस से संबद्ध होने के कारण, सर्वत्र एक विशेष प्रकार की एकसूत्रता प्रतिभासित होती है। यह आत्माश्रयी गीतिकाव्य के समान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है, जिसमें कवि की आत्माभिव्यक्ति की ही प्रधानता रहती है। 'भावावेग की प्रबल अभिव्यक्ति' ही गीतिकाव्य का प्रमुख लक्षण है। इसमें कवि के हृदय की धड़कन और उसकी आत्मा का स्पन्दन स्पष्ट सुनायी पड़ता है। तेलुगु के प्रायः सभी शतकों को गीतिकाव्य के अन्तर्गत माना जा सकता है।

प्रथम शतक :

शतक साहित्य के इतिहास में शतक साहित्य की विधा अतिप्राचीन काल से विद्यमान है। सब से प्राचीन शतक 'शिवतत्वसारशतक' माना जाता है, जिसके रचयिता मल्लिकार्जुन पंडिताराध्य 12 वीं शती के उत्तरार्द्ध के थे। आदि कवि नन्नयभट्ट और उनके ईषत परवर्ती शैव कवि नन्नचोड़ कृत प्रबन्धकाव्यों में तीन-चार पद्य ऐसे मिलते हैं, जिन पर शतक रचना के नियम लागू हो सकते हैं। किन्तु पंडिताराध्य का 'शिवतत्वसार' ही प्रथम और समग्र शतक है। तत्पश्चात् लिखे गये शतक तीन हजार से अधिक हैं।

तेलुगु साहित्य में प्राप्त शतकों के, मुख्य रूप से भक्तिप्रधान, शृंगार प्रधान, नीति प्रधान, वेदान्त प्रतिबोधक, हास्य व्यंग्य प्रधान आदि विभाग कर सकते हैं। भक्तिप्रधान शतकों में शिवभक्ति प्रतिबोधक और विष्णुभक्ति प्रतिबोधक मुख्य हैं।

आधुनिक युग में :

आधुनिक युग में तेलुगु भाषा में बीसियों शतकों की रचना हुई है और हो रही है। इस वर्ष केंद्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत तेलुगु रचना है 'विश्वनाथ मध्याक्करलु'। यह कवि-सम्राट श्री विश्वनाथ सत्यनारायण कृत दस शतकों का समाहार स्वरूप है जो पहले 'भारती' और 'नवभारती' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था और तदनन्तर पुस्तक के रूप में।

श्री विश्वनाथ सत्यनारायण तेलुगु के आधुनिक काल के अत्यन्त प्रतिभा-संपन्न लेखक हैं। तेलुगु देश, तेलुगु भाषा और तेलुगु वाङ्मय का सौभाग्य है कि ऐसे सर्वतोमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार का जन्म यहाँ हुआ, जिसकी लेखनी से साहित्य का कोना-कोना आलोकित हो उठा है। कवि के रूप में, गीतकार के रूप में, उपन्यासकार के रूप में, कहानीकार के रूप में और आलोचक के रूप में आधुनिक तेलुगु साहित्य में श्री सत्यनारायण जी का महत्वपूर्ण स्थान है। आज अपने 69 वें वर्ष में भी वे लगातार रचना कार्य में दत्तचित्त हैं। श्री विश्वनाथ सत्यनारायण की समर्थ लेखनी से जो उत्कृष्ट रचनाएँ अद्भुत हुई हैं, उनपर आन्ध्र साहित्य ही नहीं, समग्र भारतीय साहित्य गर्व कर सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'ध्यावकर' तेलुगु का एक विशिष्ट छन्द है। इस छन्द के प्रत्येक चरण में इन्द्रगण एक सूर्यगण, दो इन्द्रगण एक सूर्यगण इस प्रकार के छे गण हैं और पाँचवें गण के प्रथम अक्षर पर यति होती है। इस छंद में लंबे संस्कृत समासों की अपेक्षा छोटे-छोटे पद, देशी शब्द ही अधिक फबतें। इस छन्द का प्रयोग, तेलुगु काव्य साहित्य में वहुत कम हुआ है। आदि कवि नन्नयभट्ट (11 वीं शती) के पूर्ववर्ती और समकालीन कुछ शिलालेखों में इस छन्द का यत्र-तत्र प्रयोग मिलता है। उनके बाद एर्राप्रगड़ (14 वीं शती) ने ही इस छन्द का प्रयोग किया है। एर्राप्रगड़ ने नन्नय द्वारा अधूरे छोड़े गये आरण्य पर्व की पूर्ति की थी। एर्राप्रगड़ के बाद किसी कवि ने इस छन्द का प्रयोग नहीं किया है। इस प्रकार अल्प प्रयुक्त और विस्मृत (अप्रचलित) छन्द को लेकर श्री विश्वनाथ ने एक हजार से अधिक पद्यों की रचना की है, जो उनकी उत्कट प्रतिभा तथा हठीले स्वभाव का ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत करता है।

ग्रन्थ परिचय :

इस ग्रन्थ में दस शतक हैं। रचना के कालक्रम से उनके नाम इस प्रकार है :—पुन्नंगि शतकमु, कुलस्वामी शतकमु, शेषगिरि शतकमु, श्रीगिरि शतकमु, श्री कालहस्ति शतकमु, भद्रगिरि शतकमु, द्राक्षाराम शतकमु, नेकरुकल्लु शतकमु, नंदभूरु शतकमु और वेमुलवाड शतकमु। उपरोक्त दस नाम तेलुगु देश के सुप्रसिद्ध क्षेत्र हैं। इन दस शतकों में कवि ने इन दस क्षेत्रों में विराजमान देवताओं की कुछ शिव परक और कुछ विष्णु परक स्तुति की है और अपना आत्म निवेदन किया है। कहीं विष्णु को और कहीं शिव को संबोधित करने पर भी, इन रचनाओं में, आन्ध्रों की विशिष्ट मनः प्रवृत्ति 'हरिहर अद्वैत तत्व' का सुन्दर प्रतिपादन किया गया है। यथा—

"एव्वरो येव्वरो ययिन यी दैन्यमेसगु कोरिकलु
रुव्वुटलोनर्थमोप्पु विश्वेश्वरुंडुनु नीवु
नव्वलमीयन्त मीरु चेदुकोनवुवारु नन्नु
नेव्वगल् कूर्पक भद्रगिरि पुण्यनिलय ! श्रीराम ! (भद्रगिरि—3)

यदि कोई अन्य अनामक होता तो दैन्यदायी इच्छाओं के जाल में फँसाना संगत रहता, किन्तु विश्वेश्वर (शिव) और तुम (विष्णु) दोनों समान हो और मोक्ष देने में समर्थ हो। अतः लौकिक इच्छाओं से परे रख, मुझे तार दो।

इन शतकों में कवि ने स्थान-स्थान पर इस अद्वैत तत्व का प्रतिपादन किया है। कवि की दृष्टि में हरि और हर में तत्वतः कोई भेद नहीं है। उमापति और रमापति दोनों रूप से आराध्य हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आत्मचरित की झलक :

आत्माश्रयी काव्य होने से इन शतकों में आत्मचरित संबन्धी उद्गारों का प्राधान्य है। कवि ने अपने प्रियतम भगवान के समक्ष अपने हृदय को खोल कर रख दिया है।

"ना गुंडेतीसि नी पादमूलंबुनं बेट्टुमनुमु
मागुवारिन श्रद्ध सुन्त मसलिन मार्पेरबिलुमु
ऊगुलाडितिनेनि वन्दजन्मलिटोग्गकु ! नीदु
जोगिनि नेनु ! श्रीशैल मल्लिकार्जुन महालिंग ! (श्रीगिरि 6)

कहो तो हृदय निकाल कर चरणों में रख दूंगा। यदि तुम्हारी सेवा अथवा सुमिरन में लापरवाही बरती तो नाम ही बदल दो। चंचल मन वाला बना तो सैकड़ों जन्मों तक मुँह मत दिखाओ। हे भगवान ! मैं तो तुम्हारा 'जोगी' हूँ।

कवि में ज्ञानाश्रयी भक्ति की अपेक्षा आत्म-समर्पण मूलक भक्ति भावना ही प्रबल दीखती है। सुदीर्घ आत्मचिन्तन के परिणाम स्वरूप कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि पाप-पुण्य का लेखा-जोखा करने से मेरा उद्धार न होने का, केवल उस करुणामय की कृपाकोर ही मुझे भवसागर से मुक्त कर देगी। मेरे पापी जीवन में पुण्य के विचारों को ढूँढ निकालना ऐसा है, मानों चावलों में छोटे-छोटे कंकड़ चुन रहे हों। जीवन में ऐसे क्षण अत्यल्प हैं, जब कि मन भगवान के स्मरण में रहा हो।

निमुसंबुलवि वेनियंदु ना बुद्धि नी मीद निलचि
भ्रमियिपकुंडुनो यव्वि चाल स्वल्पपु संख्यकलवि
तममु तक्किनवि यिव्वि वेलुगन्न धैर्यमु काक
सुमनस्स्वरूप ! श्री शैलमल्लिकार्जुन महालिंग ! (श्रीगिरि 30)

वे क्षण जिनमें मेरी बुद्धि निश्चल रूप से तुम पर लग्न रही हो, संख्या में बहुत कम हैं। वे अल्प संख्या वाले क्षण ही प्रकाशमय हैं तो शेष तो अंधकारमय ही हैं न।

इस आत्म-ग्लानि और वैराग्य ने कवि को इस निष्कर्ष पर पहुँचा दिया कि शरणागति के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है, भवसागर को पार कर जाने का।

"नी कन्न बादरसम्मु नयमु दोन्निय भद्रपरचि
पोकंड नीवच्चु बिय्यमंदु गप्पुरमुनु नारि
पोकुंड निल्पगावच्चु मदिनुंडि पोकुंड निन्नु
नाकिड रादु श्रीकालहस्तीश्वरा ! महादेव ! (श्रीकालहस्ति 18)

तुम्हारी अपेक्षा पारद ही अच्छा है, जिसे दोने में सुस्थिर रखा जा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सकता है। चावलों में कर्पूर को अधिक देर तक रखा जा सकता है। लेकिन इस चंचल मन में तुम्हें सुस्थिर रूप से रख सकना मेरे बूते की बात नहीं है।

मन की अस्थिरता को कवि ने कितने सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है !

इस प्रकार कवि ने तरह-तरह से अपनी दीनता का निवेदन किया, हृदय खोल कर रख दिया और इस जंजाल से मुक्त कर देने की प्रार्थना की। कहीं-कहीं कवि ने व्याज-स्तुत्यात्मक उक्तियों में भगवान को उलाहने भी दिये हैं। एक स्थान पर कहते हैं कि एक दासी (कुब्जा) का और एक सुयोधन का उद्धार करके हे भगवान ! तुम घमंड़ मत करो। इस मेरे हृदय में हज़ार सुयोधन बैठे हुए हैं। इस अकेले पापी का उद्धार करो तो तुम्हारा बड़प्पन मानूं। यह महाकवि सूरदास की उक्ति 'पतितन कौ सरदार' से कितना भाव-साम्य रखता है।

एक और स्थान पर अपने आप को 'शनि' बतला कर, वे इस प्रकार कहते हैं—

सरियेदो सामेत चेप्पुदुरु सुमी शनि पट्टेनेनि
परगंग नेडेंड्लु तानु पट्टिन पदुनालुगेंड्लु
परमेश ! ननु स्वीकरिंचि यी पीड वदलिंचुकाम्मु
हरहरा ! नंदमूर्निलय ! विश्वेश्वरा कुलस्वामि ! (कुलस्वामि 13)

कहावत है कि शनि सात वर्ष तक पीड़ित करता है। किन्तु याद रखो कि मेरी पीड़ा उससे दुगुनी होगी। इसलिए मुझे यथाशीघ्र मुक्ति प्रदान कर, इस बला से मुक्त हो जाओ।

और भी,

पोत्तपिनाटि दैवंब ! मै मैलपोगुल चेदलु
चेत्तराल्लुलु चेर्चु नेन्नु पामुलु, चेप्पोत्तु बोय
चित्तम्मुनकु नच्चि मल्लेपू देने चिन्कुल कैत
हत्तदा नीकु श्रीकाल हस्तीश्वरा ! महादेव ! (श्रीकालहस्ति 10)

हे भगवान ! शरीर पर चिथड़े और कंकड़-धूल धारण करने वाले हाथी और साँप, जूते से सेवा करने वाले किरात की अपेक्षा मकरंद के छींटों के समान मधुर यह मेरी कविता तुम को क्यों कर पसंद नहीं आ रही है।

इस पद्य में कवि ने श्रीकालहस्ति की पौराणिक गाथा का संकेत किया है।

मानव की भोगापेक्षा की व्यर्थता का संकेत करते हुए कवि कहते हैं कि—

कोरि कबेलाकु मंदगा दोलिकोनि पोवुचुंड
दारि प्रक्कन युन्न पच्चिगड्डिपै दाराडु पसुल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तीरुगानुन्नदि जनुल भोगाश ! तेलिवि सर्वम्मु
चूर पुच्चेदवु श्रीशैलमल्लिकार्जुन महालिंग (श्रीगिरि 8)

मानव की सुख-भोग की इच्छा ऐसी है मानों वध-स्थान को लिये जाने वाले जानवर मार्ग में दीखने वाले घास खाने के लिए उतावला बन रहे हों। हे ईश्वर ! मनुष्य की बुद्धि को भ्रष्ट कर उसे तुम्हीं बिगाड़ देते हो।

एक स्थान पर तो कवि ने मनुष्य-जन्म की अपेक्षा पशु-जन्म को श्रेष्ठ बताया है।

इंतगा मनसु नी पैनि निल्वनि ईजन्म कंटे
वितयौ पशु जन्म चाल मेलनिर्पिचुनो स्वामी
कोंतयघमनुभविंचु नंतिय क्रोत्त पापमु
गुणितमुल् नेरदु भद्रगिरि पुण्यनिलय ! श्रीराम ! (भद्रगिरि 70)

तुम पर मन को स्थिर न कर सकने वाले इस जन्म की अपेक्षा पशु-जन्म अच्छा है। वह अपने पूर्व जन्म में किये पापों का भोग करता है, पर नये पाप नहीं करता। पर मनुष्य तो अपने पापों को बढ़ाता ही जाता है।

अन्ततः कवि ने अपनी कविता-पुत्री को भगवान के चरणों में यह कह कर समर्पित कर दिया है कि—

ना बिड्डु ई कैत, पापमिदिकूड नगजात, स्वामि
जाबालि मैत्रावरुणि मोदल् ऋषुल् संबंधमाड़
राबोरु नामाटमीद दीनिनि ग्रहिंपुमिदिये
सोबान कूड श्रीशैलमल्लिकार्जुन महालिंग ! (श्रीगिरि 77)

हे भगवान ! यह कविता मेरी पुत्री है। यह भी नगजाता (पर्वत पुत्री) है। जीवन के ऊबड़-खाबड़ से उत्पन्न हुई है। तुम से विवाह-संबंध की बातचीत करने के लिए जाबालि, मैत्रावरुणि आदि नहीं आते। मेरी बात मान कर, इसे स्वीकार कर लो। यह मेरा कविता-गान ही विवाह-गीत है।

सम्प्रति विश्वनाथ ज्ञानी भक्त हैं। इस ज्ञानी भक्त के हृदय से निकली कविता में गीति काव्य की वह स्निग्ध छटा है जो पाठक को अपनी पवित्रता में साराबोर कर देती है। मृदु मधुर शैली, विश्व जनीन भावनाएँ, भव पीड़ित आत्मा का आक्रोश आदि इस काव्य को अवश्य पठनीय बना देते हैं।

प्रो. लक्ष्मीरंजनम जी के शब्दों में यह काव्य "भौतिक सभ्यता के विजय गर्व से अंधीभूत समकालीन समाज के लिए दिव्य अंजन के सदृश है।....ये पद्य धर्म के अभिमुख कवि की जीवन-लतिका पर पुष्पित दिव्य मंदार प्रसून हैं।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेलुगु का गौरव ग्रन्थ : कविकर्ण-रसायन

आन्ध्र के प्रबन्ध-काव्यों में यद्यपि संस्कृत के सर्गबन्ध महाकाव्यों के लक्षणों का निर्वाह किया जाता है तथापि उनकी अपनी विशेषता वर्णनों की प्रचुरता है। प्रबन्धकाव्यों में कथाकथन की अपेक्षा कथा प्रसंग में आए पुर, सिन्धु, नग, ऋतु, शशि आदि अष्टादश वर्णनों को ही महत्व दिया जाता है। प्राचीन पुराणों में से किसी कथा को आलम्बन रूप में ग्रहण कर कविजन अपने वर्णन-चमत्कार से, शृंगार रसप्रधान तथा आलंकारिक शैली में सुन्दर प्रबन्धकाव्य की रचना करते थे। तेलुगु काव्यों में आमुक्तमाल्यदा, कविकर्णरसायन, वसुचरित्र, मनुचरित्र आदि उल्लेखनीय हैं।

'कविकर्णरसायन' नामक प्रबन्धकाव्य रसिक सहृदय कानों के लिए रसायन ही है। इसके कर्ता संकुसाल नृसिंह कवि हैं। इनके जीवन, माता-पिता आदि के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। कवि ने अपने काव्य में केवल अपने गुरु का नामोल्लेख किया है। उसके आधार पर यह माना जाता है कि ये विजयनगर के सम्राट श्रीकृष्णदेवराय के समकालीन थे। यह तेलुगु की विशिष्ट साहित्य की कृति है। तेलुगु साहित्य के इतिहास में 16 वीं शताब्दी के बाद प्रबन्ध युग का आरंभ हुआ और यह परंपरा उन्नीसवीं शती के पूर्वार्ध तक चलती रही। समय और वस्तु दोनों दृष्टियों से प्रबन्ध युग को रीतिकाल के समकक्ष माना जाता सकता है।

महाभारत तथा विष्णु पुराणों में मान्धाता नामक महीपति की कथा का वर्णन है। युवनाश्व के पुत्र मान्धाता कृतयुग के राजाओं के सिरमौर थे। वे सूर्यवंशी थे और महाप्रतापी थे। नृसिंह कवि ने 'कविकर्णरसायन' में मान्धाता के जन्म से लेकर उनकी मोक्ष-प्राप्ति तक की कथा का सरस वर्णन किया है।

नृसिंह कवि ने अपने काव्य के प्रथम सर्ग में साकेत नागर का विस्तार से वर्णन करने के बाद, राजा युवनाश्व के इन्द्रयाग, मान्धाता का जन्म और मान्धाता के राजतिलक का वर्णन किया है। द्वितीय सर्ग में युवनाश्व के मान्धाता को राजनीति का उपदेश देने के बाद कवि ने शरत्काल का सुन्दर वर्णन किया है। तदनन्तर मान्धाता का दिग्विजय के लिए निकल पड़ना, रावण से युद्ध करना, मान्धाता और रावण के द्वन्द्व-युद्ध के समय शिवजी का प्रत्यक्ष होकर मान्धाता को विजयी घोषित करना, मान्धाता का हिमालय चढ़कर मंदर पर्वत पर विजय-स्तंभ स्थापित करना आदि वर्णित हुए हैं। तृतीय सर्ग में चित्र दर्शन और गुण श्रवण से मान्धाता और कुंतल देश की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजकुमारी विमलांगी में प्रेम उत्पन्न होना, पूर्वराग, विवाह और नवोढ़ा-संगम का विशद वर्णन है। चतुर्थ सर्ग में केवल वर्णन ही वर्णन है। शृंगार रसपूर्ण इस सर्ग में वसंत ऋतु, वन-विहार, पुष्प-चयन, जलक्रीड़ाएँ, सूर्योदय तथा सूर्यास्त, अन्धकार तथा चन्द्रोदय, शृंगारकेलि, मधुपान आदि शृंगार प्रधान विषयों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

पंचम सर्ग में महर्षियों द्वारा आध्यात्मिक विषयों की चर्चा करायी गयी है। इस सर्ग में कर्म, उपास्य ब्रह्म, वेद-वेदांत-पुराण, उपासक, भगवद्-विग्रह, प्रपत्ति, भक्तियोग, त्याज्य संसार आदि के स्वरूप-निरूपण तथा परस्पर विरोधी श्रुति वाक्यों में समन्वय के बाद अन्त में महर्षियों के राजा को अष्टाक्षरी का उपदेश देने का वर्णन है।

अन्तिम सर्ग में ऋतु वर्णन के बाद मान्धाता के तप का वर्णन, तपोभंग करने के लिए इन्द्र के निष्फल प्रयत्न, अन्त में मान्धाता के श्रीमन्नारायण की स्तुति करना, मान्धाता पर भगवान के अनुग्रह आदि का वर्णन है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि छः सर्गों के इस काव्य में कथावस्तु की अपेक्षा वर्णनों का ही महत्व है। यह उस युग के प्रबन्धकाव्यों की सर्वसाधारण विशेषता है। इस काव्य का गौरव वर्णनों के चमत्कार पर ही निर्भर है। इस काव्य में 45 विषयों का समग्र तथा सरस वर्णन किया गया है। काव्य के तृतीय और चतुर्थ सर्ग में शृंगार का, अंतिम दो सर्गों में वैराग्य भाव का वर्णन अनुपम कौशल से किया गया है। एक ही काव्य में शृंगार और वैराग्य का वर्णन करनेवालों में संकुसाला नृसिंह अकेले हैं। रक्ति और विरक्ति को इस काव्य में समान रूप से प्रधानता दी गयी है। अपनी इस प्रतिभा से परिचित इस कवि की यह गर्वोक्ति सर्वथा सार्थक है।

> यति विटुडु गाकपोवुटेट्लस्मदीय
> काव्य शृंगारवर्णनाकर्णनमुन
> विटुडु गति गाक पोरादु वेस मदीय
> काव्य वैराग्य वर्णनमुन ।

अर्थात् मेरे काव्य के शृंगार वर्णनों को सुनने के बाद यति का शृंगारी न बन जाना कैसे संभव है? वैराग्य भाव से पूर्ण व्यक्ति भी शृंगारी हो जायेगा। मेरे काव्य के वैराग्य वर्णन से शृंगारी पुरुष का यति हो जाना भी अवश्यंभावी है।

सचमुच नृसिंह कवि के शृंगार तथा वैराग्य के वर्णन अत्यंत प्रभावशाली तथा मार्मिक हैं। कविकर्ण-रसायनकार का रचना-नैपुण्य उनके वर्णन चमत्कारों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में ही निहित है। उनके वर्णन सर्वथा मौलिक हैं। उनमें कलापक्ष तथा भावपक्ष का निखार, परिलक्षित अर्थ-गौरव और कल्पना चमत्कार के साथ अलंकारों का सुष्ठु प्रयोग हुआ है। तेलुगु प्रबन्धकाव्यों में नृसिंह कवि के वर्णन अद्वितीय माने जाते हैं। कुछ उदाहरणों से इस कथन की सत्यता पुष्ट हो जायेगी।

दिग्विजय के लिए शरत्काल समुचित समय माना गया है। प्रायः सभी कवियों ने शरत्काल का वर्णन किया है। मान्धाता के दिग्विजय के समय कवि ने शरत्काल का अद्वितीय वर्णन किया है। एक पद्य लीजिए—

कैरवबन्धुबिंबमुखप्रतिबिंबमु, तद्गतस्मितां
कूरमु शीतलातपमु, कुंडल सूचित मौक्तिकावलुल
तारलुगा, शरत्समय लक्ष्मि गनुंगोनु रत्नदर्पणा
कारमुनन् नभस्थलमु गन्नुल पंडुव जेसे रात्रुलन्।

अर्थात् आकाश ही रत्नमय दर्पण है। उस दर्पण में शरत् लक्ष्मी अपने सुन्दर मुखड़े को देख रही है। उसके मुख का प्रतिबिम्ब ही चन्द्र है। अपने प्रतिबिंब को देख उसके अधरों पर जो मुस्कुराहट छा गई, वही चाँदनी है। उसके कर्णफूलों में जड़े मोती ही नक्षत्र हैं। इस प्रकार शरत् लक्ष्मी के मुख सौंदर्य को प्रतिबिंबित करनेवाले रत्नदर्पण के समान आकाश रात्रि के समय मनोहर दीख रहा है।

नायिका के विरह वर्णन के अवसर पर शुक और पिक की चर्चा अत्यंत मौलिक ढंग से की गयी है।

करमर्थिनेन पेनुपं
बेरिगिन शुक मोटलेक प्रेलुचु हृदयमं
बेरिंयिप दोडगे निंकं
बरभ्रुतमुल जेप्पनेल पंकज-वदना।

अर्थात् मेरे हाथों लाड़ से पला तोता ही बिना संकोच के बोलते हुए, हृदय को बेध रहा हो तो परभ्रुतों (कोयलों) के बारे में कहना ही क्या? इस पद्य में परभ्रुत में शब्द-श्लेष का प्रयोग अत्यंत सरस बन पड़ा है।

मन्मथ की निन्दा में भी अनुपम चातुर्य दिखाया गया है—

दलप दोषाकरुंडटे तगिन प्रापु
सहचरुडु जातिमालिन चैत्रुडट्टे
येडुनु नीवुप्पु नी योडलेरुग वाक
मदन, मरियेमि चेप्प नी मधुप गुणमु।

अर्थात् दोषाकर चन्द्र मन्मथ का साथी है। उसका सहचर जाति-भ्रष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चैत्रमास है। यहाँ जाति का अर्थ बेला भी लिया जा सकता है। क्योंकि चैत्रमास में केवल बेला ही नहीं फूलता। मन्मथ को तो कभी अपनी देह का होश ही नहीं रहता। उसका गुण तो मधुप पियक्कड़ का-सा है। मधुप का दूसरा अर्थ है—धनुष की वह डोरी जो भौरों से बनी है। इस पद्य में दोषाकर, जाति भ्रष्ट, मधुप आदि शब्दों का प्रयोग सार्थक हुआ है।

तारों के उदय का कवि ने बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है।

शर्वरी चन्द्र परिणय समुचितांकु
रार्पण क्रिय गलय वियद्विभाग
पालिकल दोचु क्रोत्त जाजालमोलक
लनग दारक लोंडोंड यंकुरिंचे।

अर्थात् रात्रि और चन्द्र के विवाह के समय आकाश वीथि रूपी क्षेत्र में नव धान्यों के डालने से उदगत अंकुरों के समान तारे दिखाई पड़ रहे हैं।

कवि ने अन्धकार का वर्णन भी अनूठे ढंग से किया है।

कनुगोन र्निगि दारलनि कल्वल-रेडनि चन्द्रिकामृतं
वनियोक सृष्टि जूपुटकुनैंसमयंबनु नैंद्रजालिकुं-
डनु पमितानु भावमुननंदर चूड्कुलु गप्पु पोंटे नी
चिन यल नेंम्मि कुंचिय रुचि दर्लपिंचे नवांधकांतमुल।

अर्थात् कालपुरुष रूपी जादूगर ने आकाश में नक्षत्र, चन्द्र और चाँदिनी की सृष्टि की और सब की दृष्टि से उन्हें ओझल करा देने के लिए मोर-पंखों से बनी तूलिका उनपर फेर दी। तभी व्याप्त होनेवाला नया अन्धकार उस कूंची के समान था।

केवल शृंगार वर्णन ही नहीं, आध्यात्मिक विषयों के वर्णनों में भी कवि ने अपनी मौलिकता तथा पांडित्य का परिचय दिया है।

भगवद्विग्रह के स्वरूप के निरूपण का एक पद्य लीजिए।

स्वेतर समस्त वैराग्य हेतुभूत
मखिलयोगि मनः प्रथमावलंब
माश्रितार्थंबु, लक्ष्मी समाश्रितंबु
विभुनकैच्छिकमै कल्गु विग्रहंबु

अर्थात् अपने से अलग समस्त वस्तुओं के प्रति वैराग्य भावना का हेतु, समस्त योगियों के मन का प्रथम अवलम्ब, आश्रितों की इच्छाओं की पूर्ति का साधक, लक्ष्मी समाश्रित प्रभु की—विष्णु भगवान की—साकारता ऐच्छिक है।

इस प्रकार संस्कृत एवं आन्ध्र भाषाओं के प्रकांड पंडित और सहृदय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नृसिह कवि की रचना शब्द और अर्थालंकारों से संपन्न हो, रसिक जन हृदयों को मुग्ध करनेवाला है। 'कविकर्ण रसायन' को प्रामाणिक मानकर आन्ध्र के रीति ग्रन्थकार आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में नृसिह कवि की रचनाओं को उदाहरणों के रूप में ग्रहण किया है। वर्णन-चातुर्य, कल्पना-चमत्कार, अलंकारों के औचित्य-पूर्ण प्रयोग आदि गुणों से संपन्न यह काव्य सचमुच कवि-कर्ण के लिए रसायन है। नृसिह कवि के इस पद्य में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि

कविताविचक्षणतगल
कविकंठविभूषणमुग गैकोनवलयुन्
गविवर नृसिहविरचित
कविकर्णरसायनमनु काव्यमु दीनिन्।

अर्थात् कविवर नृसिह रचित कविकर्णरसायन नामक इस काव्य को काव्य-रसिक सहृदय जनों का कंठाभरण मानना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

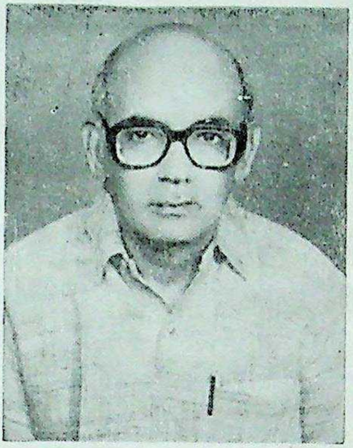

डा. भीमसेन निर्मल

जन्म : 30-11-1930 को आंध्र प्रान्त के मेदक में।

मातृभाषा : तेलुगु

शिक्षा : एम. ए. (हिन्दी एवं तेलुगु) ; पीएच. डी. (हिन्दी)।

कार्य क्षेत्र : अध्यापन और लेखन। भूततूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय।

प्रकाशित रचनाएँ : मौलिक एवं अनूदित लगभग चालीस ग्रंथ। रंगनाथ रामायण (अनुवाद), विश्वंभरा (अनुवाद), तेलुगु भाषी हिन्दी नाटककार पं. पुरुषोत्तम कवि (शोध प्रबंध), मानव में मानव (अनुवाद), घाट के देवता (अनुवाद), मेरे लिए मृत्यु नहीं आदि बहुचर्चित।

पुरस्कार एवं सम्मान : उत्तर प्रदेश शासन, आंध्र प्रदेश शासन, भारत सरकार, हिन्दी प्रतिष्ठान आदि कई सरकारों तथा संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत एवं सम्मानित। आंध्र प्रदेश सरकार ने उत्तम शिक्षक सम्मान 1991 में प्रदान किया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.